Love and Beauty in the Romantic Poetry of Hindi and Malayalam

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम तथा सौन्दर्य

Thesis submitted to
The University of Cochin
for the Degree of Doctor of Philosophy

by

P. M. JOSEPH
M. A. (Hindi), M. A. (Mal.) M. A. (Skt.), M. A. (Eng.)

under the supervision of
Dr. P. V. VIJAYAN
Reader, Dept. of Hindi, University of Cochin.

Prof. and Head of the Dept.
Dr. N. E. VISWANATHA IYER

DEPARTMENT OF HINDI
UNIVERSITY OF COCHIN
Cochin - 682 022

1980

CERTIFICATE

This is to certify that this THESIS is a bonafide record of work carried out by P.M. JOSEPH under my supervision for Ph.D. and no part of this has hitherto been submitted for a degree in any University.

Department of Hindi
University of Cochin
Cochin - 6820 22

Dr. P.V. VIJAYAN, M.A.,Ph.D.
Supervisor

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ-संख्या

प्रस्तावना

पहला अध्याय 1 - 43

परिचम का रोमान्टिक काव्य : स्वच्छन्दतावादी काव्य

स्वरूप और विकास

परिभाषायें - परंपरावादी काव्य और स्वच्छन्दतावादी काव्य में भेद - यूरोप में स्वच्छन्दतावाद का आरंभ - जर्मन स्वच्छन्दतावाद - फ्रान्सीसी स्वच्छन्दतावाद - अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावाद - वेडस्वर्थ - लिरिकल बैलेड्स की भूमिका - भूमिका का संक्षिप्त इतिहास - कॉलरिज - बयोग्राफिया लिटरेरिया - शैली - कीट्स - भारतीय काव्य में स्वच्छन्दतावाद का आरम्भ - हिन्दी और मलयालम काव्य में स्वच्छन्दतावाद का आरम्भ ।

दूसरा अध्याय 44 - 110

कविता में युगान्तर

साहित्यिक पृष्ठभूमि - भारतेन्दुयुग - मलयालममें वेण्मणि युग - हिन्दी में द्विवेदी युग - मलयालम में केरलवर्मा युग - कविता में युगान्तर - स्वच्छन्दतावादी काव्य धारा - मलयालम कविता में युगान्तर -"झरना"और

पृष्ठ-संख्या

"वीणपूवु" - जयशंकर प्रसाद - सुमित्रानन्दन पंत - सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" - महादेवी वर्मा - कुमारन आशान - वल्लत्तोल नारायण मेनोन - उल्लूर एस॰ परमेश्वर अय्यर - चंगपुषा कृष्ण पिल्ले - जी॰शंकर कुरुप ।

तीसरा अध्याय 111 - 155

प्रेम और सौन्दर्य का स्वरूप

प्रेम का स्वरूप - व्युत्पत्ति और शब्दार्थ - परिभाषायें - प्रेम का स्रोत - प्रेम के गुण व महत्व - प्रेम के विविध रूप - स्त्री-पुरुष प्रेम - प्रकृति-प्रेम - देश-प्रेम - विश्व-प्रेम - ईश्वरीय-प्रेम - सौन्दर्य - व्युत्पत्ति और शब्दार्थ - परिभाषायें - वैज्ञानिक या वस्तुपरक दृष्टिकोण - पाश्चात्य धारणा - भारतीय धारणा - आत्मपरम दृष्टिकोण - पाश्चात्य धारणा - भारतीय धारणा - समन्वय की आवश्यकता - सौन्दर्य का स्वरूप - मनोवैज्ञानिक आधार - साहित्यिक आधार- सौन्दर्य की सामान्य विशेषताएं - प्रेम और सौन्दर्य का पारस्परिक संबन्ध - सौन्दर्य के विविध रूप - मानवीय-सौन्दर्य - नारी-सौन्दर्य - पुरुष-सौन्दर्य - प्राकृतिक-सौन्दर्य - प्राकृतिक सौन्दर्य की विशेषताएं - भाव-सौन्दर्य- कर्म-सौन्दर्य ।

पृष्ठ-संख्या

चौथा अध्याय 156 - 235

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम -

स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम का स्वरूप - स्त्री-पुरुष प्रेम - संयोग-पक्ष - वियोग-पक्ष - प्रकृति-प्रेम - निष्कर्ष - देश-प्रेम - निष्कर्ष - विश्व-प्रेम - निष्कर्ष - ईश्वरीय-प्रेम - निष्कर्ष ।

पाँचवाँ अध्याय 236 - 316

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में सौन्दर्य

स्वच्छन्दतावादी कवियों का सौन्दर्य दर्शन - सौन्दर्य के विविध रूप - मानवीय सौन्दर्य - नारी-सौन्दर्य - रूप - सज्जा - वस्त्र - अलंकार - अनुलेपन - अनुभाव या शारीरिक चेष्टायें - निष्कर्ष - पुरुष-सौन्दर्य-निष्कर्ष - प्राकृतिक सौन्दर्य - स्वच्छन्दतावादी कवि और प्रकृति - आलम्बन रूप में - गति-विधि - वर्ण-भावना नाद - व्यंजना - गन्ध-संवेदना - स्पर्श संवेदना - उद्दीपन रूप में - अलंकार और प्रतीक विधान के रूप में - मानवीकरण के रूप में - उपदेश और नीति के माध्यम के रूप में - परम तत्व के आभास के रूप में - निष्कर्ष - भाव-सौन्दर्य - निष्कर्ष - कर्म-सौन्दर्य - निष्कर्ष ।

छठा अध्याय 317 - 323

उपसंहार

सहायक ग्रंथ-सूचि

प्रस्तावना

मेरे शोध का विषय है "हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम तथा सौन्दर्य" । हिन्दी और मलयालम भारत की दो प्रमुख भाषायें हैं और दोनों का साहित्य भी अत्यंत समृद्ध है । काव्य - संपदा की दृष्टि से दोनों महत्वपूर्ण भाषायें हैं । भारत की भावात्मक एकता को सुदृढ करने केलिये भारतीय भाषाओं के साहित्यों का तुलनात्मक अध्ययन वांछनीय है । हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य के प्रेम और सौन्दर्य का तुलनात्मक अध्ययन अभी तक नहीं हुआ है । अतएव मेरा शोधकार्य प्रस्तुत अभाव की पूर्ति का प्रयत्न है ।

आज से ग्यारह वर्ष पूर्व जब मैं एम॰ ए॰ का विद्यार्थी था, तब से मेरे मन में हिन्दी के किसी कवि या काव्य-कृति पर शोध करने का विचार जागृत हुआ था । शोध - प्रेरणा का प्रथम स्फुरण जगाने का श्रेय मेरे आदरणीय गुरु तथा निर्देशक डॉ॰ विक्रमन जी को ही प्राप्त है । आधुनिक हिन्दी कविता का अध्यापन वे इतनी निपुणता के साथ करते थे कि कविता के प्रति मेरे हृदय में विशेष अनुराग जम गया । कविता की अन्तरात्मा में पैठ कर रसास्वादन कराने की उनकी अपार क्षमता ने काव्यास्वादन में मेरी रुचि बढा दी । कविता के सौन्दर्य-दर्शन में मैं समर्थ हुआ ।

वहाँ से मैं हिन्दी कविता के अध्ययन में लग गया । आगे चलकर जब अनुसंधान का अवसर प्राप्त हुआ तब मैं ने काव्य-विधा पर, विशेषतः स्वच्छन्दतावादी काव्य पर शोध करने का निश्चय किया ।

वेर्डस्वर्थ, कॉलरिज, शेली, कीट्स आदि अंग्रेज़ी के प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियों की रचनाओं से मैं पहले ही परिचित था । उन कवियों के प्रति मेरे मन में आकर्षण भी प्रबल था । मैं कभी-कभी सोचा करता था कि इन के समकक्ष कवि किसी दूसरी भाषा में मिलना मुश्किल है । किन्तु जब हिन्दी में प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी एवं मलयालम में आशान, वल्लत्तोल, उल्लूर, चंगंपुषा आदि कवियों की कृतियों से परिचित हुआ तो मेरे हृदय में गर्व की भावना जम गयी कि भारत में भी महान कवि कम नहीं हैं ।

अपने अध्ययन-अध्यापन की लम्बी अवधि में स्वच्छन्दतावादी कविताओं से ही मेरा अधिक परिचय हुआ । उस की विशेषताओं की ओर मैं आकृष्ट हुआ । स्वच्छन्दतावाद की ये विशेषतायें आचार्य नंद दुलारे वाजपेयी के शब्दों में इस प्रकार हैं - "स्वच्छन्दतावाद नव युग की समग्र प्रेरणाओं का प्रतिनिधित्व करने वाला काव्य स्वरूप है जिस में परंपरा-गत काव्य-धारा और काव्योपकरणों के विरुद्ध विद्रोही उपकरणों की प्रधानता है । नयी भावदृष्टि और नये अलंकरण हैं, बहिर्मुखता के स्थान पर अन्तर्मुखी प्रयाण है, प्रकृति का निसर्गजात आकर्षण है, शब्दावली में नवीन संगीत है"[1] ।

इन्हीं विशेषताओं के कारण मैंने स्वच्छन्दतावादी काव्य को ही अपने शोध का विषय बनाया । हिन्दी की भाँति अपनी मातृभाषा मलयालम के विशद अध्ययन का अवसर भी मुझे मिला था । मलयालम के स्वच्छन्दतावादी

---

1. आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी - कवि सुमित्रानंदन पंत - पृ.27

कवियों के व्यक्तित्व और कृतित्व के अध्ययन के बाद मेरे मन में यह विचार हुआ कि मलयालम का स्वच्छन्दतावादी काव्य हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य से तुलनीय है । मुझे इस दिशा में अध्ययन और चिंतन करना चाहिए । स्वच्छन्दतावादी काव्य का प्रमुख प्रतिपाद्य प्रेम और सौन्दर्य हैं । प्रेम और सौन्दर्य का चित्ताकर्षक चित्रण ही स्वच्छन्दतावादी कविता का मुख्य आकर्षण है । प्रेम और सौन्दर्य की भावनायें मानव की मूल वृत्तियां हैं, जो उसके अस्तित्व को सजीव बनाती हैं तथा उसकी सारे क्रिया-कलापों का नियंत्रण करती रहती हैं । प्रेम और सौन्दर्य की भावनायें मानव में ही नहीं अपितु मानवेतर प्राणियों, वन स्पतियों में भी आश्चर्यजनक रूप में विद्यमान हैं । अत: प्रेम और सौन्दर्य की भावनाओं का चराचर वस्तुओं के जीवन में शाश्वत महत्व हैं । काव्य और कलायें इन भावनाओं के निरूपण के द्वारा मानव को आनन्दानुभूति की प्राप्ति कराने में सहायक होती हैं । अत: मैं ने अपने निर्देशक की सहमति के साथ अनुसंधान का उपर्युक्त विषय चुना ।

विषय का महत्व

मानव मन की यह विशेषता है कि वह जिस भाव का अनुभव करता है उसे अभिव्यक्त करना भी चाहता है । ऐसा करने से उसे एक प्रकार की मानसिक तृप्ति का अनुभव होता है । प्रेम और सौन्दर्य की भावनाओं की अभिव्यक्ति से तो उसे सर्वाधिक आनन्द की अनुभूति होती है । संसार के सभी विख्यात कवियों के काव्य के दो ही मूलभूत विषय रहे हैं - प्रेम और सौन्दर्य । ये उनके काव्य के प्रेरणास्रोत रहे हैं । पाश्चात्य तथा पौरस्त्य देशों के सभी प्रमुख कवियों के काव्य के मूल तत्व भी प्रेम और सौन्दर्य ही हैं । इन दोनों तत्वों के अभाव में काव्य खोखला बन जाता है । अतएव जिस कवि के काव्य में इन तत्वों का उचित समावेश है, वे ही कवि जन-मन में स्थान प्राप्त कर सकते हैं, वे ही काव्य महान साहित्यिक उपलब्धि के रूप में शाश्वत प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकते हैं । वस्तुत: प्रेम और सौन्दर्य का उदात्त स्वरूप ही काव्य को भव्य बनाता है ।

---

1. Will Durant - 'Mansions of Philosophy', Chap. 7 and 8.

विषय का नामकरण

मेरे शोध का विषय है "हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम तथा सौन्दर्य"। यह विषय तो इतना विशाल है कि एक लघु प्रबन्ध में इसे सीमित रखना टेढी खीर है। अतः ऐसा कोई दावा नहीं है कि यह विषय का सम्पूर्ण अध्ययन है। विस्तार भय से मैं ने अपने अध्ययन में हिन्दी और मलयालम के प्रतिनिधि स्वच्छन्दतावादी कवियों को ही स्थान दिया है। हिन्दी में प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी एवं मलयालम में आशान, वल्लत्तोल, उल्लूर, चंगंपुषा और जी० शंकरकुरुप को ही मैं ने प्रमुखता दी है। उदाहरण केलिए कुछ अन्य स्वच्छन्दतावादी कवियों के उद्धरण भी मैं ने प्रस्तुत किये हैं। उदाहरण भी यथा संभव संक्षिप्त करने का प्रयास किया है।

स्वच्छन्दतावादी काव्य तक ही मेरे शोध की व्याप्ति है। स्वच्छन्दतावाद व रोमान्टिसिज़्म पश्चिमी साहित्य की ही उपलब्धि है। फ्रान्सीसी तथा जर्मन स्वच्छन्दतावादी कवियों की अपेक्षा अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावादी कवियों का प्रभाव ही भारतीय साहित्य पर परिलक्षित होता है। अतः मैं ने अंग्रेज़ी के सब से प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियों - वर्डस्वर्थ, कॉलरिज, शेली और कीट्स - का भी परिचय दिया है।

प्रबन्ध की संक्षिप्त रूप-रेखा

प्रस्तुत प्रबन्ध छः अध्यायों में विभाजित है - [1] रोमान्टिक काव्य : स्वच्छन्दतावादी काव्य - स्वरूप और विकास [2] कविता में युगान्तर [3] प्रेम और सौन्दर्य का स्वरूप [4] हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम [5] हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में सौन्दर्य [6] उपसंहार।

पहले अध्याय में रोमान्टिक काव्य के स्वरूप और विकास पर प्रकाश डाला गया है। रोमान्टिसिज़्म या स्वच्छन्दतावाद का स्वरूप स्पष्ट करने के उद्देश्य से प्रमुख विद्वानों की परिभाषायें भी प्रस्तुत की गयी हैं। स्वच्छन्दतावादी काव्य की विशेषताओं को स्पष्ट करते हुए परंपरावादी [क्लासिक] काव्य से उस के भेद भी दिखाया गया है। स्वच्छन्दतावाद के उद्भव और विकास पर दृष्टि डालते हुए जर्मन, फ्रान्सीसी तथा अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावादी कवियों में से वेड्स्वर्थ, कालरिज, शेली, कीट्स प्रभृति कवियों

की चर्चा भी प्रस्तुत की गयी है । वेड्स्वर्थ की "लिरिकल बेलेड्स की भूमिका" और कॉलरिज के "बयोग्रफिया लिटरेरिया" का दिग्दर्शन भी कराया गया है । भारतीय काव्य में स्वच्छन्दतावादी काव्य के आरम्भ पर सामान्य रूप से विचार करते हुए हिन्दी और मलयालम काव्य में स्वच्छन्दतावाद के आरम्भ पर विशेष चर्चा भी प्रस्तुत की गयी है ।

दूसरे अध्याय में स्वच्छन्दतावादी काव्यारंभ के पूर्व हिन्दी और मलयालम काव्य की साहित्यिक पृष्ठभूमि पर प्रकाश डाला गया है । हिन्दी में भारतेन्दु युग में काव्य में जो मुख्य प्रवृत्तियाँ दृष्टिगोचर हुई उस पर विचार किया गया है । मलयालम में वेण्मणि युग के काव्य की विशेषताओं की चर्चा की गयी है । स्वच्छन्दतावाद के आरंभ के पूर्व हिन्दी में द्विवेदी युग आता है । अतः द्विवेदी युग के काव्य की विशेषताओं पर भी प्रकाश डाला गया है । इसी प्रकार मलयालम में केरल वर्मा युग के पश्चात् ही स्वच्छन्दतावादी युग का आरंभ होता है । अतएव केरलवर्मा युग की काव्य प्रवृत्तियों पर भी प्रकाश डाला गया है । हिन्दी और मलयालम कविता में स्वच्छन्दतावाद के रूप में जो युगान्तर उपस्थित हुआ उस के विषय में संक्षेप में विचार किया गया है । स्वच्छन्दतावादी काव्य धारा का परिचय देते हुए हिन्दी और मलयालम के प्रारंभिक स्वच्छन्दतावादी काव्य कृतियों - "झरना" और "वीणपूवु" - की भी चर्चा की गयी है ।

तीसरे अध्याय में प्रेम और सौन्दर्य के स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है । प्रेम की व्युत्पत्ति और शब्दार्थ प्रस्तुत करने के साथ-साथ प्रेम की प्रमुख परिभाषाओं का भी दिग्दर्शन कराया गया है । प्रेम के स्रोत, गुण व महत्व पर प्रकाश डालने के उपरान्त प्रेम के विविध रूपों की भी चर्चा की गयी है । प्रेम के अन्तर्गत स्त्री-पुरुष प्रेम, प्रकृति-प्रेम, देश-प्रेम, विश्व-प्रेम और ईश्वरीय-प्रेम के स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है । सौन्दर्य की व्युत्पत्ति और शब्दार्थ प्रस्तुत करते हुए उसकी प्रमुख परिभाषायें भी दी गयी हैं ।

सौन्दर्य-संबन्धी पाश्चात्य और भारतीय धारणाओं पर भी प्रकाश डाला गया है । दोनों धारणाओं के समन्वय की आवश्यकता पर भी विचार किया गया है । सौन्दर्य का स्वरूप स्पष्ट करते हुए उसके मनोवैज्ञानिक और साहित्यिक आधारों पर विचार किया गया है । सौन्दर्य की सामान्य विशेषताओं की चर्चा के उपरान्त प्रेम और सौन्दर्य का पारस्परिक संबन्ध की ओर दृष्टिपात किया गया है । सौन्दर्य के अन्तर्गत रूप-सौन्दर्य भाव-सौन्दर्य और कर्म-सौन्दर्य की चर्चा की गयी है । रूप-सौन्दर्य को मानवीय सौन्दर्य तथा प्राकृतिक सौन्दर्य नामक दो रूपों में विभाजित किया गया है । मानवीय सौन्दर्य के अन्तर्गत नारी-सौन्दर्य एवं पुरुष-सौन्दर्य पर प्रकाश डाला गया है । प्राकृतिक सौन्दर्य की विशेषताओं की ओर भी संकेत किया गया है । प्रेम और सौन्दर्य के इस स्वरूप-विवेचन को प्रस्तुत प्रबन्ध का मेरुदण्ड कहा जा सकता है जिसके आधार पर अगले दो अध्यायों की विवेचना प्रस्तुत की गयी है ।

चौथे अध्याय में हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है । स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम का जो स्वरूप मिलता है उस पर प्रकाश डाला गया है । प्रेम के विविध रूपों में स्त्री-पुरुष प्रेम ही सब से प्रमुख है । अतः प्रेम के विविध रूपों के तुलनात्मक अध्ययन में सब से पहले इस का विवेचन किया गया है । स्त्री-पुरुष प्रेम के संयोग और वियोग नामक दोनों पक्षों पर प्रकाश डाला गया है । इस के पश्चात् प्रकृति-प्रेम का स्वरूप दिखाया गया है । आगे देश-प्रेम और विश्व-प्रेम पर विचार किया गया है । इस के पश्चात् ईश्वरीय-प्रेम पर प्रकाश डाला गया है । सभी तुलनात्मक अध्ययनों के अंत में एक निष्कर्ष भी दिया गया है ।

पाँचवें अध्याय में हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में सौन्दर्य का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है । स्वच्छन्दतावादी कवियों के सौन्दर्य दर्शन की चर्चा करने के पश्चात् सौन्दर्य के विविध रूपों पर

विचार किया गया है। सौन्दर्य के प्रमुख रूपों में मानवीय सौन्दर्य - विवेचन को प्रमुखता दी गयी है। मानवीय सौन्दर्य के अन्तर्गत पहले नारी सौन्दर्य की चर्चा की गयी है। रूप, सज्जा, वस्त्र, अलंकार, अनुलेपन, अनुभाव या शारीरिक चेष्टाओं के रूप में नारी का जो चित्ताकर्षक सौन्दर्य-वर्णन मिलता है उस पर प्रकाश डाला गया है। नारी सौन्दर्य - विवेचन के पश्चात् पुरुष-सौन्दर्य का विवेचन किया गया है। प्राकृतिक सौन्दर्य-विवेचन में स्वच्छन्दतावादी कवियों की प्रकृति-संबन्धी दृष्टिकोण पर विचार किया गया है। आलम्बन, उद्दीपन, अलंकार और प्रतीक विधान, मानवीकरण, उपदेश और नीति, परमतत्व के आभास आदि विभिन्न रूपों में प्रकृति का जो सौन्दर्यांकन मिलता है, उसका विवेचन किया गया है। आलम्बन रूप के अन्तर्गत गति-विधि, वर्ण-भावना नाद-व्यंजना, गन्ध-संवेदना और स्पर्श-संवेदना के रूपों में मिलने वाले प्रकृति के सौन्दर्य-चित्रण पर भी प्रकाश डाला गया है। इस के पश्चात् भाव-सौन्दर्य एवं कर्म-सौन्दर्य पर भी विचार किया गया है। सभी सौन्दर्य विवेचनों के अन्त में एक निष्कर्ष भी दिया गया है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का कार्यान्वियन कोचिन विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के रीडर आदरणीय डॉ॰ पी॰वी॰ विजयन के निर्देशन में सम्पन्न हुआ है। उनकी प्रेरणा और समयानुकूल निर्देश मुझे विशेष रूप से सहायक रहा है।

मलयालम साहित्य जगत् के प्रमुख साहित्यकार आदरणीय प्रो॰ एम॰के॰ सानु, डॉ॰ एम॰ लीलावती प्रभृति विद्वानों से मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ जिन्होंने अपने सद्परामर्शों से मुझे अनुगृहीत किया।

मेरे प्रिय अध्यापक डॉ॰ वी॰ गोविन्द शेणाय, और डॉ॰ सरलादेवी से भी मैं विशेष कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने शोध - कार्य केलिए मुझे प्रेरित किया था।

इस शोध प्रबन्ध को तैयार करने में मेरे आदरणीय गुरु तथा निर्देशक डॉ॰ पी॰वी॰ विजयन जी से मुझे जो प्रेरणा और सहायता प्राप्त हुई है, तदर्थ मैं उनसे हृदय से आभार प्रकट करता हूँ ।

कोचीन विश्वविद्यालय के विभागाध्यक्ष एवं आचार्य डॉ॰ एन॰ई॰ विश्वनाथ अय्यर का मैं विशेष आभारी हूँ जिनसे मुझे यथा संभव पर्याप्त प्रोत्साहन प्राप्त हुआ है ।

कोचीन-22,
23 01 1980

पी॰एम॰ जोसफ

पहला अध्याय·
oooooooooooo

पश्चिम का रोमान्टिक काव्य {स्वच्छन्दतावादी काव्य} : स्वरूप और विकास

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य पर पाश्चात्य रोमान्टिक काव्य का प्रभाव परिलक्षित होता है । अतएव हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य पर विचार करने के पूर्व पाश्चात्य रोमान्टिक काव्य का परिचय प्राप्त करना आवश्यक है । इसलिए प्रस्तुत अध्याय में हम पाश्चात्य रोमान्टिक काव्य का संक्षिप्त अध्ययन प्रस्तुत करेंगे ।

रोमान्टिक काव्य के स्वरूप पर विचार करने के पहले "रोमान्स" शब्द का विवेचन करना उचित होगा । क्योंकि उस शब्द की विशेषताएं रोमान्टिक काव्य को समझने में सहायक होंगी । सामान्य अथवा साधारण का विलोम है रोमान्टिक । स्टोडर के अनुसार इस दृष्टि से इसका तात्पर्य ऐसी इच्छा के रूपान्तर से है, जो सामान्य से, साधारण दृष्टि से और स्थिरता से भिन्न हो तथा इसकी स्थिति ऐसे क्षेत्र में हो जिसमें निराधार इच्छाओं के लिए शक्तिशाली प्रयत्न होता हो[1] । अत: जिस साहित्य में उपर्युक्त विचारधारा विद्यमान है अथवा उपर्युक्त विचार-धारा को सामने रखकर जिस साहित्य का निर्माण हुआ है उसे रोमान्टिसिज़्म के नाम से पुकार सकते हैं । हेरफार्ड के अनुसार यह काल्पनिक अनुभूति का एक साधारण विकास है[2] । रोमान्टिक कवि अपनी वैयक्तिक काल्पनिक

---

1. 'In the sense it means transference of desire away from common place, stay at home ordinary contendedness into region of rash attempt and vague longing'.
   - Stodder
2. 'An extraordinary development of imaginative sensibility'.
   - Herford

अनुभूति को माध्यम बनाकर संसार के उन अप्राप्त साधनों की अभिव्यक्ति करता है, जिसके सुलभ होने से मानव-जीवन श्रेष्ठतर बन सकता है। जिज्ञासा और कामना का मानव-जीवन में बड़ा महत्व है। ये दोनों ऐसे तत्व हैं जो उसके जीवन को अधिक गतिशील रखते हैं। मानव-जीवन को प्रेरणा प्रदान करना तथा उसे गतिशील रखना ही रोमान्टिक साहित्य का मूल तत्व है।

स्टोडर ने स्वीकार किया है कि "रोमांस दूर से लाये हुए एक शब्द का परिवर्तित स्वरूप है जो विदेशी होता है। यह उस जीवन की ओर संकेत करता है जो वर्तमान से अच्छा हो, अधिक पूर्ण हो तथा उसकी आशा वर्तमान जीवन केलिए न की जाती हो और जिसके संबन्ध में ज्ञान धुंधला हो, किन्तु वैसे जीवन का होना वर्तमान जीवन में कभी भी संभावित नहीं है[1]।

रोमान्स की वास्तविक अभिव्यक्ति तब होती है जब साहित्यकार तर्क को सामने रखकर चेतन अवस्था में अपनी कल्पना, स्वप्न तथा आन्तरिक प्रेरणाओं की अभिव्यक्ति करता है[2]।

रोमान्टिक शब्द का प्रादुर्भाव सत्रहवीं शताब्दी में माना जाता है। सत्रहवीं शताब्दी के मध्य में यह शब्द पहली बार अंग्रेजी साहित्य में प्रयुक्त हुआ। इस शब्द के उस समय का अर्थ भी वास्तविक

---

1. A Romance is something transferred brought from afar. A Romance is something hinting of a life better, completer, nobler than the present life, dimly known, detached from hoped for yet never expected in the present. K.K. SHARMA - AN INTRODUCTION TO THE POETRY OF ROMANTIC REVIVAL.

2. डॉ० त्रिभुवनसिंह - "आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्द धारा" पृ०33

वस्तुस्थिति के विपरीत अर्थात् काल्पनिक था । इस प्रकार यह शब्द काल्पनिक कथाओं की विशेषता व्यक्त करता था । साहित्य में इस शब्द का प्रयोग बुरे या भद्दे अर्थों में किया जाने लगा । यह शब्द काल्पनिक, परिहासजन्य, अप्राकृतिक तथा निरर्थक शब्दों के साथ जोड दिया गया । सन् 1694 ई॰ में इवलिन (EVELYN) ने अपनी डायरी में लिखा है कि 'There is also in the side of this hand a very romantic seat' यद्यपि रोमान्टिक का अर्थ भद्दापन केलिए स्वीकार किया जाता रहा, किन्तु उसके केन्द्र बिन्दु को आकर्षक मानने के कारण यह प्रवृत्ति कल्पना केलिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुई । अठारहवीं शताब्दी में जर्मनी, फ्रान्स और इंग्लैड में थोडे अन्य के साथ यह दृष्टिकोण दिखाई पडने लगा । रोमान्टिसिज़्म को हिन्दी में स्वच्छन्दतावाद कहा गया है । डॉ॰प्रेमशंकर का कथन इसे और स्पष्ट करता है । "हिन्दी में स्वच्छन्दतावाद शब्द का प्रयोग प्राय: रोमान्टिसिज़्म के अर्थ में होता है और छायावादीयुग के हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य को यूरोपीय रोमान्टिसिज़्म, विशेषतया अंग्रेज़ी रोमान्टिक कविता के समानान्तर रखकर देखा जाता है[1] ।

परिभाषायें

रोमान्टिसिज़्म अथवा स्वच्छन्दतावाद की विशेषताओं पर विचार करने से पूर्व प्रमुख पश्चिमी एवं पूर्वी विद्वानों द्वारा उसके लिए दी गयी परिभाषाओं पर दृष्टिपात करना उचित होगा । ये परिभाषायें रोमान्टिसिज़्म के विभिन्न स्वभाव एवं गुणों की ओर संकेत करती हैं ।

1• डॉ॰ प्रेमशंकर - हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य - पृ॰1

हेरफोर्ड ने इसे काल्पनिक अनुभूति का एक असाधारण विकास माना है[1]। कालरिज के मत में रोमांस के लेखकों ने कल्पना के प्रभुत्व के निर्णय पर मुलम्मा किया है। उनके अनुसार रोमान्टिक कवियों के साहित्यक व्यक्तित्वों का निर्माण काल्पनिक वर्णनों के आधार पर होता है[2]। कालरिज ने यह परिणाम निकाला है कि स्वच्छन्द प्रवृत्तियों के अन्दर एक प्रकार का मानसिक सन्तुलन होता है जिनके द्वारा वे साधारण अनुभव के धरातल से हवा में चढ़ना चाहते हैं[3]। इससे यह स्पष्ट है कि कालरिज के विचार रोमांटिक काव्य के संबन्ध में सहानुभूतिपूर्ण नहीं थे। वह काव्य को कोरा आत्मनिवेदन नहीं मानता। उसके अनुसार जब कविता बाह्य संसार से हटकर आत्मपरक होने लगती है तो वहीं से उसका पतन आरम्भ हो जाता है। लेकिन यह मत पूर्णतः सत्य नहीं है। स्वच्छन्दतावादी कवि अपनी वैयक्तिक काल्पनिक अनुभूति के माध्यम से संसार के उन अप्राप्य तथा गोप्य साधनों एवं तत्वों की अभिव्यक्ति करता है जिनके सुलभ होने से मानव जीवन के श्रेष्ठतम होने की सम्भावना रहती है[4]। जर्मन विद्वान फ्रिज़स्ट्रिच का मत है कि स्वच्छन्दतावाद मनुष्य की पूर्णता केलिए वह महत्वाकांक्षा है जो कभी प्राप्त न हो[5]। यह परिभाषा स्वच्छन्दतावादी काव्य की अनुपादेयता की ओर संकेत करती है। किन्तु साथ ही उन्होंने यह भी स्वीकार कर लिया है कि स्वच्छन्दतावाद एक साहित्यिक विचारधारा अवश्य है जिस में महत्वाकांक्षा व्यक्त होती है।

---

1. An extra-ordinary development of imaginative sensibility.
Herford

2. The author of the romance have yielded to the ascendancy of imagination over judgement.
Coleridge and his group

3. Romances have a kind of mental balance for mounting into the air from the ground of ordinary experience.
Coleridge.

4. डॉ॰ त्रिभुवन सिंह – आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्द धारा
पृ॰ 25

5. Romanticism is man's longing for a perfection, never to be attained. FRITGSTRICH

इससे यह विदित होता है कि "रोमान्टिक साहित्य उस मानव समाज केलिए उस मानव समाज द्वारा निर्मित साहित्य है जो अपनी वर्तमान परिस्थितियों से संतुष्ट नहीं है, उसकी बहुत कुछ ऐसी इच्छाएं हैं जो अपूर्ण है और जिनको पूर्ण करने की वह इच्छा रखता है अर्थात् यह एक जीवन्त तथा गतिमान और क्रियाशील एवं कर्मठ समाज का साहित्य है[1]।

पिछले एक सौ पचास वर्षों के अन्दर रोमान्टिसिज़्म की जो भिन्न भिन्न परिभाषाएं हुई हैं, उनमें प्रमुख को ई॰ बेनबाम ने "ए गाइड टु द रोमान्टिक मूवमेन्ट" नामक अपनी पुस्तक में संगृहीत किया है[2]। ये परिभाषायें "रोमान्टिसिज़्म" शब्द के असाधारण अर्थ व्याप्ति का परिचय देती हैं। ये सभी परिभाषायें रोमान्टिसिज़्म के किसी एक स्वभाव की ओर ही संकेत करती हैं न कि उसके पूर्ण अर्थ की। वस्तुतः इसकी एक पूर्ण तथा सुसम्मत परिभाषा प्रस्तुत करना टेढी खीर है। अतः ई॰बी॰ बर्गम ने एक लेख में रोमान्टिसिज़्म की परिभाषा प्रस्तुत करनेवालों को चेतावनी भी दी है[3]। ग्रियेर्सन ने भी ऐसा अभिप्राय प्रकट किया है[4]। एक वर्ष के पश्चात् लोजॉय ने भी यह अभिप्राय प्रकट किया है कि रोमान्टिक शब्द अनेक वस्तुओं को सूचित करते आया है किन्तु अपने आप में उसका कुछ भी अर्थ नहीं है[5]। लोजॉय के अभिप्राय को बार्ज़न ने और भी व्यक्त करने का

---

1. डॉ॰ त्रिभुवन सिंह - आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्द धारा पृ॰26

2. A movement to honour whatever classicism rejected. Classicism is the regularity of good sense - perfection in moderation, Romanticism is disorder in the imagination, the rage of incorrectness. A blind wave of literary egotism - BRUNETIERE.

Classic art portrays the finite, romantic art also suggests the infinite - HEINE

The illusion of beholding the infinite within the stream of nature itself, instead of a part from that stream. MORE

Romanticism is disease, Classicism is health - GOETHE

A desire to find the infinite within the finite, to effect a synthesis of the real and the unreal. The expression in art of what in the theology would be called pantheistic enthusiasm.
- FAIRCHILD

The return to nature - ROUSSEAU

In general a thing is romantic when, as Aristotle would say, it is wonderful rather than probable, in other words, when it violates the normal sequence of cause and effect in favour ofadventure. The whole movement is filled with the praise of ignorance, and of those who still enjoy its inappreciable advantage, the savage, the peasant, and above all the child.
- BABBIT

The opposite, not of classicism, but of Realism - a withdrawal from outer experience to concentrate upon inner.
- ABERCROMBIE

Liberatism in literature. Mingling the grotesque with the tragic or subline (forbidden by classicism), the complege truth of life. - VICTOR HUGO

The re-awakenning of the life and thought of the Middle ages. - HEINE

The cult of the extinct - GEOFFERY SCOTT

The classic temper studies the past, the romantic neglects it. - SCHELLING

An effort to escape from actuality. - WATERHOUSE

Sentimental metancholy - PHELPS

VAGUE aspiration - PHELPS

Subjectivity, the love of the picturesque, and a reactionary spirit (against whatever immediately preceded it). - PHELPS

Romanticism is, at any time, the art of the day; Classicism, the art of the day-before. - STENDHAL

Emotion rather than reason, the heart opposed to the head.
- GEORGE SAND

A liberation ofthe less consciouslevels of the mind, an intoxicating dreaming. Classicism is control by the conscious mind. - LUCAS.

Imagination as contrasted with reason and the sense of fact. - NELSON

Extraordinary development of imaginative sensibility. - HERFORD

An accentuated predominance of emotional life, provoked or directed by the exercise of imaginative vision, and in its turn stimulating or directing such exercise. - CAZAMIAN.

The renascence of wonder - WATTS-DUNTON

The addition of strangeness to beauty - PATER

The fairy way of writing - KER

The spirit counts for more than the form - GRIERSON

Whereas in classical works the idea is represented directly and with as exact an adaptation of form as possible, in romantic the idea is left to the reader's faculty of divination assisted only by suggestion and symbol. - SAINTSBURY

Guide through the Romantic Movement - E. BERNBAUM - pp.302, 302

3. 'He who seeks to define Romanticism is entering a hazardous occupation which has claimed many victims' - E.B. BERGUM - Article on Romanticism in the Ken Review of 1941

4. 'Romantic like classical, was a term no attempt to define which ever seems entirely convincing to oneself or to others.

- GRIERSON - Background of English Literature - p.256

5.

5. 'The word 'Romantic' has come to mean so many things that, by itself, it means nothing' - LOVEJOY - 'ON THE DISCRIMINATION OF ROMANTICISM', ENGLISH ROMANTIC POETS. p.6

प्रयास किया है । अपने ग्रंथ क्लासिक, रोमान्टिक एण्ड माडर्न के दसवें अध्याय में रोमान्टिक शब्द को अनेक विशेषण शब्दों के समानार्थक प्रयोग करने का उदाहरण भी पेश करते हैं[1] । स्वच्छन्दतावाद की कुछ विशेषतायें निम्न लिखित हैं :-

(1) परम्परायुक्त नियमों और शैलियों के प्रति उदासीनता का भाव । वैसे स्वच्छन्दतावादी गठन ऐक्य (यूनिटी आफ फार्म) स्वाभाविक ढंग से काव्य में बना हुआ मानते हैं क्योंकि ऐसा अगर न हो तो भावों को अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता ।

(2) मानव मन पर प्रकृति के गहरे प्रभाव को इसमें स्वीकार किया जाता है । प्रकृति और मनुष्य के बीच एक गहरा और निकट का सम्बन्ध है, ऐसी स्वच्छन्दतावादियों की मान्यता है । इस प्रकार के संबंध को पहले स्वीकार नहीं किया जाता था । स्वच्छन्दतावादी केवल इतना ही नहीं मानते कि प्रकृति मनुष्य के अस्तित्व का कारण है बल्कि वे यह भी कहते हैं कि वह उसमें कल्पना और अनुभूति का भी उद्रेक करती है । वह अपने आप को मानों मनुष्य के द्वारा अभिव्यक्त करना चाहती है । अतएव स्वच्छन्दतावादी कवियों का ध्यान प्रकृति की गोद में पले हुए प्राणियों की ओर जाता है ।

---

1. Lovejoy, a year later, was far more emphatic : The WORD 'romantic' has come to mean so many things that by itself, it means nothing. It has ceased to perform the function of verbal sign.
Lovejoy, On the Discrimination of Romanticisms, English Romantic poets, p.6. LOVEJOY'S Contention is admirably illustrated by Barzun's sampling of modern usage in chapter X of classic, Romantic and Modern, where he cites examples of the word being used as a synonym for the following adjectives : attractive, unselfish, exuberant, ornamental, unreal, realistic, irrational, materialistic, futile, heroic, mysterious, and soulful, noteworthy, convervative, revolutionary, bombastic, pictureque, nordic, formless, formalistic, emotional, fanciful, stupid.

§3§ प्राकृतिक दृश्यों का चित्रण किसी वर्णनात्मक काव्य केलिए महत्व का माना जाता है लेकिन केवल उद्दीपन विभाव के रूप में उन्हें चित्रित करना वे ठीक नहीं मानते । प्राकृतिक दृश्यों और घटनाओं के पीछे भी एक अर्थ है ऐसा ये कवि मानते हैं । वे मानते हैं कि प्राकृतिक दृश्यों का वर्णनात्मक ढंग अपने आप में निरर्थक मालूम होता है अगर उससे जीवन के सत्य तथा किसी रहस्य की अभिव्यक्ति न हो । स्वच्छन्दतावादी कवि प्रकृति में आध्यात्मिक शक्ति का आरोप करते हैं । प्रकृति में सर्वत्र देवी शक्ति को प्रत्यक्ष करने की प्रवृत्ति भी इन कवियों में पाई जाती है । प्रकृति को स्वच्छन्दतावादी अर्थहीन नहीं मानते और न यही मानते हैं कि वह विभिन्न प्राकृतिक वस्तुओं का समीकरण मात्र है । प्रकृति-चित्रण में वे कवि विभिन्न प्राकृतिक वस्तुओं और शक्तियों की सूची नहीं पेश करते । प्रकृति उनके लिए एक अर्थ रखती है । प्रकृति की विभिन्न वस्तुओं को जैसे एक संदेश देती हैं । दृश्यमान जगद् की वस्तुओं के अन्तर में एक रहस्य का वे पता पाते हैं प्रकृति जैसे उन्हें प्रेरणा देनेवाली है तथा उनके वर्तमान और आनेवाले जीवन के रहस्यों की ओर मानों वह इंगित करती रहती है ।

§4§ स्वच्छन्दतावादी कवियों में व्यंजना का पूर्ण सन्निवेश रहता है । कवि जिस वस्तु को देखता है उसका चित्रण जैसे उस वस्तु के अर्थ को तथा उसके अन्य के रहस्य को पूर्ण रूप से प्रकाश नहीं कर पाता । वह अपने शब्दों द्वारा उसकी ओर संकेत करता रहता है और पाठक का चित्त क्रियाशील होकर उसके रहस्योद्घाटन में लग जाता है । कविता के भाव और शब्द कुछ इस प्रकार के होते हैं कि वे पाठक के मन में दूसरे भावों को जगा देते हैं । फलस्वरूप पाठक के मन में एक भाव के बाद दूसरे भाव आते हैं और यह क्रम लगातार चलता रहता है ।

(5) स्वच्छन्दतावाद का अपना एक जीवन-दर्शन है । जीवन और जगत् को देखने की उसकी अपनी एक विशेष दृष्टिभंगी है । स्वच्छन्दतावादी जीवन और जगत् को यंत्रवत् नहीं मानते । उन के लिए जगत् आध्यात्मिक शक्ति और जीवन से परिपूर्ण है । प्रकृति के नानाविध दृश्यों में वे इसी आध्यात्मिक शक्ति और जीवन को प्रत्यक्ष करते हैं । वे मानते हैं कि ये ही व्यक्ति मन में रूप ग्रहण करते हैं । इन्हीं से मनुष्य के मन में भावों और कला का उच्चतर जगत् विकसित होता है । सर्जनात्मक मन अपने भीतर इन्हीं के प्रभाव का अनुभव करता है । स्वच्छन्दतावादी इस बात का अनुभव करते रहते हैं कि उनकी कृति में जो कुछ महत्तर है वह उनकी अपनी इच्छा-शक्ति का परिणाम नहीं है बल्कि उसका प्रेरणा-स्रोत अन्यत्र है । इस प्रकार वे मानते हैं कि कवि और कलाकार को प्रेरणा देनेवाली शक्ति आध्यात्मिक शक्ति है जो सम्पूर्ण प्रकृति को परिव्याप्त किए हुए है ।

परंपरावादी (CLASSIC) काव्य और स्वच्छन्दतावादी (ROMANTIC) काव्य में भेद

"क्लैसिक" और "रोमांटिक" ये दो विशेषण शब्द साधारणत: परस्पर विरोधी अर्थ में प्रयुक्त होते आये हैं । क्लैसिकल अथवा शास्त्रीय-साहित्य शैली पर अधिक बल देता है । इस में साहित्य रूप की सुन्दरता को प्रमुखता दी जाती है । किन्तु रोमान्टिक साहित्य में भावुकता ही प्रमुख है । वर्ण्यविषय ही इस में प्रधान है, रूप अथवा प्रकार गौण । हृदय के वेग भरे उमडन से ओत - प्रोत होकर जब प्राणों की आकुलता कवि की वाणी के माध्यम से बरबसफूट निकलती है तो उस से जिस साहित्य की सृष्टि होगी वह रोमान्टिक अथवा स्वच्छन्दतावादी साहित्य होगा । इसके अन्दर अभिव्यक्ति का इतना प्रबल वेग होता है कि शास्त्रीय साहित्य की लोह-दीवारें इसे रोक न सकने के कारण छिन्न-भिन्न हो जाती है[1] ।

---

1. डॉ॰ त्रिभुवनसिंह : आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्दधारा - पृ॰64-65 (1961)

"क्लेसिक" और "रोमान्टिक" इन दो शब्दों की उत्पत्ति पर एफ॰ एल॰ ल्यूकस ने स्पष्ट विवेचन प्रस्तुत किया है[1]।

---

1. "As the Roman Empire was flooded by the barbarians, beside official Latin lingua Latina there grew up a barbarized vernacular called by the eighth century, lingua Romanica. From its advert Romanice (loqui or seribere) comes the noun 'Romance' applied first to old French (romanz) then to provancal (roumanco) and spanish (romance) later still to the other Latin tongues. Again, from meaning the French vernacular the word came to denote also the kind of literature composed in that vernacular - that is, fictitious stories in verse or later prose. In the seventeenth century appears a new development. From its fictitious nature 'romance' comes like fable, to mean any fantastic statement. Andromantic now signifies either false as a fairy tale or strange and dream like as a fairy tale. It is easy to find similar developments in words like tragic, comic dramatic, melodramatic, dithyrambic, quiotic. These things write pepys, are almost romantique, and yet true and his brother - diarist Evelyn : There is also on the side of this horrid alp, a very romantic seat. The first recorded apprearances of this whole family of usages in the Oxford Dictionary group themselves with surprising neatness round the middle of the seventeenth century ' a romance, as a lying tale 1638 : 'Romance, as an adjective, 1653-4 (Can there be a romaneer story than ours?' writes Dorothy osborne), 'romancial' 1653, romancial, 1656 'Romancy' 1654, 'romantic, meaning fictitious, 1659, 'romantical, 1678, romanticly' 1681 (romantickly or fabulously) romantically, 1687 romaneer' meaning liar, 1663 to romance' 1671. This sudden flowering of new and somewhat uncomplimentary terms was probably helped by the popular romances of Mlle de scudery and her kind on the one hand and on the other by the growing reaction from things fantastic in favour of reason. In the eighteenth century the better sense, strange as a romance, gradually tends to prevail. The word attaches itself to Gothic ruins, wild lanscapes and other delightful mixtures of tern and subtimity, such as banditti.

F.L. Lucas : The Decline and Fall of the Romantic Ideal. p.16-18

(Contdd......)

'Classical' is a gentleman of more ancient descent. In Latin class is (perhaps from t e same root as 'call') meant originally 'a host', military as well as naval. Good King Tullius divided his citizens into five grades, according to the arms they could afford. The richest, providing the cavalry and the heavy armed phalanx (classis) were called classici, the rest were infra classem. But classicus is not transferred metaphorically to writers until seven centuries later, under the Empire, Aulus Gellius contrasts classicus scriptor with proletarius - 'a first class, standard writer' with 'one of the rabble'. At the Renaissance the fact that the 'Standard' writers of Greece and Rome were read in class at school seems to have helped by confusion to produce that other sense of 'classic', as applied to any Greek or Roman writer, whether first class or not. Thus &classical', meaning 'standard' dates in the Oxford Dictionary, from 1599 ('Classicall and Canonicall'), meaning 'Greek or Latin', from 1607 ('Classicall Authors'). Thence the epithet adapted itself to anything supposed to conform to the standards of classical antiquity'. p.19

पाश्चात्य कला चिन्तन में क्लासिकल शब्द तीन अर्थों में प्रयुक्त होता रहता है । प्रथम अर्थ में यह शब्द उच्च श्रेणी का परिचायक है जिसके अंतर्गत आनेवाली रचनाओं के आस्वादन में एक प्रकार की उत्कृष्ट बौद्धिक क्षमता आवश्यक है । द्वितीय अर्थ में "क्लैसिकल" शब्द से किसी कलाकृति के कालातीत रहने की व्यंजना होती है । तृतीय अर्थ में "क्लैसिकल" शब्द "रोमान्टिक" के विपरीतार्थक रूप में प्रयुक्त होता रहा है । इस अर्थ के अनुसार क्लैसिकल कला उसे कहते हैं जिसमें जातीय विवेक, पारस्परिक संस्थिति एवं शास्त्रीयता की सुरक्षा हो और इसके विरुद्ध "रोमान्टिक" कला वह है जिस में कल्पना और आवेग की प्रचुरता हो पुरातन प्रतिपादित मान्यताओं का विरोध हो एवं सपनों की रंगीनी के साथ गीले प्रेम का गायन हो ।

"क्लैसिकल" शब्द के समान "रोमान्टिक" भी तीन अर्थों में प्रयुक्त होता आया है । प्रथम अर्थ में "रोमान्टिक" कला वह है जिसमें किशोरी तत्व अधिक हो अर्थात् प्रेम, कल्पना और संवेग की प्रधानता हो । द्वितीय अर्थ में रोमान्टिक कला वह है जो प्रचलित नियमों के विरुद्ध स्वच्छंद मार्ग पर चली हो । तृतीय अर्थ में रोमान्टिक कला वह है जिस में विषय की उपेक्षा और शैली की प्रधानता हो । इस प्रकार हम देखते हैं कि "रोमान्टिक" का अर्थ हो गया - मध्यकालीन रोमान्स के गुण, अर्थात् यथार्थ से पलायन, दूरस्थ और अनिश्चित के प्रति प्रेम, शैली और संवेग में उन्मुक्तता तथा विस्मयपरकता, सौन्दर्य और भावावेश की प्रधानता ।[1]

---

1. कुमार विमल आधुनिक हिन्दी काव्य - पृ॰2, 1964 [अर्चना प्रकाशन, बिहार]

"क्लासिकल" साहित्य की मुख्य समस्या शैली की समस्या है। क्लासिकल कविताओं से हमारा तात्पर्य उन कविताओं से है जिनका एक निश्चित स्वरूप एवं शैली है। "रोमान्टिक" कविताओं में आन्तरिक प्रेरणा महत्वपूर्ण है, वह शैली के संबन्ध में एक भी शास्त्रीय बन्धन स्वीकार करने को तैयार नहीं है।

क्लेसिक और रोमान्टिक का अन्तर प्राचीन और नवीन का अंतर मात्र नहीं है। प्रवृत्तियों एवं अभिव्यक्ति के रूपों में भी अंतर विद्यमान है।[1] किन्तु हमें यह भी समझना चाहिए कि परस्पर विपरीतार्थक होकर भी क्लेसिक और रोमान्टिक उन दो समानान्तर रेखाओं की भांति नहीं हैं, जो कभी मिल ही नहीं पातीं। साहित्य का इतिहास इस बात को व्यक्त करता है कि क्लेसिकल काल में में भी रोमान्टिक रचनाएं होती हैं और रोमान्टिक युग में भी क्लेसिकल रचनाएं होती है। कभी-कभी क्लेसिकल कवि के काव्य में भी रोमान्टिक गुण विद्यमान रहता है और रोमान्टिक कवि के काव्य में क्लेसिकल गुण। अतएव यह स्पष्ट है कि न कोई काल या वाद या व्यक्ति निरपेक्ष रूप में क्लेसिकल या रोमान्टिक होती हैं, बल्कि मनुष्य की वृत्तियां ही क्लेसिकल और रोमान्टिक होती हैं।

क्लेसिकल काव्य में "अति अहं" (Super ego) की प्रधानता के कारण रूढ़ि परम्परा और नियम बद्धता का सब से अधिक निर्वाह रहता है।[2]

---

1. It is not simply a distinction between ancient and modern. There romanticism, mysticism and grotesque fantasy in ancient literature also. It is a distinction between tendencies between forms of objective expression which were especially admired by the cultivated Athenian, and forms of self expression more congenial to the individualists of the north.
   - R.A. Scott - James - The Making of Literature, p.166
2. F.L. Lucas : Literature and Psychology (1951) p.100

ऐसे रोमान्टिक काव्य में "इद" (Id) यानी रागावेगों के आधिपत्य के कारण परम्परा, रूढि और नियमों को तोडकर कवि विषयगत और विधानगत नवान्वेषण केलिए इस तरह व्याकुल रहता है कि उसे नये ढंग से काव्येतर कलाओं की सहायता लेनी पडती है। फल स्वरूप रोमान्टिक युग में कला-संगम की एक विशिष्ट प्रवृति रहती है[1]।

रोमान्टिक काव्य की एक प्रमुख विशेषता यह है कि गीतात्मकता के साथ उसका घनिष्ठ संबन्ध है। अतएव उसमें संगीत की उपस्थिति अनिवार्य है। गीतात्मकता उसका सर्वोपरि व्यावर्तकगुण है[2]। रोमान्टिक काव्य में कवि का मुख्य उद्देश्य कल्पना, संवेग, भावुकता, प्रेम आदि से संबद्ध वैयक्तिक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति है। अत: उन सूक्ष्म और व्यक्तिगत अनुभूतियों की अभिव्यक्ति को प्रेषणीय और सहृदय ग्राह्य बनाने केलिए कवि को अपने बिम्बों में विशेष आयास के साथ सम्मूर्त्तन और चित्रात्मकता भरने की आवश्यकता होती है, जिसके चलते रोमान्टिक काव्य में क्लेसिकल काव्य की अपेक्षा चित्रकला का तात्विक समावेश अधिक रहता है[3]।

रोमान्टिक कवि विधान की अपेक्षा विषय पर अधिक बल देता है। वह अपने विषय या भाव की ईमान्दार अभिव्यक्ति में इतना तन्मय रहता है कि विधान पक्ष के बंधन शिथिल ही नहीं होते, टूट भी जाते हैं[4]।

---

1. कुमार विमल : आधुनिक हिन्दी काव्य - पृ. 3-4
2. Hegel : The philosophy of Fine Art - Vol.II translated by Osmatson, London, 1920, p.295
3. कुमार विमल : आधुनिक हिन्दी काव्य - पृ. 4
4. Croce, Quoted on page-1, The Romantic Theory of poetry by: A.E. Powell, London, 1926

"क्लेसिसिज़्म" और "रोमान्टिसिज़्म" काव्य के दो नितान्त भिन्न गुण नहीं हैं। एक ही कवि क्लेसिक और रोमान्टिक दोनों हो सकते हैं।[1] केवल मध्यम कोटि के कवि ही विशुद्ध रोमान्टिक या विशुद्ध क्लेसिक होते हैं। विशुद्ध रोमान्टिक कवि विचार जगत से दूर केवल संवेदनों के लोक में विचरण करता है।[2]

क्लेसिक कवि की अपेक्षा रोमान्टिक कवि मनुष्य के अधिक निकट पहुँचने का प्रयत्न करता है। वह साधारण मनुष्य से प्रेम करता है। जन साधारण की समस्या को अपनी समस्या समझने लगता है। इस में वह जाति और देश के भेद का कोई विचार नहीं करता। वह इन सब बंधनों का उल्लंघन करके विश्व-सौहार्द की बलवती अभिलाषा की पूर्ति के लिए प्रयत्न करता है। स्वतंत्रता की अदम्य अनुराग उसमें विद्यमान है। वह दीन दलित दुखी और गरीब पर सहानुभूति प्रकट करता है।[3]

क्लेसिकल कवि की तुलना में रोमान्टिक कवि के ये प्रधान लक्षण कहे जा सकते हैं - मानव अनुभूतियों को परम मूल्य देना, तर्कबुद्धि की जगह कल्पना को अधिक महत्त्व देना अभिव्यक्ति और शैली के स्वीकृत नियमों से अधिक विषय पक्ष की सुरक्षा को महत्त्व देना तथा विधान [फार्म] के क्षेत्र में स्वतंत्रता और

---

1. A.E. Pwell : The Romantic Thoery of Poetry, London,1928 p.2

2. The Romantic poet lives a life of sensations rather than of thoughts : Keats, Letter, Nov.22,1817.

3. During this time the interest in mankind, that is, in man independent of nation, class and caste which we have seen in prose, began to influence poetry. One form of it appeared in the pleasures the poet began to take in men of other nations than England, another ~~xxxxx~~ form was a deep feeling for the lives of the poor.
S.A. Brooke - English Literature, p.147

ललित व्यंजना के प्रति विशेष साकांक्ष होना, फलस्वरूप काव्येतर ललित कलाओं के प्रति भी आग्रही होना[1]।

"रोमान्टिसिज़्म" में "क्लेसिसिज़्म" की भाँति वस्तु का उदात्त होने की आवश्यकता नहीं। साधारण से साधारण वस्तु तक उस के अन्दर काव्यात्मक चित्रण बनने की क्षमता रखती है। रोमान्टिक कविता में भाषा और छंदों का भी कोई बंधन नहीं माना जाता। भाव के अनुसार भाषा परिवर्तित हो सकती है। आकृति का सौन्दर्य काव्य या कला की श्रेष्ठता की मापरेखा नहीं, उसके अन्तर्गत भावाभिव्यंजना का भी महत्वपूर्ण स्थान है। यही रोमान्टिसिज़्म का आधारभूत सिद्धान्त है[2]।

यूरोप में स्वच्छन्दतावाद का आरंभ

यूरोप नवजागरण युग से गुज़र कर आधुनिक युग में पहुँच चुका था। फ्रान्स में जो क्रांति हुई उसने मानव-व्यक्तित्व को एक नयी दिशा प्रदान की। इस पृष्ठभूमि पर यूरोप में स्वच्छन्दतावाद का उदय होता है। "यूरोप में फ्रान्सीसि क्रांति ने व्यक्ति की आज़ादी का जो वातावरण जन्मा दिया था और राजतन्त्र को जिन चुनौतियों का सामना करना पड रहा था, उनमें स्वच्छन्दतावाद का जन्म एक स्वाभाविक घटना है[3]। एक वैचारिक आन्दोलन के रूप में ही यूरोपीय स्वच्छन्दतावाद का जन्म हुआ। यही कारण है कि उसका प्रभाव भी अत्यन्त व्यापक है। राजतंत्र के स्थान पर प्रजातंत्र को प्रतिष्ठित करना जनहित केलिए आवश्यक समझा गया।

---

1. कुमारविमल : आधुनिक हिन्दी काव्य - पृ.6
2. डॉ. त्रिभुवन सिंह : आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छंद धारा पृ.79
3. डॉ. प्रेमशंकर-हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य - पृ.19

मनुष्य ने अनुभव किया कि उसकी आशाओं उसकी अभिलाषाओं की पूर्ति केलिए उसके निर्वाचित प्रतिनिधियों के हाथ में अधिकार मिलना चाहिए । फ्रांस की क्रांति इस की ओर संकेत करती है । "स्वच्छन्दतावाद के प्रधान बिन्दु रूप में हम मानव-मन की इस आकांक्षा को ले सकते हैं कि उसके स्वप्नों की पूर्ति होनी चाहिए और इसकेलिए एक नये वातावरण का निर्माण करना ज़रूरी है । इतिहासकार उसे वैयक्तिक विद्रोह अथवा व्यक्ति का विद्रोह कहते आये हैं । जब एक बार व्यक्ति को समाज की महत्वपूर्ण इकाई स्वीकार कर लिया गया तब उसकी निर्बाध अभिव्यक्ति के द्वार खुल गये और उसने स्वयं को इतिहास, संस्कृति, साहित्य, कला सभी क्षेत्रों में समान रूप से प्रकाशित करना चाहा । अठारहवीं शताब्दी के जाते-जाते हमें स्वच्छन्दतावादी विचार धारा की अभिव्यक्ति के लक्षण साहित्य में दिखायी देने लगते हैं । फ्रांस में विक्टर ह्यूगो ने स्वच्छन्दतावाद को साहित्य में उदारतावाद {लिबरलिज़्म इन लिटरेचर} कहकर सम्बोधित किया । उसका आशय है कि रचनाकार को नियमों की जकड़ से मुक्त होना चाहिए और वह स्वतन्त्र भूमि पर स्वयं की अधिक सार्थक अभिव्यक्ति दे सकता है[1] । यूरोपियन स्वच्छन्दतावाद ने जिस नवीन नैतिकता की चाह की उसकेलिए सब से पहले उसे प्राचीन रूढ़ियों से लड़ना पड़ा । धर्म और राजनीति दोनों में उदारतावाद की मांग हुई । मानव-व्यक्तित्व का स्वतंत्र एवं सम्पूर्ण विकास ही इसका उद्देश्य था । यूरोपिय स्वच्छन्दतावाद ने अभिव्यक्ति के सभी माध्यमों को प्रभावित किया । कला और साहित्य के क्षेत्र में यूरोप में ही नहीं, अपितु अमरीका तक में स्वच्छन्दतावाद का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है । यूरोप में जर्मनी फ्रांस और ब्रिटेन में विशेषतया स्वच्छन्दतावादी युग की भी कल्पना की गयी ।

---

1. डॉ॰ प्रेमशंकर : हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य - पृ॰19-20

जर्मन स्वच्छन्दतावाद

जर्मनी में इंग्लैंड से पूर्व ही स्वच्छन्दतावाद का उदय हुआ। गेटे (1749-1832) जैसे विख्यात साहित्यकार की रचनाओं में इसकी प्रवृत्तियाँ देखने को मिलती हैं। उदाहरण केलिए कुछ लोग तो गेटे के प्रारंभिक उपन्यास "सोरोज़ आफ वर्थर" की दुखान्त प्रेम कथा को पेश करते हैं। किन्तु गेटे जब प्रौढ़ता को प्राप्त हुए हुए तो उन्होंने स्वच्छन्दतावाद को एक प्रकार का रोग माना। स्वच्छन्दतावाद की अपेक्षा उसने परम्परावाद को महत्व दिया।[1] स्वच्छन्दतावाद एवं परम्परावाद का उनका निर्वचन ध्यान देने योग्य है। गेटे की अंतिम रचनाओं में क्लासिकी प्रवृत्तियाँ अधिक मात्रा में मिलती हैं। प्रसिद्ध जर्मन कवि शिलर गेटे का घनिष्ट मित्र था जिसके निधन पर गेटे ने दुख प्रकट किया कि मेरा आधा अस्तित्व ही नष्ट हो गया। शिलर का निधन 3805 ई॰ में हुआ था। इसके चार पाँच वर्ष पश्चात् जर्मन स्वच्छन्दतावाद का उदय हुआ। जर्मन स्वच्छन्दतावाद को आरंभ करने का श्रेय श्लेगल बन्धुओं (फ्रेडरिक 1759-1805 ई॰) तथा आगस्ट विल्यम् (1767-1842 ई॰) को प्राप्त हुआ। इन्होंने शेक्सपियर के जर्मन अनुवाद भी किये।[2] फ्रेडरिक श्लेगल ने स्वच्छन्दतावादी काव्य को अत्यंत प्रगतिशील माना। जर्मनी के विकलमेन (1737-1768 ई॰) में भी रोमानी प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होती हैं। वह क्लासिकी और स्वच्छन्दतावादी पद्धति के बीच एक मध्यम मार्ग की ओर अग्रसर होता जा रहा था। किन्तु बाद में वह परम्परावाद के समर्थक के रूप में ही नज़र आता है। श्लेगल बन्धुओं ने स्वच्छन्दतावाद और परम्परावाद का एक दूसरे के विरोधी अर्थ में मान लिया। लेसिंग नामक जर्मन साहित्यकार ने क्लासिकी कला का कटु विरोध किया। जर्मन स्वच्छन्दतावादी

---

1. Romanticism is disease, Classicism is health.
2. A short History of German Literature - Gilbert Waterhouse - p,109

प्रवृत्तियों के पीछे राष्ट्रीय आकांक्षाएं प्रमुख दिखायी देती हैं । जर्मन स्वच्छन्दतावाद की एक अन्य विशेषता इसकी विविधता है । जर्मनी में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियां केवल साहित्य की चार दीवारी के भीतर नहीं खडी रहीं किन्तु दर्शन के क्षेत्र में भी उसकी व्यापक प्रवृत्तियां देखने को मिलती हैं । सन् 1813 के आसपास आस्ट्रिया और प्रूस की विजय के कारण जर्मन स्वच्छन्दतावाद का ह्रास होने लगा । फिर भी युरोपियन स्वच्छन्दतावाद के इतिहास में जर्मन स्वच्छन्दतावाद का प्रमुख स्थान है ।[1]

फ्रान्सीसी स्वच्छन्दतावाद

युरोपीय साहित्य के रोमान्टिक आन्दोलन का एक प्रमुख कारण यद्यपि फ्रान्सीसी राज्य क्रांति थी, तथापि फ्रांस में इंग्लैंड और जर्मनी की अपेक्षा बहुत बाद में रोमान्टिक आन्दोलन प्रारंभ हुआ । क्योंकि फ्रांस पर क्लासिकल परंपरा की छाप बहुत गहरी थी । जिस फ्रान्स ने स्वच्छन्दतावादी विचारणा को जन्म दिया और जिस से सारा युरोप प्रभावित हुआ, वही क्रांति के कारण रोमानी रचनाओं की दौड में जर्मनी और इंग्लैंड से पिछडा गया ।[2] फ्रांस में 1820 से 1850 तक मुख्य स्वच्छन्दतावादी युग माना जाता है । विक्टर ह्यूगो [1802 - 1885 ई॰] को फ्रान्सीसी स्वच्छन्दतावादी साहित्य का अग्रदूत मानना चाहिए । ह्यूगो रूसो से प्रभावित था । चौदह वर्ष की अवस्था में उन्होंने एक दुखान्त नाटक की रचना की । बीस वर्ष की अवस्था में उनका प्रथम काव्य संकलन प्रकाशित हुआ । प्रारंभ में ह्यूगो राजतंत्र का समर्थक था, किन्तु बाद में प्रजातंत्र की आवश्यकता पर उसने जोर दिया । नेपोलियन तृतीय का विरोध करने से उसे देश से निष्कासित होना पडा । विश्व साहित्य में ह्यूगो एक उपन्यासकार

1• कुमार विमल : आधुनिक हिन्दी काव्य - पृ॰14-15

2• डॉ॰ प्रेमशंकर : हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य - पृ॰23

के रूप में प्रसिद्ध हुआ तो फ्रान्स में उसकी ख्याति एक कवि के रूप में ही हुई । ह्यूगो पर अपने पूर्ववर्ती रचनाकार शातोब्रिआँ का भी स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित है । ह्यूगो ने यह माँग किया कि लेखक को स्वतंत्रता मिलनी चाहिए । उसने अपनी कविता में कल्पना का सुन्दर समावेश किया । गीति-काव्य के क्षेत्र में भी उसने कदम रखा । वह फ्रांसीसी गायक कहा गया । कविता, नाटक, उपन्यास आदि सभी क्षेत्रों में उसने स्वच्छन्दतावाद का प्रसार किया ।

अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावाद

यह कहना अनुचित न होगा कि यूरोप के अन्य देशों की अपेक्षा इंग्लैंड में स्वच्छन्दतावाद का महत्त्वपूर्ण विकास हुआ । वहाँ यह एक साहित्यिक आन्दोलन के रूप में विकसित और पूर्णता को प्राप्त हुआ । इंग्लैंड में स्वच्छन्दतावाद के विकास को दो युगों में विभाजित कर सकते हैं - पूर्व स्वच्छन्दतावादी युग तथा स्वच्छन्दतावादी युग । पूर्व स्वच्छन्दतावादी युग के कुछ कवियों को हम स्वच्छन्दतावाद के अग्रदूत कह सकते हैं क्योंकि यद्यपि वे स्वच्छन्दतावादी युग के आविर्भाव के पूर्व काव्य-रचना कर रहे थे फिर भी उनकी कविताओं में स्वच्छन्दतावाद की प्रमुख प्रवृत्तियों का आभास देखने को मिलता है । इन कवियों में प्रमुख हैं ब्लेक और बेर्न्स । इन दोनों में ब्लेक का प्रमुख स्थान है । बेर्न्स की अपेक्षा ब्लेक में अधिक मौलिकता का आभास होता है । वह प्रेरणा और सहजात-वृत्तियों को लेकर काव्य के आँगन में प्रविष्ट हुआ । वह परंपराओं के विरुद्ध चलने लगा । उसकी काव्य-भाषा बड़ी मात्रा में प्रतीकात्मक है । इसीलिए कभी-कभी उसमें दुरूहता अनुभव होती है । ब्लेक की विशेषता यह है कि उसने स्वच्छन्दतावादी काव्य में रहस्यवादी तत्वों का समावेश किया । उसके प्रमुख दो काव्यों - "साँग्स ऑफ इन्नोसेन्स (अबोधता के गीत) तथा "साँग्स ऑफ एक्स्पीरियन्स" (अनुभव के गीत) में यह रहस्योन्मुखता स्पष्ट द्रष्टव्य है । ब्लेक के काव्य की

दूसरी विशेषता है कि उसमें अलौकिक तत्व का जो स्वच्छन्दतावाद का एक मुख्य स्वभाव है, आभास मिलता है ।

वर्ड्सवर्थ

अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावादी कवियों में सबसे प्रमुख है विलियम वर्ड्सवर्थ । उन्हें अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावाद का प्रवर्तक कहा जा सकता है । वर्ड्सवर्थ की कविताओं में रूसो का स्पष्ट प्रभाव है । फ्रांस की क्रांति ने कवि को आकृष्ट किया और उसने उसका पूरा समर्थन भी किया । वर्ड्सवर्थ की कविता की मुख्य विशेषता उनका प्रकृति प्रेम है । वे प्रकृति के पुजारी है । प्रकृति को उन्होंने पास से देखा और उसके साथ तादात्म्य स्थापित किया । उनकी सभी कवितायें इस प्रकृति प्रेम को व्यक्त करनेवाली हैं । अंग्रेज़ी रोमान्टिक कवियों में वर्ड्सवर्थ सबसे मौलिक है । ब्रेडले जैसे आलोचक इसकी ओर संकेत करते हैं । उनका अभिप्राय यह है कि वर्ड्सवर्थ से महान कवि हुए हैं पर इतना मौलिक और कोई नहीं । उसने नई चीज़ों पर दृष्टिपात किया या चीज़ों को नये ढंग से देखा[1] ।

लिरिकल बेलेड्स की भूमिका

अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावाद की एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना है लिरिकल बेलेड्स का प्रकाशन । स्वच्छन्दतावाद के घोषणा पत्र का प्रकाशन सन् 1798 ई॰ में हुआ । वेर्ड्सवर्थ तथा उसके सहयोगी कॉलिरिज दोनों के सम्मिलित प्रयास का परिणाम है लिरिकल बेलेड्स की भूमिका । 30 सितंबर 1800 ई॰ को डानियल स्टुवर्ट को भेजे अपने एक खत में कॉलिरिज ने यह बात

---

1. There have been grater poets than Wordswoth, but none more original. He saw new things, or he saw things in a new way.
A.C. BRADLEY - Oxford Lectures on poetry. p.100

व्यक्त की है[1] । इस भूमिका का प्रकाशन अंग्रेज़ी आलोचना के इतिहास में एक नये युग के आरम्भ का सूचक है । यह नव-क्लासिकल युग के भेदन का चिन्ह था[2] । इस भूमिका ने अठारहवीं तथा उन्नीसवीं सदी के बीच एक दीवार खड़ी कर दी[3] ।

भूमिका का संक्षिप्त इतिहास

भूमिका का आरंभ सन् 1798 की लिरिकल बेलेड्स की पूर्व पीठिका या विज्ञापन (एडवेर्टेसमेन्ट) में देखने को मिलता है । यह आगे चलकर सन् 1800 की भूमिका में मिलाया गया । सन् 1802 में और एक बातें तथा काव्य भाषा पर एक अनुबन्ध भी सामने आया ।

प्रथम संस्करण की संक्षिप्त पूर्व पीठिका (विज्ञापन) लंबी भूमिका के अधिक विस्तृत तर्कों के लिए एक उपयुक्त प्रस्तावना बन गयी है । विज्ञापन में वेडस्वर्थ के मुख्य विचार इस प्रकार हैं -

(1) मनुष्य के मन को आकृष्ट करनेवाले हर विषय में कविता की सामग्री का दर्शन हो सकता है । दूसरे शब्दों में तात्पर्य पैदा होने पर कोई वस्तु ऐसी नहीं है जो काव्य की सामग्री के लिए काव्यात्मक न हो या कम महत्त्वपूर्ण न हो ।

---

1. The preface contains our joint opinion on poetry.

2. It was signal for the break with the age of neoclassicism.
RENE WELLEK, A HISTORY OF MODERN CRITICISM(The Romantic Age) p.730

3. It raised a wall between the eighteenth and nineteenth centuries.
SMITH AND PARKS, The Great Critics, p.496

(2) लिरिकल बैलेड्स की रचना एक परिमाण केलिए की गयी है, वह इस बात का अनुमान लगाने केलिए कि जनसाधारण की बातचीत की भाषा काव्यानन्द केलिए कहाँ तक उपयुक्त है ।

(3) नवक्लासिकल रचनाकारों के जो लोग आदी हो गये हैं वे इसे पसन्द नहीं करेंगे । कुछ तो उन्हें कविता पुकारने में संकोच अनुभव करेंगे कि वे काव्य की मौलिकता तथा असाधारणत्व पर चकित रह जायेंगे ।

वेडस्वर्थ ने सब से पहले काव्य के उद्देश्य पर प्रकाश डाला है । उसने कवि के महत्व पर यह कहा है कि कवि अधिक संवेदनशील और उदारचित्त होता है । मानव मन की गहराईयों पर पैठने की उसमें अद्भुत क्षमता होती है । वेडस्वर्थ के अनुसार कवि वह मनुष्य है जो मनुष्यों से बातें करता है[1] । प्रकृति और मनुष्य के बीच कवि एक अक्षय संबन्ध स्थापित करने की चेष्टा करता है । उसका ज्ञान सर्वलौकिक होता है । वेडस्वर्थ के अनुसार मानव और प्रकृति के बीच घनिष्ठ निकटता है । कवि और वैज्ञानिक की तुलना करते हुए उसने कवि को अधिक महत्व प्रदान किया है । उसने कवि के सत्य को अधिक सामाजिक माना है[2] । उसके अनुसार कविता सभी ज्ञान के साँस और आत्मा है[3] । कविता के महत्व पर विचार करते हुए उसने लिखा है कि कविता ज्ञान का आदि भी है और अन्त भी, वह मानव मन के समान अमर है[4] । वेडस्वर्थ की कविता

---

1. He is a man speaking to men. Preface to the Lyrical Ballads.
2. The man of science seeks truth as a remote and unknown benefactor, he cherishes and loves it in his solitude: the poet, singing a song in which all human beings join with him, rejoices in the presence of truth as our visible friend and hourly companion. Preface.
3. Poetry is the breath and finer spirit of all knowledge, it is the impassioned expression which is in the countenance of all sciences- Preface.
4. Poetry is the first and last of all knowledge - it is as immortal as the heart of man.

संबन्धी परिभाषा भी विचारणीय है । वह कविता को सशक्त भावनाओं की स्वजात परिप्लावन मानता है[1]। मानव मन को आनन्दित करना ही उसके अनुसार कविता का अन्तिम लक्ष्य है[2]।

वेर्डस्वर्थ ने काव्य-भाषा पर भी प्रकाश डाला है । वह गद्य-पद्य की भाषा के कृत्रिम विभाजन को स्वीकार नहीं करता । उसने कहा कि इन दोनों की भाषा में कोई विशेष अन्तर नहीं है[3]। उसने बोलचाल की जनसाधारण की भाषा पर बल दिया । उसने कुछ कविताओं के उदरणों के द्वारा यह साबित किया कि मध्यवर्ग और निम्नवर्ग की रोजमर्रा की बोल-चालवाली भाषा काव्य के लिए उपयुक्त है और उससे काव्यानन्द में किसी प्रकार की बाधा उपस्थित नहीं होती ।

लिरिकल बेलेड्स की भूमिका वास्तव में स्वच्छन्दतावादी काव्य प्रवृत्तियों का घोषणा-पत्र है । क्लासिक कवियों की भाषा संबन्धी धारणा का उसने स्पष्ट विरोध किया । काव्य को जन-जीवन के निकट लाने का यह महत्वपूर्ण प्रयत्न था । भाषा के प्रश्न पर स्पष्ट प्रकाश डालने के उद्देश्य से भूमिका में एक परिशिष्ट भी उसने जोड दिया । वेर्डस्वर्थ के काव्य संबन्धी धारणाओं पर विचार करने से यह स्पष्ट होता है कि वह अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावाद के अग्रदूत है । वेर्डस्वर्थ का ऐतिहासिक महत्व यह है कि उसने स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों केलिए मार्ग प्रशस्त किया ।

---

1. Poetry is the spontaneous overflow of powerful feelings.

2. The end of poetry is to produce excitement in co-existence with an over balance of pleasure.

3. There neither is, nor can be, any essential defference between the language of prose and metrical composition.

लिरिकल बेलेड्स की भूमिका स्वच्छन्दतावादी आलोचना का अमूल्य प्रमाण है । जो भी उसकी कमियाँ या कमज़ोरियाँ हों, उसके आलोचनात्मक महत्व का निषेध नहीं किया जा सकता । यदि फ्रान्सीसी क्रांति ने राजनैतिक क्षेत्र में समानता, स्वतंत्रता और भ्रातृत्व की भावनाओं का संचार किया, तो लिरिकल बेलेड्स की भूमिका ने साहित्य और आलोचना में प्रजातंत्र के नये अरुणोदय को जन्म दिया । आलोचकों ने वर्डस्वर्थ के देन की भूरि-भूरि प्रशंसा की है । एम.एच. एब्राम्स के अनुसार वर्डस्वर्थ का महत्व यह है कि उसने काव्य के स्वभाव और रूप पर कई नई धारणाओं को पेश की ।[1] मार्गरट ड्राबिल के अनुसार भूमिका एक नये युग के आरम्भ का सूचक है ।[2] सि.एम. बावरा ने वर्डस्वर्थ की कल्पना संबन्धी धारणाओं की बड़ी प्रशंसा की है ।[3] लासल्ले अबरक्रोम्बी ने वर्डस्वर्थ को शैली की स्वतंत्रता का मुख्य प्रवर्तक माना है ।[4] रेने वेलक के अनुसार वर्डस्वर्थ की आलोचना का आकार में लघु होने पर भी साहित्यिक गुणों से धनी और महत्वपूर्ण है ।[5]

---

1. The preface 'Owes its special portion to the fact that it presented a set of propositions about the nature and criteria of poetry which were widely adopted by Wordsworth's contemporaries, including those who were in least sympathy with what they supposed to be Wordsworth's Own Poetic aims'.
THE MIRROR AND THE LAMP p.100-101

2. The preface leaves a final impression of a quite extraordinary combination of creative and critical power of passion and thought. It cannot be read too often, every time it seems to contain something new and unexpected. It marks the beginning of a new age.
MARGARET DRABBLE - WORDSWORTH p.46-47

3. For him the imagination was the most important gift that a poet can have and his arrangement of his own poems shown what he meant by it.
C.M. BOWRA, The Romantic Imagination. p.1

4. Wordswoth cleared the way for the Romantic and all subsequent movements to words liberty of style.
LASCELLES ABERCROMBIE - Principles of Literary Criticism. p.144-145

5. Though Wordsworth left only a small body of criticism, it is rich in survivals, suggestions, anticipations and personal in sights. RENE WELLEK
A History of Modern Criticism : The Romantic Age.p.149-50

कॉलरिज

सामुअल टेलर कॉलरिज [1772 - 1834 ई०] अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावाद के सबसे प्रमुख प्रवर्तक है । आरम्भ में वह वेडस्वर्थ का सहयोगी कवि था, लेकिन बाद में इन दोनों के मत में कुछ भिन्नता हुई और दोनों भिन्न-भिन्न मार्ग पर चलने लगे । वेड्स्वर्थ की अपेक्षा कॉलरिज के काव्य में दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक तत्वों का समावेश बड़ी मात्रा में मिलता है । कुछ आलोचकों का विचार है कि कॉलरिज के स्वच्छन्दतावादी विचारों पर शैलिंग का स्पष्ट प्रभाव है[1] । वेडस्वर्थ और कॉलरिज दोनों ने मिलकर अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावाद का मार्ग प्रशस्त किया और साथ ही साहित्यिक रुचि में एक अभूतपूर्व क्रांति कर दी । एक महान आलोचक की क्षमता तथा गुण वेडस्वर्थ में नहीं है । कॉलरिज की दार्शनिक पृष्ठभूमि भी वेडस्वर्थ को प्राप्त नहीं हुई । वेडस्वर्थ के लिरिकल बेलड्स की भूमिका तक कॉलरिज के साथ हुई लंबी तथा लगातार चर्चा का परिणाम है । लेकिन बाद में इन दोनों के मत में अन्तर हुए । काव्य-भाषा तथा छन्द पर वेडस्वर्थ के जो विचार भूमिका में प्रत्यक्ष हुए उन्हें कॉलरिज मान्यता न दे सका । वेडस्वर्थ के विचार का उसने खण्डन भी किया है । "बयोग्राफिया लिटेरेरिया" (Biographia Literaria) नामक अपने महत्वपूर्ण आलोचनात्मक ग्रन्थ का निर्माण उसने इस उद्देश्य से किया था[2] । वेडस्वर्थ की कविता को सामने रखकर उसने अपने तर्क को साबित किया । उसने यह भी प्रमाणित किया कि वेडस्वर्थ स्वयं अपने विचारों का पालन नहीं कर सका है । वेडस्वर्थ के तत्वों का खण्डन करने के उद्देश्य से कॉलरिज ने जो विचार प्रकट किया उसकी आलोचकों ने बड़ी प्रशंसा की है[3] ।

---

1. Herbert Read - The true Voice of Feeling, p.16

2. Biographia Literaria is a summary attempt to marshal objection against the preface that had been growing up in his mind over the past fifteen years and to provide criticism with a systematic basis of its own. George Watson, The Literary critics, p.117

3. The richest theoretical discussion of poetic diction in English Literature. THOMAS M. RAYSOR - COLRIDGES Criticism of WORDSWORTH (PMLA) Vol. (1939)

बयोग्राफिया लिटरेरिया

कालरिज के सबसे प्रथम और प्रमुख आलोचनात्मक रचना है बयोग्राफिया लिटरेरिया । इसका प्रथम प्रकाशन सन् 1817, जुलाई में हुआ था । कालरिज के जीवन काल में इसका पुनर्मुद्रण नहीं हुआ । इस महत्वपूर्ण रचना में दर्शन और काव्य का सुन्दर समावेश हुआ है ।[1] कुछ कमियों के होते हुए भी सेन्सबरी जैसे आलोचक ने इस रचना को अत्यन्त महत्व दिया है ।[2]

बयोग्राफिया लिटरेरिया में वेडस्वर्थ के काव्य की आलोचना के अलावा काण्ट श्लेगल और शेलिंग जैसे जर्मन दार्शनिकों के दार्शनिक विचारों की चर्चा भी मिलती है । इन जर्मन दार्शनिकों का कालरिज पर गहरा प्रभाव पड़ा है । कल्पना सम्बन्धी अपनी धारणाओं तथा आलोचनात्मक दर्शन के लिए कालरिज इन दार्शनिकों से अत्यधिक प्रभावित हुआ है । यद्यपि दर्शन के प्रति अत्यधिक आग्रह ने उसके कवि को क्षति पहुंचायी तो भी उस आग्रह ने उसकी आलोचना को एक नयी व्याप्ति तथा दार्शनिक गहराई प्रदान की । ऐ॰ए॰ रिचेड्स का मत है कि दार्शनिक पृष्ठभूमि के बिना उसकी कल्पना संबन्धी धारणाओं को समझना संभव नहीं है ।

---

1. Its curious structure, largely metaphysical in its first half, largely critical in its second and (in spite of its title) only sporadically auto biographical may be accidental or the result of a hasty decision; but at least it has the merit of balancing the two great interests of his career, philosophy and poetry.
   GEORGE WATSON, The Literary critics, p.117

2. With all its gaps and all its lapses, the whole book is among the few which constitute the very Bible of criticism.
   George Saintsbury, A History of English criticism, p.328

रिचेड्स के अनुसार कॉलरिज के दार्शनिक विचार उसके आलोचना के सिद्धान्तों केलिए एक अनिवार्य भूमिका का काम करते हैं।[1] अंग्रेज़ी रोमान्टिक कवियों में कॉलरिज कल्पना के सब से प्रमुख व्याख्याता है। कल्पना को उसने बडे महत्वपूर्ण स्थान पर प्रतिष्ठित किया है। उसने कल्पना को बडी शक्ति प्रदान की।[2] बयोग्राफिया लिटरेरिया के तेरहवें अध्याय में कल्पना के विचारों की चरम सीमा मिलती है। इस अध्याय के आलोचकों ने बडी प्रशंसा की है।[3] कल्पना पर कॉलरिज के विचार स्वच्छन्दतावादी काव्य के आलोचकों में बडी चर्चा का विषय बन गया। वह कल्पना को अनिवार्यत: जीवन्त मानता है। कॉलरिज ने कल्पना के दो रूप माना है - मुख्या कल्पना (प्राइमरी इमेजिनेशन) तथा गौण कल्पना (सेकेण्डरी इमेजिनेशन)। मुख्य कल्पना वह है जो समस्त मानवीय प्रत्यक्ष ज्ञान की जीवन्त शक्ति तथा प्रमुख स्रोत और गौण कल्पना वह है जो मूल की प्रतिध्वनि होती है। यह तो मात्रा और क्रिया प्रणाली में भिन्न होती है। कॉलरिज ने "फेन्सी" को कल्पना से अलग माना है। उसके अनुसार फेन्सी अथवा मनोराज्य की स्थिति देश-काल के बन्धनों से मुक्त एक स्मृति व्यापार है। बयोग्राफिया लिटरेरिया के चौथे अध्याय में उसने इमेजिनेशन और फेन्सी का स्पष्ट विवेचन प्रस्तुत किया है।[4] इन दोनों के उदाहरणार्थ दो कवियों की ओर भी वह संकेत करता है।[5]

---

1. An indispensable introduction to his theory of criticism. I.A. RICHARDS, Coleridge on Imagination, p.18

2. An exaggerated and importance a mystic significance, lined with the forces offestility, the powers of growth, and godhead itself. JAMES VOLANT BAKER The sacred River - Coleridge's theory of the imagination. p.115

3. The Waterloo of English Aesthetics, GEORGE WATSON, The Literary critics, p.118

4. Repeated meditation led me first to suspect, (and a more intimate analysis of the human faculties their appropriate marks, functions, and effects natured my conjecture into full conviction) that fancy and imagination were two distinct and widely defferent faculties, instead of being according to the general belief, either two names with one meaning, or at furthest the lower and higher degree of one and the same power. BIOGRAPHIA LITERARIA.

5. Milton had a highly imaginative, cowley a very fancyful mind. BIOGRAPHIA LITERARIA.

शेली

अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावादी कवियों में पी॰बी॰ शेली {1762 - 1822 ई॰} का महत्वपूर्ण स्थान है । उसमें काव्य तथा चिंतन का सुन्दर सामंजस्य मिलता है । भावात्मक चिंतन की उसकी असाधारण क्षमता थी । शेली अपने जीवन भर वैयक्तिक तथा सामाजिक स्वतंत्रता का प्रेमी था । वह नास्तिकता का समर्थक था । ईसाई धर्म तथा सामाजिक अनुशासन के सभी रूपों का उसने तीव्र विरोध किया । वह मुक्त प्रेम का समर्थन करता था । विवाह संबन्धी सभी प्रचलित मान्यताओं का उसने विरोध किया । वर्तमान प्रथाओं तथा वस्तुओं के प्रति अतृप्ति स्वच्छन्दतावादियों का मुख्य स्वभाव है । कॉलरिज और स्कॉट जब जीवन से असंतुष्ट हुए तो मध्ययुग की ओर जाने लगे । शेली तो प्राचीन यूनान की ओर आकृष्ट हुआ । वर्डस्वर्थ और कॉलरिज की तुलना में शेली कम अंग्रेज़ था । राष्ट्रीय जीवन तथा इंग्लैंड के ऐतिहासिक परंपरा के प्रति उसका कोई विशेष आदर नहीं रहा । शेली की रचनाओं में इंग्लैंड का कम और इटली का अधिक प्रभाव देखने को मिलता है । हेल्लास नामक उसका नाटक यूनानी स्वतंत्रता - संग्राम की प्रेरणा का परिणाम है । उसकी सब से प्रसिद्ध कृति "प्रोमेथियस अनबोण्ड" एक यूनानी कथा पर आधारित रचना है । इटली के प्राकृतिक-सौन्दर्य ने उसे मुग्ध कर दिया था । शेली पर प्लेटो का गहरा प्रभाव पड़ा है । इस यूनानी दार्शनिक के आदर्शवादी दर्शन ने शेली को प्रभावित किया । शेली के इस विश्वास में कि प्रकृति के सभी क्रियाकलापों के पीछे प्रेम की शक्ति है, जो सभी वस्तुओं को जीवन तथा एकता प्रदान करती है, प्लेटो का प्रभाव द्रष्टव्य है ।

निश्चित और तीव्र अभिलाषा शेली की कविता की केन्द्र बिन्दु है । वर्तमान स्थिति से ऊब कर उससे बचने की आशा से वह एक महत्वपूर्ण भविष्य का संकल्प करने लगता है, जहाँ प्रेम ही मनुष्य संबन्धों का आधार हो,

और सभी समान और स्वतंत्र हों । यह आदर्शवाद ही अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावादी कविता केलिए शेली की देन है । आदर्श प्रेम आदर्श सौन्दर्य और आदर्श स्वतंत्रता यही शेली की चाह थी। दूसरे किसी स्वच्छन्दतावादी की अपेक्षा वह एक सुवर्ण - युग की तीव्र कल्पना और आशा करता था । स्वच्छन्दतावादी प्रकृति के बडे प्रेमी थे । शेली इसका अपवाद नहीं । प्रकृति की शांति में वह सुख और शान्ति को पा सका । स्वच्छन्दतावादियों के लिए कल्पना एक दिव्य शक्ति है । उनका विश्वास था कि कल्पना के द्वारा वे वस्तुओं के हृदय का दर्शन कर सकेंगी । शेली भी कल्पना को बडा महत्व देता था । शेली की कविता में हम उसके हृदय का स्पन्दन पाते हैं । उसके सभी गीतों में उसकी अपनी निराशा और अतृप्ति के शब्द ही मुखरित होते हैं । अपने हृदय की तीव्र व्यथा ही असंख्य गीतों के रूप ग्रहण किये और इसी ने उसे इंग्लैंड के सबसे बडे गीतकार की पदवी प्रदान की । शेली इंग्लैंड के ही नहीं, बल्कि सारे आधुनिक युरोप के सबसे बडे गीतकार है ।

स्वच्छन्दतावादी आलोचकों में शेली का प्रमुख स्थान है । उसका प्रमुख आलोचनात्मक निबन्ध है "ए डिफेन्स आफ पोयट्री" । इसमें शेली के काव्य - संबन्धी विचार दृष्टव्य है । इस रचना में प्लेटो का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित है[1] । अन्य स्वच्छन्दतावादी आलोचकों की भांति शेली भी कल्पना को सृजनात्मक प्रक्रिया का अनिवार्य अंग मानता है । शायद कालरिज की आलोचनात्मक रचनाओं को छोडकर स्वच्छन्दतावादी कल्पना का इतना शक्तिशाली मूल्यांकन अंग्रेज़ी आलोचना में और कहीं नहीं मिलता । शेली के अनुसार तर्क और कल्पना मानसिक क्रिया के दो वर्ग हैं । उसके मत में कल्पना की अभिव्यक्ति ही कविता है[2] । अपने विचारों के स्पष्टीकरण केलिए वह

---

1. There is more of plato in the 'Defence' than in any earlier piece of English criticism.
M.H. ABRAMS - The Mirror and the Lamp. p.126

2. Poetry, in a general sense, may be difined to be 'the expression of the Imagination' and poetry is connate with the origion of man - A Defence of Poetry'

प्रतीकों, बिम्बों तथा दृष्टान्तों का आश्रय लेता है । चिरन्तन सत्य को व्यक्त करना ही काव्य का मुख्य उद्देश्य है । अत: काव्य सार्वजनीन एवं सार्वकालिक होता है । काव्य का अनुवाद असंभव है । अनुवाद के माध्यम से काव्य का आस्वाद भी सम्भव नहीं । उसके अनुसार आनन्द ही काव्य का मुख्य उपादान है । शेली की "ए डिफेन्स आफ पोयट्री" की आलोचकों ने बडी प्रशंसा की है । कविता पर शेली के गहरे विचारों की अभिव्यक्ति इसमें स्पष्ट परिलक्षित है । पिछले सौ वर्षों की किसी भी रचना से यह अधिक महत्वपूर्ण है[1] । सिडनी की अपोलजी वर्डस्वर्थ की लिरिकल बलेड्स की भूमिका अथवा कारलेल की आलोचनात्मक रचनाओं से इसकी तुलना कर सकते हैं । यह अंग्रेज़ी भाषा का सबसे महत्वपूर्ण लेख है[2] । यह अंग्रेज़ी में लिखी गयी अत्यंत मौलिक तथा महत्वपूर्ण गद्य रचना कहा जा सकता है[3] । कविता के अनन्य महत्व को स्पष्ट करके दिखाने में शेली ने जो प्रयत्न किया उसे उसके विरोधियों को भी मानना पडा । उसकी रचना स्वच्छन्दतावादी आन्दोलन के प्रति अति अनुराग का सूचक है[4] । शेली की आलोचना का क्षेत्र बहुत सीमित है । उसकी डिफेन्स आफ पोयट्री तथा उसके कुछ आलोचनात्मक

---

1. It expresses Shelley's deepest thought about poetry and marks as clearly as any writing of the last hundred years, the wide gulf that seperates the ideals of recent poetry from those of the century preceding the French Revolution.
C.E. VAUGHAN, English Literary Criticism, p.160

2. The profoundest essay in the English Language.
HERBERT READ- The True Voice of Feeling, p.226-27

3. The most important original prose document in our language. G.WILSON KNIGHT, CHRIST AND NIETZSCHE, p.27

4. Shelley is successful in conveying a sense of the immense signifieance of poetry even to those who disagree with his position, and his statement is valuable if only as the last of the great general difences done in the spirit of the Renaissance and with the added enthusiasm of the Romantic movement.
David Daiches, Critical Approaches to literature, p.120

लेख एवं पत्र तक ही उसकी व्याप्ति है । फिर भी उसका बड़ा महत्व है । उसकी आलोचना एक कवि की आलोचना है । वह जितना आलोचनात्मक है उतना ही सृजनात्मक भी । कविता की प्रेरणात्मक दृष्टि उसे प्लेटो से प्राप्त हुई । लेकिन उसके अनुसार सिर्फ आदर्शात्मक यथार्थ को प्रस्तुत करना कवि का काम नहीं । कवि को कल्पना की ओर अग्रसर होना चाहिए । कल्पना के सहारे वह विषय को आकर्षक बनाता है । यथार्थ और कल्पना का सामंजस्य ही अभिकाम्य है । शेली कविता में दिव्यत्व का आरोप करता है । उसके अनुसार कविता सभी ज्ञान का केंद्र है । वह सभी शास्त्रों को ग्रहण करती है[1] । शेली ने कवि को ऊँचे आसन पर प्रतिष्ठित किया है । उसके अनुसार कवि दृष्टा और नियामक है । वह वर्तमान और भविष्य दोनों को पहचान लेता है । शेली जब काव्य पर दिव्य शक्ति का आरोप करता है, तब वह कवि पर आवश्यकता से अधिक भार डालता दिखाई देता है । क्योंकि कवि - कर्म तथा सुधारक की दिशाओं का सामंजस्य उतना आसान कार्य नहीं है । प्लेटो की भांति शेली भी प्रेरणा के क्षणों का महत्व स्वीकार कर लेता है । उसके अनुसार काव्य हमेशा सर्वश्रेष्ठ वस्तुओं को ग्रहण करने का प्रयास करता है । काव्य प्रत्येक वस्तु को सौन्दर्य से भर देता है । शेली ने कवि को देवदूत तक कह डाला । शेली के विचार क्रांतिकारी थे । वह शुद्ध काव्य का तीव्र विरोध करता था । इसीलिए काव्य के कलापक्ष पर उसने अधिक ध्यान नहीं दिया । शेली के सम्पूर्ण चिंतन का केन्द्र मनुष्य है । स्वच्छन्दतावादी कवियों में मनुष्य पर अधिक विचार करनेवाला व्यक्ति भी शेली है । स्वच्छन्दतावादियों में शेली सबसे बड़ा गीतकार भी है । उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को गीतात्मक कहना उचित होगा[2] । शेली के अनुसार कवि एक कोयल है जो अंधकार में बैठकर मधुर गीत गाता है[3] । मैथ्यू आरनोल्ड ने जो

---

1. Poetry is indeed something divine. It is at once the centre and circumference of knowledge, it is that which comprehends all science, and that to which all science must be referred. A Defence of poetry.
2. He alone was the perfect singing God. SWINBURNE
3. A poet is a night-ingale, who sits in darkness and sings to cheer its own solitude with sweet sounds, his auditors are as men entranced by the melody of an unseen musician, who feel that they are moved and softened, yet know not whence or why. A Defence of poetry.

शेली के कटु आलोचक थे, उसके गीतों की संगीतात्मकता की बड़ी प्रशंसा की है[1]। स्वच्छन्दतावादी काव्य को शेली का सबसे बड़ा देन भी यह संगीतात्मकता है। आध्यात्मिक विचार, गीतात्मकता, प्रभूत कल्पना, सहज मानवीय संवेदन आदि के द्वारा शेली ने स्वच्छन्दतावाद को एक ऊँचे आसन पर प्रतिष्ठित किया है।

कीट्स

अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावादी कवियों में जॉन कीट्स [1795 - 1819] का विशेष महत्व है। अन्य प्रमुख स्वच्छन्दतावादियों की अपेक्षा वह बाद में आया और पहले चला गया। अपनी इस अल्पायु में उसने जो साहित्य का सृजन किया, उससे स्वच्छन्दतावादी कवियों में वह विशेष स्थान प्राप्त कर सका। कीट्स सौन्दर्यवादी कवि है। सौन्दर्य की इसने जितनी चर्चा की उतनी और किसी ने नहीं की। उसके अनुसार सौन्दर्य और सत्य दोनों एक ही है। अन्य स्वच्छन्दतावादी कवियों की अपेक्षा कीट्स अधिक वस्तुपरक है, क्योंकि वह इस चेष्टा में रहा करता था कि वह अपने अहं का सार्वजनीकरण कर सके। कीट्स की कविता में मध्यवर्गीय मनोवृत्ति ही देखने को मिलती है। लेकिन उसकी कविताओं में विद्रोह का मोह नहीं मिलता। अन्य स्वच्छन्दतावादियों की अपेक्षा कीट्स में कुछ विशेष बातें देखने को मिलती हैं। उसने तीन वर्ष की छोटी अवधि के अन्दर - अन्दर अपने सभी काव्यों का प्रणयन किया। अन्य सभी स्वच्छन्दतावादी कवियों पर फ्रान्सीसी क्रांति का गहरा प्रभाव पड़ा है। लेकिन कीट्स पर इसका कोई प्रभाव परिलक्षित नहीं होता।

---

1. The right sphere of shelley's genius was the sphere of music. MATHEW ARNOLD

शेली की भाँति कीट्स भी अपने जीवन काल में कोई महत्व प्राप्त नहीं कर सका । शेली के अनुसार कीट्स अपने जीवनकाल में एक लोकप्रिय कवि नहीं रहा । लेकिन मृत्यु के पश्चात् तीव्र गति से वह प्रसिद्ध हो गया । कीट्स की कविता में स्वच्छन्दतावाद के सभी गुणों एवं स्वभाव की पूर्ण और स्वतंत्र अभिव्यक्ति देखने को मिलती है । उसकी कविता में स्वच्छन्दतावाद का चरम विकास द्रष्टव्य है । अंग्रेजी स्वच्छन्दतावाद का वह सबसे सुगन्धपूर्ण फूल है । स्वच्छन्दतावाद के साथ ही साथ कीट्स में परंपरावादी प्रवृत्तियाँ भी परिलक्षित होती हैं । यह पोप का कृत्रिम परंपरावाद नहीं, यह ग्रीक आचार्यों का सच्चा परंपरावाद है । स्वच्छन्दतावादी कविता केलिए उसने यूनानी विषय को स्वीकार किया जो यूनानी साहित्य तथा पुराण से लिया गया है । कीट्स भी रूप की पूर्णता पर बल देता है । सौन्दर्य की ओर वह अत्यधिक आकृष्ट हुआ । सौन्दर्य के प्रति तीव्र आग्रह भी यूनानियों का स्वभाव है । कीट्स की कविता में स्वच्छन्दतावाद एवं परंपरावाद का सुन्दर सामंजस्य मिलता है । इस दृष्टि से अंग्रेजी स्वच्छन्दतावादी कविता के इतिहास में कीट्स का विशेष महत्व है । कीट्स की कविता का मूल तत्व है सौन्दर्य के प्रति प्रेम । यदि वर्डस्वर्थ प्रकृति की ओर अधिक आकृष्ट हुआ तो कीट्स सौन्दर्य की ओर । सौन्दर्य के प्रति इस अदम्य आग्रह का कारण भी अपने एक खत में उसने व्यक्त किया है कि एक महाकवि केलिए सौन्दर्य का बोध अन्य सभी परिलक्षणाओं से अधिक आवश्यक है[1] । कीट्स के लिए सौन्दर्य अपने जीवन और कला का प्राण था । सौन्दर्य उसका धर्म था । उसकी कल्पना पर सौन्दर्य का गहरा प्रभाव पड़ा । प्राकृतिक सौन्दर्य, नारी सौन्दर्य, कला और साहित्य का सौन्दर्य और संक्षेप में पृथ्वी से गगन तक के

---

1. With a great poet the sense of Beauty overcomes all other consideration.

सभी वस्तुओं का सौन्दर्य उसे आकृष्ट कर सका । शरद् ऋतु जो दूसरों की दृष्टि में अनाकर्षक है, कीट्स केलिए अत्यन्त सुन्दर लगती है क्योंकि इस ऋतु का अपना मधुर संगीत है । नारी-सौन्दर्य पर भी वह मुग्ध हो जाता है[1] । वास्तव में सभी वस्तुओं में जो सौन्दर्य का अंश है, उसकी ओर वह आकृष्ट होता था । अपने एक ख़त में भी उसने यह बात व्यक्त की है[2] । सौन्दर्य से पूर्ण वस्तु उसकेलिए हमेशा आनन्दप्रद था । "एंडिमियन" नामक अपनी एक कविता के प्रारंभिक पंक्तियां इसका समर्थन करती हैं । काल के बीतने पर भी उसका आकर्षण बढ़ता रहता है[3] । दूसरे शब्दों में सौन्दर्य अनश्वर है । लेकिन कोरा शारीरिक या वैषयिक सौन्दर्य को अनश्वर नहीं कहा जा सकता । उसका आकर्षण भी स्थिर नहीं है । शारीरिक सौन्दर्य समय के साथ ही मुर्झा जाता है । केवल आध्यात्मिक सौन्दर्य ही या भावों का सौन्दर्य ही शाश्वत रहता है । कीट्स सौन्दर्य और सत्य में तादात्म्य स्थापित करना चाहता है । अपने भाई के नाम पर लिखे एक ख़त में उसने यह व्यक्त किया है[4] । वह सत्य और सौन्दर्य दोनों को अलग करके देख न सकता था । दूसरे एक ख़त से यह भी व्यक्त होता है[5] ।

---

1. Light feet, dark violet eyes and parted hair soft dimpled hands, white neck and creamy breast.

2. I have loved the principal of Beauty in all things.

3. A thing of Beauty is a joy for ever Its loveliness increases.........

4. The exeellence of every art is its intensity, capable of making all disagree ables evaporate, from their being in close relationship with Beauty and Truth.
KEATS

5. I never can feel certain of my Truth but from a clear perception of its Beauty.
KEATS

वह सत्य और सौन्दर्य दोनों को एक ही मानता है और कहता है कि सौन्दर्य सत्य है और सत्य सौन्दर्य।[1] कीट्स का यह निष्कर्ष अनुचित नहीं कहा जा सकता। सौन्दर्ययुक्त सभी वस्तुएं सत्ययुक्त भी हैं। लेकिन जो सच्चा सौन्दर्य है वह आत्मीय है, कोरा शारीरिक नहीं। देखने में कुरूप औरत भी निष्कलंक एवं निर्मल होने पर सुन्दर दीखती है क्योंकि उसका मुख सत्य के प्रकाश से शोभायमान होता है। एक कलात्मक कृति इसलिए सुन्दर है कि वह उस सत्य की अभिव्यक्ति है जो उस कलाकार के हृदय में अन्तर्हित है। प्रकृति सुन्दर है, सूरज, चांद, तारे सभी सुन्दर हैं, क्योंकि वह सौन्दर्य उसके निर्माता के जो सबसे बड़ा सत्य है, सौन्दर्य एवं गांभीर्य की प्रतिच्छाया है। प्लेटो ने भी सत्य और सौन्दर्य को एक ही माना है। अतः जब कीट्स सौन्दर्य सत्य है और सत्य सौन्दर्य जैसी उक्ति को प्रस्तुत करता है तब वह प्लेटो के निकट पहुंच जाता है। लेकिन हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि कीट्स ने कभी प्लेटो का अध्ययन नहीं किया था। दुख और पीड़ाओं से पूर्ण होने पर भी जीवन सच्चा और सुन्दर है। लेकिन कल्पना के द्वारा ही यह तथ्य समझ सकते हैं। यह याथार्थ्य कीट्स धीरे - धीरे समझ सका और उसने कहा कि "सौन्दर्य सत्य है और सत्य सौन्दर्य"। भारतीय विद्यार्थियों केलिए कीट्स की इन पंक्तियों को समझना कठिन नहीं है, क्योंकि वे "सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम्" वाले विचार से पहले ही परिचित हैं।

कीट्स ने सौन्दर्य और शक्ति में भी सामंजस्य स्थापित किया है। अपनी एक कविता में उसने यह बात व्यक्त की है। वह कहता है कि जो सौन्दर्य में आगे है वह शक्ति में भी आगे होगा। यही प्रकृति का नियम है।[2]

---

1. Beauty is Truth and Truth Beauty, that is all ye know on earth, and all ye need to know.
   ODE ON A GRECIAN URN

2. For its the eternal law
   That first in Beauty should be first in might.
   KEATS - HYPERION A VISION

आलोचकों ने कीट्स पर पलायनवादी का आरोप लगाया है[1]। वर्ड्सवर्थ, कॉलरिज आदि दूसरे स्वच्छन्दतावादी कवियों पर फ्रान्सीसी क्रांति का गहरा प्रभाव पड़ा है। लेकिन कीट्स पर ऐसा कोई प्रभाव परिलक्षित नहीं होता। अन्य कवियों की कविता में मानव और उसके प्रश्न, उसकी गतिविधियाँ, उसके कर्तव्य तथा उसकी आशाओं पर विचार किया गया है। कीट्स की कविता में फ्रान्सीसी क्रांति के प्रति कोई सहानुभूति नहीं मिलती। वर्तमान के प्रति उसका कोई तात्पर्य नहीं। मानव के प्रति, उसके भविष्य के प्रति, स्वतंत्रता, समानता या भ्रातृत्व के प्रति उसका कोई मोह या आग्रह नहीं। केवल एक ही वस्तु पर वह आग्रह प्रकट करता है और वह है सौन्दर्य। विषय-सुख की ओर ही वह अधिक आकृष्ट हुआ, विचारों की ओर कम। उसकी कविता इस बात का प्रमाण है कि विषय-सुख को ही वह सब कुछ मानता था। वह वर्ण, सुगन्ध, रुचि और प्रकृति के रूपों पर गाता है जो उसे अत्यधिक आकृष्ट करते हैं तथा परी-लोक की ओर ले चलते हैं। समकालीन भावों एवं विचारों की उसकी कविता में कोई अभिव्यक्ति नहीं मिलती। फ्रान्सीसी क्रांति से जिसने उस समय के अनेक विचारकों और कवियों के मन पर प्रभाव डाला, कीट्स एकदम दूर रहता है। यथार्थ जीवन और उसकी समस्याओं से वह बचने का प्रयत्न करता है और प्राचीन यूनान अथवा मध्यकालीन युगों की ओर आकृष्ट होता है। उसकी कविता इस बात का भी प्रमाण है कि वह जीवन के क्लेशों, पीडाओं से बचने का प्रयत्न करता है। अपने एक संबोध गीत में वह जीवन की वास्तविकता से उड़कर दूर जाने का आग्रह प्रकट करता है[2]। लेकिन यह स्मरण रखना चाहिए कि कीट्स अपनी प्रारंभिक कविताओं में ही पलायनवादी के रूप में प्रकट होता है

---

1. S.A. BROOKE - STUDIES IN POETRY

2. Fade away, dissolve, and quite forget
What thou amongst the leaves hast never known.
KEATS - Ode to the Nightingale

न कि बाद की तथा प्रौढ़ कविताओं में । कीट्स यह भली-भाँति जानता था कि अनुभव और वास्तविकता से ही अच्छी कविता की सृष्टि होती है । अपने भाई टोम की बीमारी और मृत्यु, अपना अनारोग्य, आर्थिक कठिनाइयाँ, अनीति एवं कटु आलोचना तथा प्रेम में निराशा आदि ने उसे जीवन का यह प्रमुख सत्य सिखा दिया । सुख से दुख एवं सौन्दर्य से कुरूपता को अलग नहीं किया जा सकता । इस सत्य के समझने पर उसे यह भी ज्ञात हुआ कि सच्चा सौन्दर्य वैषयिक नहीं, आध्यात्मिक है । अब वह यह भी समझने लगता है कि सुने सुर से मधुर है अनसुने सुर[1] । अन्त में वह हिम्मत के साथ व्यक्त करता है कि सौन्दर्य सत्य है और सत्य सौन्दर्य । ये ही पंक्तियाँ कीट्स को पलायनवादी के आरोप से बचा देती हैं । कीट्स के पत्र भी इस बात के प्रमाण हैं कि वह एक बड़ा विचारक था और जीवन की वास्तविकता से वह परिचित भी था ।

कीट्स एक सच्चा कलाकार था । उसने इस बात पर बल दिया कि अध्ययन और चिंतन के द्वारा ही कवि को अपनी शक्ति में पूर्णता को प्राप्त करनी चाहिए । कीट्स ने अपने विचारों का पालन भी किया । वह काव्य-साधना केलिए ही जीवित रहता था और उसने जो कुछ भी लिखा उसमें एक विशेष गुण विद्यमान है । उसकी सभी रचनाओं में अपनी कला के प्रति उसकी अदम्य भक्ति प्रकट होती है । अपने समकालिकों की अपेक्षा शब्दों का उसने बड़ी सावधानी से अध्ययन किया और यही कारण है कि उसकी काव्यात्मक अभिव्यक्ति या शब्दों और विचारों का सामंजस्य प्रायः अन्य कवियों की अपेक्षा अधिक पूर्ण है । उसकी प्रारंभिक कविताओं में कई दोष और कमियाँ

---

1. Heard melodies are sweet, but those unheard
Are sweeter, therefore ye soft pipes, play on.

KEATS - Ord on a Grecian Urn

अवश्य वर्तमान हैं, किन्तु उसने उसे दूर करने का भर-सक प्रयास किया और अपने महान संबोध गीत तक आते-आते वह पूर्णता के निकट पहुँच जाता है ।

भाषा पर उसका पूरा अधिकार था । जहाँ उपयुक्त लगता था, वहाँ वह नये शब्दों का प्रयोग भी आसानी से करता था । जब अन्य कवि संयुक्त शब्दों का अधिक प्रयोग करते थे कीट्स उसकी ओर कम आकृष्ट हुआ । कभी-कभी वह व्याकरण और वाक्य-विचार के नियमों का उल्लंघन भी करता दिखाई देता है । अंग्रेज़ी भाषा को रूप देनेवालों में उसका प्रमुख स्थान है । भाषा के विकास पर उसका गहरा प्रभाव परिलक्षित होता है । उसने यह भी स्पष्ट रूप से व्यक्त कर दिया कि काव्य-भाषा नित्य के बोलचाल की भाषा से एकदम भिन्न है । कीट्स का शब्द-भण्डार भी अत्यंत धनी था । सुन्दर मुहावरों के प्रयोग में वह कुशल था । उसके मुहावरों के सौष्ठव पर उसके विरोधी आलोचक भी मुग्ध हो जाते हैं और कहते हैं कि मनोहर मुहावरों के प्रयोग में कीट्स शेक्सपियर के समकक्ष है ।[1] सुन्दर शब्द-चित्र खींचने में वह सबसे आगे है । सुन्दर एवं आकर्षक अलंकार - विधान में भी कीट्स की कुशलता दृष्टव्य है । अलंकार - सौष्ठव से उसका काव्य आनन्द का खान बन जाता है । अपने ह्रस्व जीवन में ही सही अंग्रेज़ी साहित्य को संपन्न करने में कीट्स का महान योगदान रहा है ।

भारतीय काव्य में स्वच्छन्दतावाद का आरंभ

अब हमें भारतीय काव्य में स्वच्छन्दतावाद का प्रवेश व आरंभ पर दृष्टिपात करना है । पश्चिम से भारत का पहले जो संबन्ध रहा वह व्यावहारिक मात्र था । किन्तु बाद में राजनैतिक, सामाजिक और साहित्यिक क्षेत्रों में भी पश्चिम का संबन्ध दृष्टिगत होने लगा । साहित्यिक

---

1. 'In rounded perfection and felicity of phrase he is like Shakespeare'.

- MATHEW ARNOLD - Preface to 1853 poems.

क्षेत्र में पश्चिमी देशों के साथ भारत का जो संबन्ध हुआ वह इस देश केलिए अत्यधिक लाभदायक सिद्ध हुआ । भारतीय साहित्य में पश्चिम के प्रभाव में नयी-नयी प्रवृत्तियाँ पनपने लगीं ।

भारतीय-काव्य में पश्चिम के रोमांटिक काव्य का प्रभाव विशेष उल्लेखनीय है । पश्चिम के रोमान्टिक कवियों में अंग्रेज़ कवियों से ही भारतीय कवि सर्वाधिक प्रभावित हुए । कारण यह है कि पश्चिम की भाषाओं में से अंग्रेज़ी का ही यहाँ अधिक प्रचार और अध्ययन हुआ । अन्य यूरोपीय देशों के कवियों से अंग्रेज़ी के द्वारा ही हम संबन्ध प्राप्त कर सके । अतः भारतीय काव्य में अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावाद का महत्वपूर्ण प्रभाव रहा है ।

भारतीय भाषाओं में अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावाद का प्रधान और स्पष्ट प्रभाव बंगला काव्य में पड़ा, क्योंकि बंगाल में अंग्रेज़ी भाषा और साहित्य का सर्वाधिक प्रचार हुआ था । बड़े प्रतिभाशील पंडित के. एम. बेनर्जी ने 1830 ई. में यह घोषणा की थी कि पोप और ड्रैडन हिन्दू शास्त्रों से भी अधिक माननीय हैं । दूसरे विद्वान आचार्य रामतनु लाहिरी अपने छात्रों को बेण्स, कूपर, थामसन, केम्पबेल और मिल्टन की रचनाएँ पढ़कर सुनाना बहुत पसंद करते थे । 1860 ई. के करीब बंगाल में मिल्टन की "पारडैस लोस्ट" और पोप की "एस्से ओन क्रिटिसिज़्म" लोकप्रिय पाठ्यपुस्तकें थीं । यहाँ के सभी प्रमुख कवि मिल्टन, बयरण, स्काट तथा टेनीसन जैसे अंग्रेज़ कवियों के श्रद्धालु शिष्य थे । कवियश प्रार्थियों पर बयरण का प्रभाव प्रकट था, क्योंकि वे बड़े लोकप्रिय थे । स्विनबेन का भी बंगला में अच्छा आदर था । उन दिनों शेली पर अनेक कवियों का ध्यान जमा था । जस्टिस द्वारकानाथ शेली की रचनायें खूब पसंद करते थे । बेण्स की रचनायें तो उन्हें कंठस्थ ही थीं[1] ।

---

1. डॉ. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर - आधुनिक हिन्दी काव्य तथा मलयालम काव्य - पृ.55

कवीन्द्र रवीन्द्र, मैकल मधुसूदन दत्त जैसे कवियों की कृतियों में स्वच्छन्दतावाद का उद्भव हुआ ।

<u>हिन्दी और मलयालम काव्य में स्वच्छन्दतावाद का आरम्भ</u>

अंग्रेज़ कवियों में से पुराने कवि मिल्टन आदि की अपेक्षा बायरन, शेली आदि नये व स्वच्छन्दतावादी कवि युवक भारतीयों को अधिक प्रिय रहे। इस का कारण है युवक कवियों की सहज भावुकताभरी मनोवृत्ति । यही नहीं, स्वच्छन्दतावादी अंग्रेज़ कवितायें सरल थीं । सरल, सरस और प्रेम-प्रधान कविताओं के अनुवाद में युवा कवियों को विशेष आनंद आना स्वाभाविक था । हमने बंगला का जो उदाहरण देखा, वही सब अन्य भारतीय भाषाओं में भी स्वीकार किया गया । इसलिए हिन्दी व मलयालम में भी यही क्रम चला था[1] ।

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में हिन्दी काव्य पर पश्चिमी प्रभाव परिलक्षित होने लगा और एक नवीन काव्यधारा का उदय भी हुआ । इसके पहले हिन्दी काव्य में रीतिकाल चल रहा था जिसमें शृंगार रस के सांगोपांग वर्णन की भरमार थी । रीतिकाल में प्रेम की उद्दाम वासनापूर्ण कविता ही अधिक लिखी गयी थी । सच्ची प्रकृति का तो मानों काव्य-क्षेत्र से बहिष्कार हो गया । कविगण अपने चारों तरफ की सामाजिक एवं दैनिक घटनाओं से भी आकृष्ट नहीं हो रहे थे । वे अपने काव्य में नायक-नायिकाओं की प्रेम - क्रीडा और विरह - व्यथा के वर्णन में व्यस्त थे । देश के सामान्य जीवन से उनका कोई संपर्क नहीं रह गया[2] । किन्तु स्वच्छन्दतावादी काव्य की बात यह नहीं है । हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवि पुरानी काव्य प्रथाओं से एकदम स्वच्छंद निकले । प्रकृति की ओर

1. डॉ॰एन॰ई॰विश्वनाथय्यर-आधुनिक हिन्दी काव्य और मलयालम काव्य - पृ॰ 55

2. के॰एन॰ शुक्ल आधुनिक काव्य धारा - पृ॰ 11

वे अधिक आकृष्ट हुए । जन-साधारण के जीवन व समस्याओं को लेकर वे काव्य करने लगे । वे जन-साधारण की भाषा को अपनाने लगे । वे मानव और प्रकृति के सच्चे प्रेमी निकले । इस प्रकार की स्वच्छंदता का आभास पहले - पहल पं॰ श्रीधर पाठक की कविताओं में दिखाई पड़ा । यहाँ से हिन्दी में स्वच्छंदतावाद का आरंभ होता है । केरल में अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रचार के साथ ही यहाँ के लोगों को अंग्रेज़ी साहित्य से भी परिचित होने का अवसर मिला । शेक्सपियर, मिल्टन, टैनीसन आदि कवियों की रचनाएं पढकर यहाँ के छात्र अंग्रेज़ी साहित्य की ओर आकृष्ट हुए । इसी समय श्री॰ए॰आर॰ राजराजवर्मा साहित्यिक-क्षेत्र में अवतरित हुए । वे संस्कृत के बड़े विद्वान थे । उन्हें अंग्रेज़ी भाषा और साहित्य के अध्ययन करने का अवसर प्राप्त हुआ इसके साथ ही वे संस्कृत के परंपरावाद के संकुचित सीमा का उल्लंघन करके नयी स्वच्छंद काव्य-धारा की ओर अग्रसर हुआ । मलयालम का प्रथम स्वच्छंदतावादी होने का श्रेय भी उन्हें प्राप्त हुआ । इनके युग तक मलयालम काव्य में "द्वितीयाक्षरप्रास" अनिवार्य समझा जाता था । राज-राजवर्मा ने इस का तिरस्कार किया । कवि - समय सवनिश्चित प्राचीन रूढियों में परिवर्तन हुआ । इस घटना से मलयालम में स्वच्छंदतावादी प्रवृत्ति का आरंभ हुआ । ऐतिहासिक दृष्टि से राजराजवर्मा का "मलयविलासम्" {सन् 1895 ई॰} मलयालम का सर्वप्रथम स्वच्छन्दतावादी काव्य माना जाता है । यह एक लघुकाव्य है । एक बार मद्रास से ट्रेलाँड़ी में घर लौटते हुए कवि ने मलयपर्वत के दृश्यों का जो आनंद उठाया वही इस काव्य का विषय है । प्रकृति पर चेतनता के आरोप की स्वच्छंदतावादी काव्य-प्रवृत्ति इसमें परिलक्षित है ।

****

दूसरा अध्याय

कविता में युगान्तर - हिन्दी और मलयालम का स्वच्छन्दतावादी काव्य

साहित्यिक पृष्ठभूमि

भारतेन्दु युग

हिन्दी साहित्य का आधुनिक युग भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से आरंभ होता है। आधुनिकता की ओर पहले मोड़ के दर्शन भारतेन्दु के समय से होते हैं। भारतेन्दु युग के आरंभ तक हिन्दी कविता रीति कालीन आत्मा से ही उच्छ्वासित थी। रीतिकालीन काव्य में मानव शरीर के प्रति अधिक आकर्षण था। मादक और मांसल शृंगार वर्णन उसमें अपनी सीमा का अतिक्रमण कर चुका था। राधाकृष्ण की आड़ में पार्थिव नर-नारियों के वासनापूर्ण प्रेम का वर्णन उसमें किया गया था। जीवन के विभिन्न व्यापारों और भावों की उपेक्षा की गयी थी। सारांश यह कि कविता में एकांगीपन था।

रीतिकालीन निर्जीव और बंधि बंधाये अश्लील प्रेम का चित्रण करनेवाली कविता से भिन्न जीवन के स्वच्छंद वायुमण्डल में साँस लेनेवाले काव्य का समारम्भ भारतेन्दु युग में हुआ । भारतेन्दु शृंगार की गन्दी नाली में बहनेवाली काव्य धारा को जीवन के विस्तृत मैदान की ओर ले गये । भारतेन्दु और उनके मण्डल के कवियों ने कविता के भाव-क्षेत्र में क्रान्ति की । उन्होंने कविता में नये - नये विषयों का समावेश कर उसके भाव क्षेत्र का अपूर्व विस्तार किया । देश की आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक समस्याओं का चित्रण कविता में होने लगा । इस नयी धारा की कविता के भीतर जिन नये - नये विषयों के प्रतिबिंब आये, वे अपनी नवीनता से आकर्षित करने के अतिरिक्त नूतन परिस्थितियों के साथ हमारे मनोविचारों का सामंजस्य भी करते चले ।[1]

इस नवीन काव्य धारा में सब से ऊँचा और व्यापक स्वर देश भक्ति का था । देश-हित से सम्बन्धित समाज सुधार, मातृभाषा का उद्धार, भारतीय संस्कृति का उत्कर्ष आदि विभिन्न विषयों के उस काल खण्ड में कवियों की वाणी से गूंज उठे । उस युग की सामाजिक कविता ने जनता के सामने उपयुक्त और स्वस्थ दृष्टिकोण उपस्थित किया । इसी प्रकार राजनैतिक कविता ने जन-जीवन और साहित्य का जो संबन्ध रीति-काल काल में शिथिल पड गया था, वह फिर से घनिष्ठ हो गया ।[2] भारतेन्दु ने हिन्दी कविता को नये नये विषयों की ओर उन्मुख किया । परन्तु कविता में नवीन अभिव्यंजना शैली का सूत्रपात नहीं किया ।

1• हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्रशुक्ल-पृ•588

2• आधुनिक काव्यधारा - डॉ•केसरीनारायण शुक्ल - पृ•23

तात्पर्य यह है कि कथन शैली पुरानी थी । भाषा वही पुरानी ब्रजभाषा थी । यद्यपि भारतेन्दु ने खड़ी बोलीमें भी कुछ कविताएं रची थीं तथापि उनकी आत्मा ब्रजभाषा में ही अधिक रमी । खड़ी बोली केवल गद्य के क्षेत्र में स्थान प्राप्त कर पायी परन्तु कविता के क्षेत्र में नहीं । कविता के क्षेत्र में खड़ी बोली की प्रतिष्ठा द्विवेदी युग में हुई ।

भक्तिकाल के योग, साधना, तप, वैराग्य, दिव्य प्रेम और आदर्शों के ऊपर जीवन को बलिदान करने के स्थान पर "परनारी संयोग" की नाना विधियों के आविष्कार [नायिकाभेद] और भोगविलास के विविध पक्षों के वर्णन में ही काव्य सीमित हो गया । कविगण समाज के सामान्य व्यक्ति की भावनाओं की ओर से उदासीन हो गया । भारतेन्दु युग में हिन्दी - काव्य की इसी कमी की पूर्ति की ओर कवियों का ध्यान आकर्षित हुआ[1] । वस्तुत: भारतेन्दु के काव्य में उनके आत्म-विसर्जन की स्पष्ट अभिव्यक्ति हुई है । उनके काव्य का सब से सुन्दर आभूषण है आयासहीनता । अपनी चेतना के मंथन को व्यक्त करने में कवि को पूर्ण सफलता मिली है ।

भारतेन्दु के व्यक्तित्व में सूर, तुलसी, कबीर, बिहारी, देव और घनानंद ही नहीं लोक कवियों की भी समग्र चेतना अवतरित हुई थी । भारतेन्दु का व्यक्तित्व सम्पूर्ण मध्यकालीन काव्य के श्रेष्ठ तत्वों का प्रतिनिधित्व करता है और दूसरी ओर आधुनिक युग के भावी लेखकों का विधायक भी बनता है । भारतेन्दु प्रकाश स्तम्भ नहीं थे वे अक्षय प्रकाश के स्रोत थे जिन से क्रमश: प्रकाश स्तम्भों की सृष्टि हुई और होती जाएगी ।

---

1. डॉ॰ विश्वंभर नाथ उपाध्याय - आधुनिक हिन्दी कविता-सिद्धांत और समीक्षा - पृ॰16

भारतेन्दु के काव्य में सूर की तन्मयता और विनोदवृत्ति, तुलसीदास का लोकहित, कबीर जैसी आलोचनात्मक दृष्टि, सूफियों जैसी आर्द्रता और मस्ती तथा लोक कवियों जैसी अभिव्यक्ता मिलती है।

मलयालम में वेण्मणि युग

जिस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तर भाग में हिन्दी कविता ने भारतेन्दु युग में क्रान्ति देखी उसी प्रकार मलयालम कविता ने भी वेण्मणि युग के द्वारा क्रान्ति के दर्शन किये। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में मध्य-केरल के मुख्य नम्पूतिरी-ब्राह्मणों द्वारा मलयालम कविता में क्रान्ति उपस्थित हुई। उन क्रान्तिकारी कवियों में वेण्मणि कवि प्रसिद्ध हैं। पिता वेण्मणि नम्पूतिरी और पुत्र वेण्मणि नंपूतिरी इन दोनों कवियों ने मिलकर मलयालम काव्य धारा में युग-परिवर्तन कर दिया। कई कवियों ने उनका अनुकरण किया और "वेण्मणि कवियों" का एक मण्डल सा बन गया। वेण्मणि नंपूतिरि पक्के श्रृंगारी कवि के रूप में प्रसिद्ध हुए। इसी कारण वेण्मणि का नाम तक श्रृंगार रस का पर्यायवाची बन गया। ठेठ मलयालम में रसपूर्ण पदों की रचना में इन कवियों की विशेष कुशलता थी। पुराने काव्य रसिकों को मुग्ध करने में ये कवि अत्यंत सफल निकले। अतः वेण्मणि के मुक्तक श्रृंगार-पद्य काव्य-जगत में विशेष स्थान प्राप्त कर सके।

भारतेन्दु युग के हिन्दी काव्य के परिवर्तन से वेण्मणि युग की मलयालम कविता का परिवर्तन भिन्न रूप में हुआ। भारतेन्दु युग में भावक्षेत्र में परिवर्तन हुआ था। परन्तु भाषा-शैली में विशेष परिवर्तन उपस्थित न हुआ। किन्तु मलयालम में वेण्मणि युग में जो परिवर्तन आया

वह भाषा शैली का था, विषय का नहीं। यही दोनों में अन्तर है। मलयालम में अब तक संस्कृतगर्भित प्रौढ़ भाषा में कविता की जाती थी। कैरमणि युग के पूर्व मलयालम में कई चम्पुओं और आट्टकथाओं - कथकलि काव्य - का प्रचुर परिमाण में प्रणयन हुआ था। चम्पुओं और कथकलि काव्यों की भाषा में मलयालम का सहज रमणीय रूप दृष्टिगोचर नहीं हुआ यद्यपि मलयालम के तुलसीदास एषुत्तच्छन ने संस्कृत और मलयालम के मणि-कांचन योग से मणिप्रवाल भाषा शैली की प्रतिष्ठा की थी तथापि चम्पुओं के प्रणेताओं और कथकलि काव्यों के रचयिताओं ने उस शैली का तिरस्कार किया। उन्होंने मलयालम की अपेक्षा संस्कृत की ओर अधिक झुकते हुए साहित्य की सृष्टि की। उनकी कृतियों में संस्कृत और मलयालम का कृत्रिम तथा अनमेल रूप देखने को मिलता है। संस्कृत और मलयालम को मिलाने की उनकी प्रणाली अत्यंत कृत्रिम और भद्दी थी। कथकलि काव्यों के प्रणेता संस्कृत के बड़े विद्वान थे। वे संस्कृत की सघन समास बहुला शैली को मलयालम के कोमल शब्दों के कन्धों पर रखकर उनकी हड्डियाँ तोड़ते थे। उनकी रचनाओं में संस्कृत और मलयालम के शब्द दूध-पानी के समान मिले नहीं हैं, तेल-पानी के समान पृथक-पृथक पड़े हैं। उन्होंने मलयालम शब्दों के साथ संस्कृत के प्रत्ययों का प्रयोग कर कहीं-कहीं अपनी कविता को हास्यास्पद भी कर दिया है। इस समय तक प्रचलित काव्य भाषा की इस कृत्रिम शैली के विरुद्ध "वेण्मणि" कवियों ने क्रांति मचायी और जन-जीवन में प्रचलित मलयालम के सहज कोमल शब्दों को चुनकर उन्होंने कविता की। उनकी विनोद के पुट से युक्त प्रसादपूर्ण प्रवाहमयी कविताओं का बड़ा प्रचार हुआ और ये कवि अत्यंत लोकप्रिय भी हो गये।

भारतेन्दु युग की हिन्दी कविता से वेण्मणि युग की मलयालम कविता इसी लिए भिन्न है कि जहाँ भारतेन्दुयुग में भाषा शैली में कोई नवीनता नहीं दिखाई दी वहाँ वेण्मणि युग की मलयालम कविता ने जनता की बोलचाल की भाषा की कोमलकान्त पदावली को स्थान दिया। भारतेन्दु युग की हिन्दी कविता वेण्मणि युग की मलयालम कविता से इसलिए भी भिन्न और विशिष्ट है कि जहाँ "वेण्मणि कवियों" की कृतियों में भावक्षेत्र में कोई नवीनता नहीं है, वहाँ भारतेन्दु युग की कविता में विषय और भाषा का विस्तार है। भारतेन्दु युग के कवियों ने देश-प्रेम, समाज-सुधार जैसे विषयों को अपनी कविताओं में स्थान देकर सामाजिक तथा राजनैतिक चेतना की अभिव्यक्ति की। किन्तु वेण्मणि कवियों की कृतियों में न कोई नवीन सामाजिक भावना है न राजनैतिक चेतना। कारण स्पष्ट है कि वेण्मणि और उनकी मण्डली के कवि समाज के उच्चवर्ग से आये थे। वे बड़े-बड़े भूमिपति थे जिनका संबन्ध देशी राजाओं तथा राज-कुटुम्बों से था। इसीलिए वे अंग्रेजी शासकों तथा उनके मित्र देशी नरेशों के समर्थक थे और उनके कृपापात्र भी थे। इसके अतिरिक्त उत्तर भारत के समान केरल में उस समय राजनैतिक चेतना जागृत नहीं हुई थी। समाज-सुधार पर भी उन कवियों की दृष्टि नहीं पहुँची थी। समाज के उच्चतल में सुखद जीवन बितानेवाले विलास लोलुप उन भाग्यवान कवियों ने अपनी उमंग की तरंगों में बहते हुए कवितायें रचीं। उनकी रचनाओं में अतिशय शृंगारिकता थी। वे सब कवि स्थूल मादक शृंगार-वर्णन में तत्पर थे। इस दृष्टि से वे हिन्दी के रीति कालीन कवियों के समीप हैं। उनकी रचनाओं में यत्र-तत्र भक्ति का भी पुट है। इस प्रकार कभी वे प्रेयसी के घर के चारों ओर चक्कर काटते दिखाई पड़ते हैं तो कभी देवमन्दिर की मूर्तियों के सामने प्रणाम करते दिखाई देते हैं। संस्कृत गर्भित क्लिष्ट शैली का मोह छोड़कर उन्होंने सहज कोमल मलयालम शैली में कविता का प्रणयन किया। यही वेण्मणि कवियों की महत्ता है।

हिन्दी में द्विवेदीयुग

आधुनिक हिन्दी कविता का द्वितीय उत्थान द्विवेदी युग से आरम्भ होता है । महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने इस युग का आरम्भ और निर्माण किया । उन्होंने एक ओर काव्य भाषा में परिवर्तन किया तो दूसरी ओर काव्य विषयों का और भी विस्तार कर सामाजिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक चेतना की शक्ति देकर उसे समृद्ध किया । शताब्दियों से सर्वस्वीकृत और प्रचलित काव्य-भाषा को उसके सम्पूर्ण अलंकरण-उपकरण के साथ अतीत की वस्तु बनाकर एक अप्रयुक्त और अपरिमार्जित भाषा को उसकी जगह प्रतिष्ठित करा देना एक महान निर्माण से कम नहीं था । ब्रजभाषा को काव्य-क्षेत्र से अपदस्थ कर उसके स्थान पर खड़ीबोली को प्रतिष्ठित कर महावीरप्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी काव्य के इतिहास में युग-परिवर्तन कर दिया । द्विवेदी जी ने अपनी पत्रिका "सरस्वती" के द्वारा खड़ी बोली में कविता करने की प्रेरणा दी । उन्होंने स्वयं खड़ी-बोली में कविताएं रचीं तथा अन्य कवियों को भी प्रेरित किया । उनके नेतृत्व में कविता ने अपनी कई स्थितियां और अवस्थायें देखीं । प्रारम्भ में वह इतिवृत्तात्मक नीतिप्रधान तथा उपदेशात्मक रही । फिर वह भावात्मक कोटि में परिणत होने लगी । आरम्भ में वह प्रसादपूर्ण होने पर भी सरस नहीं थी । इसीलिए इतिवृत्तात्मकता तथा उपदेशात्मकता की अतिशयता से इस युग की कविता भाव-प्रवण मन को मुग्ध न कर सकी ।

द्विवेदी जी पर मराठी साहित्य का बड़ा प्रभाव पड़ा था । मराठी कविता में अधिकतर संस्कृत के छन्दों का प्रचार होता है ।

इस मराठी कविता के प्रभाव और अपनी सहज संस्कृतप्रियता के कारण द्विवेदी जी संस्कृत के छन्दों को हिन्दी कविता में स्थान देने के पक्षपाती थे । इस प्रकार खड़ीबोली को काव्य-भाषा बनाकर तथा संस्कृत के छन्दों को भी काव्य में स्थान देकर उन्होंने काव्य-क्षेत्र की गतानुगतिकता का विरोध किया । द्विवेदी का विचार था कि गद्य और पद्य की भाषा में अन्तर नहीं होना चाहिए । दोनों का पद-विन्यास एक ही प्रकार होना चाहिए । शायद उनका यह विचार रहा होगा कि कविता की कृत्रिमता दूर हो और वह जीवन के अधिक समीप हो । किन्तु उनके इस दृष्टिकोण का यह परिणाम हुआ कि कविता गद्यवत् हो गयी और उसमें स्थूलता और नीरसता आ गयी ।

द्विवेदीयुग की कविता में सामाजिक भावना प्रमुख थी । आदर्शसमाज का अंकन कवियों को प्रिय था । उन्होंने आदर्श समाज के निर्माण केलिए अनेक उपदेश दिये हैं । अतः उनकी कविता में उपदेशात्मकता की प्रवृत्ति रही ।

द्विवेदी युग की कविता में वैयक्तिकता का अभाव रहा । व्यक्ति के अन्तर्जगत् के सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावों की ओर कवियों की दृष्टि नहीं गयी । बाह्यार्थ निरूपक कविताओं की रचना में कवि तत्पर थे । वे स्थूल जगत् के प्रश्नों से ही परिचित थे और उन प्रश्नों को छन्दोबद्ध करने में अपने कर्तव्य की इतिश्री समझते थे । अन्तर्जगत् की समस्याओं की ओर उन कवियों ने देखा नहीं । कारण यह था कि देश तथा समाज में आदर्श की स्थापना करना उनका उद्देश्य था । वे व्यक्ति के मन की ग्रंथियों को खोलने के स्थान पर समाज और राष्ट्र की समस्याओं को सुलझाने में लगे थे । आदर्श की स्थापना करके समाज तथा राष्ट्र के

कल्याण करने की प्रवृत्ति उस समय के समस्त कवियों में दृष्टिगोचर होती है । उन कवियों की इस साधना में भारतीय जन जीवन के नवोत्थान के साथ-साथ पश्चिम के मानवतावाद तथा बुद्धिवाद ने भी प्रेरणा पहुँचाई थी स्फुट कविताओं के उद्बोधन से लेकर वृहद् काव्यों के चरित्रांकन तक सब कृतियों में कवियों की आदर्शवादिता स्पष्ट हुई है । प्रिय प्रवास में राधाकृष्ण की जीवन कथा के वर्णन के द्वारा "हरिऔध" ने अपने आदर्श का अंकन किया है । कृष्ण के माध्यम से एक लोकनायक का और राधा के माध्यम से एक लोकसेविका बाला का आदर्श प्रतिष्ठित हुआ है । इसी प्रकार "जयद्रथ-वध" में एक देश भक्त प्राणत्यागी वीर का एवं मिलन और पथिक में देश सेवक का आदर्श चित्रित हुआ है । मैथिलीशरण गुप्त कृत "भारत-भारती" की उद्बोधनात्मक पंक्तियों में भी कवि का आदर्शवाद गूंजा है । इस प्रकार स्पष्ट है कि उस काल के कवियों ने व्यक्ति के स्थान पर समाज को सामने रखकर काव्य-प्रणयन किया था और इसी कारण उनकी रचनाओं में जिस मात्रा में सामाजिक चेतना मुखरित है उस मात्रा में वैयक्तिक भावनायें स्पन्दित नहीं हैं ।

उस काल के कवियों की आदर्शवादिता प्रेम के प्रतिपादन में भी परिलक्षित होती है । रीतिकाल की अनियंत्रित श्रृंगारिकता की प्रतिक्रिया स्वरूप द्विवेदी युग की कविता में प्रेम के संयम पर अधिक बल दिया गया । वे आदर्शवादी कवि अमर्यादित और अवांछनीय श्रृंगारिक मनोवृत्ति की उच्छृंखलता से समाज का अमंगल करना नहीं चाहते थे । इसलिए उन कवियों ने अपनी कृतियों में प्रेम के आदर्श की प्रतिष्ठा की है । उस युगमें रचित जयशंकर प्रसाद के "प्रेम-पथिक" काव्य में प्रेम की पवित्रता की प्रतिष्ठा हुई है । उसी प्रकार रामनरेश त्रिपाठी के "मिलन" तथा "पथिक" में भी आदर्श प्रेम अभिव्यक्त हुआ है ।

जीवन और कला की इस अतिशय आदर्शवादिता के फलस्वरूप कवि स्वच्छंद चित्तवृत्तियों का चित्रण नहीं कर पाये। इतिवृत्तात्मक काव्य के प्रणयन से कवि परितृप्त होते थे। इसीलिए कल्पना का अभाव, जीवन की मानसिक गंभीरता का त्याग तथा ऊपरी बातों के विवरण देने की प्रवृत्ति उस युग में दिखलायी पड़ी।

द्विवेदीकाल में कवि को जो भाषा उपलब्ध थी, वह गद्य की भाषा, खड़ी बोली थी जो अभी-अभी काव्य-क्षेत्र में खड़ी हुई थी। चिरकाल से काव्य-क्षेत्र में प्रयुक्त न होने के कारण भावोल्लास को सफलता पूर्वक अभिव्यक्त करने योग्य उस में न कोमलता थी न मधुरता। ऐसी दशा में कविता छन्द-बन्धन की कोटि से ऊपर नहीं उठ पायी। द्विवेदी युग की उन इतिवृत्तात्मक कविताओं से रसकण भले ही न छलके हों परन्तु आज की हिन्दी कविता की प्रगति के चरण-चिह्न के रूप में वह अवश्य स्मरण की जायगी। द्विवेदीयुग के द्वारा वही मानवमूल्य स्वीकृत हुए थे जो हमारे भारतीय जीवन के आधार रहे हैं। मूल्यों की स्पष्टता के विषय में द्विवेदी युग अब भी आदर्श हो सकता है।[1]

मलयालम में केरल वर्मा युग

आधुनिक मलयालम कविता के विकास में केरल वर्मा वलिय कोयित्तंपुरान का महत्वपूर्ण स्थान है। सन् 1845 से 1915 तक उनका जीवनकाल है।

---

1. डॉ. विश्वंभरनाथ उपाध्याय - आधुनिक हिन्दी कविता सिद्धांत और समीक्षा - पृ. 149

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तर भाग के वेण्मणि कवियों के प्रभाव में आये बिना उन्होंने स्वतंत्र पथ का अन्वेषण किया और वेण्मणि युग के बाद काव्य के क्षेत्र में अपने युग की प्रतिष्ठा की । केरल वर्मा ने चम्पू काव्यों एवं कथकली काव्यों तथा वेण्मणि कृतियों की शृंगार की उन्मादमयी उक्तियों से जन-मानस को नाटकों की ओर आकर्षित किया । केरलवर्मा ने सर्व प्रथम कालिदास के "शाकुन्तलम्" का मलयालम में अनुवाद करके नाटकों के प्रणयन का सूत्रपात किया । शाकुन्तलम् को पहली बार मलयालम में अनुवाद करने के कारण उनको केरल कालिदास का नाम प्राप्त हुआ । केरल वर्मा का अनुकरण कर कई कवियों ने संस्कृत के अनेक नाटकों का मलयालम में अनुवाद किया । चात्तुक्कुट्टि मन्नाडियार, ए.आर. राज-राजवर्मा, कुञ्जिक्कुट्टन तम्पुरान्, कुण्डूर नारायण मेनोन आदि कवियों के नाम सदा अमर रहेंगे । इस प्रकार सर्वप्रथम नाटकों के प्रणयन की रुचि साहित्यकारों में उत्पन्न करने का श्रेय केरलवर्मा को है ।

वेण्मणि कवियों की तत्कालीन प्रचलित ललित कोमल भाषा शैली को छोड़कर केरलवर्मा ने संस्कृत गर्भित प्रौढ़ शैली अपनायी । केरल वर्मा संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे । उन्होंने संस्कृत में भी कई कृतियों का प्रणयन किया था । इसीलिए संस्कृत के प्रभाव से वे अपने को बचा न सके । उन्होंने संस्कृत और मलयालम के शब्दों का योग करके मणिप्रवाल शैली में कविता लिखी । फिर भी उस मिश्रित भाषा में संस्कृत की मात्रा ही अधिक रही । इसलिए केरल वर्मा - युग के भी कई कवियों ने उनकी प्रौढ़ संस्कृतमयी भाषा का तिरस्कार करके वेण्मणि कवियों की सहज मलयालम की शैली को ही स्वीकार किया ।

द्विवेदी-युग की हिन्दी कविता से केरल वर्मा युग की मलयालम कविता भिन्न है। द्विवेदीयुगीन हिन्दी कविता के समान केरलवर्मा-युग की मलयालम काव्यधारा सामाजिक तथा राजनैतिक चेतना को अपने किनारों में समेट कर नहीं बही। कारण यह था कि उस युग के कवि भी सामन्त वर्ग के बीच से आये हुए थे। वस्तुतः उस युग के कवि शिरोमणि केरलवर्मा का संबन्ध ट्रावनकोर के राजवंश से था। उनकी पत्नी राजकुटुम्ब की कन्या थी। इस युग के दूसरे महान कवि और आचार्य केरल वर्मा के भानजे राजराजवर्मा थे। इस प्रकार उस समय काव्य क्षेत्र की बागडोर इन लब्धप्रतिष्ठ कवियों के हाथों में थी। ऐसी दशा में इस युग के कवियों की वाणी में राजनैतिक सुधार के स्वर का गूंजना संभव नहीं था। क्योंकि देशी नरेशों तथा अंग्रेज़ी शासकों के विरोध में बोलने की वे कल्पना भी नहीं कर सकते थे। उस युग के अन्त में आनेवाले कुमारन आशान् ने सर्वप्रथम सामाजिक सुधार की भावना को वाणी दी और राजनैतिक चेतना के प्र सार की पृष्ठभूमि तैयार की। उनके पश्चात् महाकवि वल्लत्तोल ने राजनैतिक जागृति का उच्च स्वर में गायन किया।

द्विवेदी-युग की सूक्ति-कविताओं तथा उपदेशात्मक कोटि के निबन्धों के समान मलयालम में जीवन के अनुभव जन्य सत्य को अभिव्यक्त करनेवाली सूक्तियों एवं उपदेशयुक्त कविताओं का प्रणयन इस युग में हुआ[1]। द्विवेदी युग की हिन्दी कविता की इतिवृत्तात्मकता, उपदेशात्मकता और स्थूलता केरल वर्मा युग की मलयालम कविता में भी दिखायी देती है। लेकिन द्विवेदी युग की हिन्दी कविता में जो आदर्शवादिता दिखायी पड़ती है वह केरल वर्मा युग की मलयालम क विता में दृष्टिगोचर नहीं होती।

---

1. ए.डी. हरिशर्मा - के.सी. केशवपिल्ले - पृ. 138

द्विवेदी -युग में रीतिकाल के श्रृंगार की प्रतिक्रिया के रूप में श्रृंगार की संयमित रूप का ही चित्रण हुआ है । किन्तु केरलवर्मा युग की कविता में श्रृंगार के उस मर्यादित रूप के दर्शन नहीं होते । मलयालम कविता में सर्वप्रथम श्रृंगार का अत्यंत पवित्र रूप कुमारन आशान की कविता में ही प्रस्फुटित हुआ ।

केरल वर्मा युग के अन्त होने के पूर्व मलयालम में संस्कृत का अनुकरण और अनुसरण करनेवाले कई महाकाव्यों की रचना हुई । इन महाकाव्यों में कवियों की कोई भी नई दृष्टि नहीं दिखायी दी । संस्कृत के महाकाव्यकारों के चरण-चिह्नों पर चलते हुए इनकी रचना हुई है । संस्कृत के काव्यशास्त्र में बताये गये समस्त नियमों का पालन कर प्रसिद्ध पौराणिक कथावस्तु को लेकर लिखे गये इन वर्णनात्मक विशालकाय काव्यों में मानव-मन के सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति नहीं हुई । प्राचीन परंपरा के अनुसार कवि स्थूल कथा के प्रतिपादन से संतुष्ट हो जाते थे । ऐसा प्रतीत होता है कि इन महाकाव्य प्रणेताओं में बहुतेरे कवियों का उद्देश्य महाकवि की पदवी प्राप्त करना था । "रामचन्द्रविलासम", "रुक्मांगद चरितम", "उमाकेरलम", "केशवीयम", "चित्रयोगम", "पाण्डवोदयम", आदि उस काल के कुछ महाकाव्य हैं । इन महाकाव्यों में उमाकेरलम में ऐतिहासिक कहानी को स्थान दिया गया है । यद्यपि चित्रयोगम की कथावस्तु कल्पित है तथापि न उसके चरित्र-चित्रण में कोई नवीनता है न कथन शैली में । ये कवि संस्कृत के अनुकरण पर उपमाओं, उत्प्रेक्षाओं तथा उल्लेखों से पंक्ति-पंक्ति को सजाने में जितने सचेष्ट हैं, उतने मानव जीवन की नाना रसभरी कथा कहने में तत्पर नहीं । सारांश यह कि केरलवर्मा युग के इन कवियों की कृतियों में उदात्त चिन्तन और उत्कृष्ट आयोजना से ही ये कवि सब को आकृष्ट कर देते हैं[1] ।

---

1. पी.के. परमेश्वरन नायर - मलयालम साहित्य चरित्रम - पृ.166

मलयालम कविता के इतिहास में केरल वर्मा युग महाकाव्यों का युग समझना चाहिए । क्योंकि उस कालखण्ड में जिस भारी संख्या में महाकाव्यों का प्रणयन हुआ उतनी अन्य साहित्यिक रचनाओं का नहीं । उन महाकाव्यों के साथ कतिपय मुक्तक श्लोकों की भी रचना की गयी थी । उन श्लोकों में स्थूल अस्वस्थ श्रृंगारिक मनोवृत्ति लक्षित होती थी । महाकाव्यों में भी श्रृंगार का प्रसंग आने पर उन कवियों की अदम्य श्रृंगारिकता छलक उठती थी । उस समय के नटुवत्तु महन नंपूतिरि, ओट्टुविल कुंञ्ञुकृष्ण मेनोन, रामन्निलयत्तु आदि कवियों ने अपनी मुक्तक रचनाओं में श्रृंगार का स्थूल मादक चित्रण किया है[1] । श्रृंगारिकता की अस्वस्थ मनोवृत्ति से कलुषित उस कालखण्ड के अन्त में पदार्पण कर कुमारन आशान ने श्रृंगार संबन्धी अपने स्वस्थ दृष्टिकोण का परिचय दिया और साहित्य तथा जीवन का कल्याण किया ।

कुमारन आशान के पूर्व केरलवर्मा युग के कुछ कवियों ने खण्ड काव्य लिखे थे । उनमें के॰सी॰ केशवपिल्ले, ए॰आर॰ राजराजवर्मा और सी॰एस॰ सुब्रह्मण्यन पोट्टी के नाम स्मरणीय हैं । के॰सी॰ केशवपिल्ले ने "आसन्न मरण चिन्ताशतकम्" की रचना द्वारा मरणासन्न व्यक्ति के मन में उमड़ने वाले विचारों का सुन्दर वर्णन किया है । "ओरु विलापम्" में सुब्रह्मण्यन् पोट्टी ने अपने पुत्र की मृत्यु से जनित वेदना को वाणी दी है । ए॰आर॰ राजराजवर्मा का "मलयविलासम" स्वच्छन्दतावाद का आभास देनेवाला प्रथम खण्डकाव्य है । उसमें प्रकृति-सौन्दर्य के दर्शन से कवि हृदय में उद्भूत भाव-तरंगों का चारु चित्रण है । ये खण्डकाव्यकार भी संस्कृत की प्राचीन काव्य पद्धति से पूर्ण रूपेण मुक्त नहीं थे ।

---

1. उल्लूर एस॰ परमेश्वर अय्यर - केरल साहित्य चरित्रम-चौथा भाग पृ॰466 - 519 - 536

यद्यपि राजराजवर्मा में स्वच्छन्दतावादी का क्षीण आभास था तथापि वे भी संस्कृत की प्राचीन काव्य-पद्धति के बंधन से मुक्त नहीं थे । इतना ही नहीं, उन समस्त खण्डकाव्यों में भावों की गहराई की कमी थी कुमारन आशान के आगमन के बाद ही मलयालम में नवीन शैली के खण्ड काव्यों का पथ प्रशस्त हुआ ।

केरलवर्मा के युग में गीति-काव्य का क्षेत्र बिलकुल सूना पड़ा था । वस्तु वर्णन को ध्येय मानकर चलनेवाले तत्कालीन कुछ कवियों के कतिपय श्लोक मिल जाते हैं । वे मुक्तक श्लोक भावोच्छ्वास से भरे नहीं हैं । उनमें वस्तु - वर्णन की भद्दी प्रणाली ही दृष्टिगोचर होती है । इसीलिए वे मुक्तक श्लोक गीति-काव्य की कोटि में नहीं आते । जिस युग में स्थूलता और इतिवृत्तात्मकता की प्रवृत्ति प्रमुख थी, उस युग में आत्माभिव्यक्ति की कविता की रचना संभव भी नहीं थी । गीतों का प्राण वैयक्तिकता है, आत्माभिव्यक्ति है । वह युग वैयक्तिकता या आत्माभिव्यक्ति का नहीं था । आशान के प्रादुर्भाव के पश्चात् मलयालम कविता में आत्माभिव्यक्ति का युग आरम्भ हुआ ।

कविता में युगान्तर - स्वच्छन्दतावादी काव्य धारा

हिन्दी और मलयालम के काव्य-क्षेत्र में नवीनता के दर्शन स्वच्छन्दतावाद के रूप में हुए । हिन्दी में जयशंकर प्रसाद की कविताओं में ही स्वच्छन्दता का सौन्दर्य पूर्णत: स्फुरित हुआ । मलयालम में कुमारन आशान की कविताओं में ही नूतन स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति परिलक्षित हुई । हिन्दी और मलयालम साहित्य के इतिहास में इस दृष्टि से इन युगल कवियों का महत्त्वपूर्ण स्थान है ।

हम ने देखा कि हिन्दी और मलयालम की स्वच्छन्दतावादी कविताओं पर अंग्रेज़ी की रोमान्टिक कविता का प्रभाव पड़ा है। हिन्दी पर रोमान्टिक प्रवृत्ति का प्रभाव सीधे अंग्रेज़ी से न आकर बंगला से आया है। बाद में अंग्रेज़ी कविता ने इस को और भी शक्ति पहुँचायी मलयालम में रोमान्टिक प्रवृत्ति अंग्रेज़ी से आयी। क्योंकि बंगाल के समान केरल में भी अंग्रेज़ी का प्रचार पहले हुआ था। 18 वीं शताब्दी के अन्त में फ्रांस में जो राज्य-क्रांति हुई उसने यूरोप की पुरानी संस्कृति तथा विचारधारा को बिलकुल बदल दिया। एक नूतन दृष्टिकोण का उदय हुआ। प्राचीन आचार व रूढ़ियाँ, धार्मिक आस्था और परंपरागत सामाजिक संस्कार समाप्त हो गये, नवीन जीवन का स्वर गूँज उठा। इस महान परिवर्तन की प्रेरणा से एक अभिनव साहित्यिक प्रवृत्ति उद्भूत हुई जो कि रोमांटिसिज़्म-स्वच्छन्दतावाद-के नाम से जानी जाती है।

अंग्रेज़ी साहित्य में रोमांसवाद के आविर्भाव के पूर्व कविता गतानुगतिकता, यांत्रिकता, आलंकारिकता, कृत्रिमता तथा शब्दमोह से जकड़ी हुई थी और अन्धानुकरण से वह निर्जीव पड़ी थी। एक ओर व्याकरण-सम्मत भाषा और शब्द-मोह पर अधिक बल दिया जाता था तो दूसरी ओर प्राचीन काव्याभरणों से कविता को संजोने की प्रवृत्ति प्रबल रहती थी। कवि जब काव्य प्रेरणा खुली प्रकृति अथवा अपने जीवनानुभव से प्राप्त न कर प्राचीन जड़ ग्रन्थों से प्राप्त करते थे। इसीलिए काव्य में नूतनता, मौलिकता तथा स्वाभाविकता का सर्वथा अभाव था। काव्य-क्षेत्र की इस जड़ता के विरुद्ध तीव्र प्रतिक्रिया हुई। परिणाम स्वरूप अंग्रेज़ी में रोमांसवाद का श्रीगणेश हुआ। वेडस्वर्थ, कालरिज, शेली, कीट्स आदि कवियों ने अंग्रेज़ी कविता में रोमांसवाद की प्रतिष्ठा कर काव्य के नये क्षितिज को उद्भासित किया। अब काव्य में विषयों की

विचित्रता, कल्पना की मनोरमता तथा स्वच्छन्दता का सौन्दर्य दृष्टिगोचर हुआ ।

स्वच्छन्दतावाद का अर्थ जीवन और साहित्य की कठोर रूढ़ियों से स्वतंत्रता है[1]। द्विवेदी युग के अन्त में यह स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति हिन्दी कविता में दृष्टिगत हुई । छन्द-विधान से लेकर भाव-विधान तक यह प्रवृत्ति प्रस्फुटित हुई । अतुकान्त से लेकर मुक्त-स्वच्छन्द छन्द तक काव्य शिल्प में, देव के मानवीकरण से लेकर मानव के देवीकरण तक, प्रेम के आदर्शीकरण से लेकर यथार्थीकरण तक, प्रकृति के चेतनीकरण से लेकर मानवीकरण तक काव्य कला में इस स्वच्छन्दतावाद के दर्शन इस काव्य में होते हैं[2]। जिस कविता के अन्दर समस्त शास्त्रीय परम्पराओं का तिरस्कार हो, स्थूलता के प्रति सूक्ष्मता का विद्रोह हो, एक अनन्त अभिलाषा एवं जिज्ञासा का भाव हो, दम घुटा देनेवाली परिस्थितियों को बदल देने की कामना हो, भावी श्रेष्ठतर जीवन को प्राप्त करने की कल्पना हो, निरन्तर आगे बढ़ते रहने की इच्छा हो, ससीमता को असीमता में बदल देने की चाह हो तथा अपनी वैयक्तिक अनुभूति को निःसंकोच व्यक्त कर देने की शक्ति हो, वह स्वच्छन्दतावादी कविता को छोड़कर और कुछ हो ही नहीं सकती । यदि "छायावादी" अथवा रहस्यवादी कही जानेवाली कवितायें उक्त गुणों से सम्पन्न हैं तो वे स्वच्छन्दतावादी कवितायें हैं और छायावाद रहस्यवाद का एक अंश या पर्याय है[3]।

---

1. डॉ॰केसरीनारायण शुक्ल - आधुनिक काव्यधारा - पृ॰235
2. डॉ॰सुधीन्द्र - हिन्दी कविता में युगान्तर - पृ॰38
3. डॉ॰त्रिभुवन सिंह - आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्दधारा - पृ॰81-82

आचार्य शुक्ल जी ने स्वच्छन्दतावाद के आरम्भ का श्रेय मैथिली शरण गुप्त, मुकुटधर पाण्डेय, बदरीनाथ भट्ट जैसे कवियों को दिया है। परन्तु इन कवियों के पूर्व ही स्वच्छन्दतावाद का आभास देते हुए जयशंकर प्रसाद ने बाह्य वस्तुओं की प्रेरणा में अपने "स्व" की भीतर होनेवाले कम्पन को लाक्षणिकता के साथ अभिव्यक्त करना आरम्भ कर दिया। प्रसाद जी की कविताओं के रचनाकाल और प्रकाशन काल के व्यतिक्रम के कारण आचार्य शुक्लजी के समान प्रौढ आलोचक भी स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा के विकास निरूपण में भ्रान्ति कर बैठे। वस्तुत: प्रसाद जी की प्रारम्भिक कविताओं की आलोचना करते समय उन कवियों के संग्रह रूप में प्रकाशित समय को ही रचना-काल मान लेने से कई भ्रान्तियाँ हो जायेंगी। उदाहरण केलिए प्रसादजी की प्रसिद्ध रचना "खोलो द्वार" "इन्दु" में जनवरी, 1914 में प्रकाशित हुई है। शुक्ल जी ने इसको "झरना" के दूसरे संस्करण में जोड़ी हुई रचनाओं में माना है। कारण यह है कि "खोलो द्वार" झरना" के प्रथम संस्करण में नहीं है। यह कविता "चित्राधार" के प्रथम संस्करण के अन्तर्गत और "कानमकुसुम" के द्वितीय संस्करण में आयी है। इसीलिए प्रसादजी ने उसे "झरना" के प्रथम संस्करण में स्थान देना उचित नहीं समझा। "झरना" के प्रथम संस्करण में न आकर जब यह कविता द्वितीय संस्करण में आयी तो स्वभावत: शुक्लजी ने माना कि यह प्रथम संस्करण के बाद की रचना है। परन्तु यदि शुक्ल जी "इन्दु" की फाइलें उलटते तो वे प्रसाद जी के प्रति अधिक न्याय कर पाते।

प्रसादजी की प्रारम्भिक रचनाओं में भी प्रतीकात्मकता, सूक्ष्म भावों की व्यंजना, लाक्षणिकता आदि नवीन काव्य शैली की विशेषतायें दृष्टिगोचर होती हैं। प्रसाद जी की "प्रथम प्रभात" कविता में -

इन्दुकला 4, खण्ड-1, किरण 5 - मई 1913 - नवीन प्रवृत्ति की विशेषतायें स्पष्ट हुई हैं । इस कविता में बाह्य एवं आन्तरिक प्रकृति का अद्भुत एकीकरण हुआ है । यथा -

मनोवृत्तियाँ खग कुल सी थीं सो रहीं,
अन्तःकरण नवीन मनोहर नीड़ में ।
नील गगन सा शान्त हृदय था हो रहा,
बाह्य आन्तरिक प्रकृति सभी सोती रही ।।

निम्नलिखित पंक्तियों में प्रतीकात्मकता की हल्की झलक मिलती है :-

कहा अचानक किस मलयानिल ने तभी
फूलों के सौरभ से पूरा लदा हुआ :
आते ही कर स्पर्श गुदगुदाया मुझे[2] ।

यहाँ मलयानिल प्रेम का प्रतीक है ।

"प्रथम प्रभात" आत्माभिव्यक्ति की पहली आधुनिक कविता है । आत्मानुभूति के रस से यह रुचिर रचना ओत-प्रोत है । नयी कल्पना और नये वातावरण से सजी हुई यह कविता हिन्दी की प्रथम स्वच्छन्दतावादी रचनाओं में से एक है । इस कविता की रचना उस समय हुई थी जब 'निराला' और पंत का अभ्युदय नहीं हुआ था, जब

---

1. जयशंकरप्रसाद - कानन कुसुम - पृ. 15
2. वही

मैथिलीशरण जी के हृदय में झंकार नहीं उठी थी, जब मुकुटधर की कुररी नहीं बोली थी और जब वे द्विवेदी युग के प्रभाव-क्षेत्र में रहकर स्थूल रचनायें कर रहे थे[1]। उस समय की प्रचलित कविता की दिशा परिवर्तित करने में जयशंकर प्रसाद ही अग्रणी ठहरते हैं।

मलयालम कविता में युगान्तर

मलयालम कविता के इतिहास में कुमारन् आशान ने सन् 1907 में अपनी अनूठी रचना "वीणपूवु" - पतित कुसुम - प्रकाशित करके नवीन युग की प्रतिष्ठा की। इस दृष्टि से हिन्दी की अपेक्षा कुछ वर्ष पूर्व मलयालम में स्वच्छन्दतावाद का प्रवेश हो चुका था। कारण यह था कि हिन्दी से पहले मलयालम में अंग्रेज़ी साहित्य का प्रभाव पड़ा था। केरल प्रदेश में अंग्रेज़ी शिक्षा का अधिक प्रचार हुआ था और इसलिए यहाँ के कवि अंग्रेज़ी कविता के संपर्क में पहले आये। कुमारन आशान् को कलकत्ता के प्रवास-काल में अंग्रेज़ी साहित्य के अध्ययन का अवसर प्राप्त हुआ था। अंग्रेज़ी कविता से प्रेरणा लेकर उन्होंने स्वच्छन्दतावादी कविताओं की रचना का सूत्रपात किया[2]। आशान के प्रेम-वर्णन में पश्चिम के स्वच्छन्दतावाद का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित है। यह मानी हुई बात है कि प्रेम की परिकल्पना में पश्चिम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने आशान को मार्ग दर्शन दिया[3]। शेली के प्रभाव ने आशान की प्रतिभा को

---

1. किशोरीलाल गुप्त - प्रसाद का विकासात्मक अध्ययन - पृ.67
2. के.अशोकन् - भूमिका - कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल, प्रथम भाग-पृ.42
3. प्रो.के.एम. डानियल - नवचक्रवालम् - नलिनियुं मद्दुम - पृ.27।

केन्द्र ज्वाला का पोषण किया[1]। कलकत्ता में रहने पर भी कुमारन आशान् को बंगला का ज्ञान नहीं था। इसलिए उनके स्वच्छन्दतावाद पर बंगला कविता का सीधा प्रभाव नहीं पड़ा है। फिर भी कलकत्ता में रहते हुए बंगाल के विचारकों और कवियों की विचारधारा से परिचित होने का अवसर उनको अवश्य मिला था।

यद्यपि कुमारन आशान के पूर्व कुछ कवियों की कविताओं में स्वच्छन्दतावाद का आभास परिलक्षित होता है तो भी स्वच्छन्दतावाद के प्रथम प्रवर्तक होने का श्रेय आशान को ही प्राप्त हुआ। आशान के पूर्व जिन कवियों ने स्वच्छन्दतावाद की ओर रुचि दिखायी उनमें प्रमुख हैं ए॰आर॰ राजराजवर्मा, सी॰एस॰ सुब्रह्मण्यन् पोट्टी और वी॰सी॰ बालकृष्ण पणिक्कर। राजराजवर्मा के मलयविलासम नामक काव्य में स्वच्छन्दतावाद का प्रस्फुरण स्पष्ट है। त्रिवेन्द्रम महाराजा कालेज के द्राविड भाषाओं के अध्यक्ष के रूप में राजराजवर्मा को विभिन्न भाषाओं के साहित्य के संपर्क में आने का अवसर प्राप्त हुआ था। इतना ही नहीं वे अंग्रेज़ी के भी बड़े विद्वान थे। अतः उनकी कविता में स्वच्छन्दतावादी दृष्टिकोण का स्फुरण हुआ। मद्रास से रेलगाड़ी में घर लौटते हुए कवि ने मलयपर्वत के दृश्यों का जो आनन्द उठाया वही इस लघु काव्य का विषय है। इसमें प्रकृति पर चेतनता के आरोप की स्वच्छन्दतावादी काव्य-प्रवृत्ति मिलती है। यद्यपि यह काव्य वर्णनात्मक काव्य से बहुत कुछ भिन्न नहीं है तथापि इसमें कवि ने वैयक्तिक भावों को व्यक्त कर अपनी स्वच्छन्दवादिता प्रवृत्ति को स्पष्ट कर दिया है। व्यक्ति और विचार को प्रधानता देकर हृदय की गहनता एवं विशालता को प्रदर्शित करके तदनुसार रससिक्त और रस-सौष्ठव के साथ काव्य रचना करने का नमूना "मलयविलासम्" के द्वारा उन्होंने दिखाया है"[2]।

1· प्रो॰के॰ एम॰ डानियल - नवचक्रवालम्-नलिनियुं मद्दुम - पृ॰77

2· पी॰के॰ परमेश्वरन् नायर - मलयालम साहित्य का इतिहास - पृ॰172

आधुनिक अनुशीलन के फलस्वरूप ही मलयविलासम को प्रथम स्वच्छन्दतावादी काव्य कहा जाता है।[1] वैसे, नयी शैली की प्रथम स्वच्छन्दतावादी रचना के रूप में स्व॰ श्री॰ कुमारन आशान के वीणपूवु [गिराफूल] को ही प्रसिद्धि है। इसमें कवि किसी पौधे से गिरे हुए एक फूल का संबोधन करते हुए उसके वैभवपूर्ण जीवन तथा वर्तमान दशा की वितुलना करते हैं तथा अन्त में एक आह भरते हुए दार्शनिक गम्भीरता से सांसारिक जीवन की तुच्छता समझाते हैं। "वीणपूवु" जब निकला तब सभी पाठक इसकी मौलिकता और नवीनता से प्रभावित हुए। उसके बाद इसका उल्लेख साहित्य-जगत् में बराबर होता रहा है। वस्तुत: उस पुष्प में एक व्यक्तित्व है - पर्सनालिटी है।[2] सन् 1903 में रचित सुब्रह्मण्यम पोट्टी के ओक-विलापम् - एक क्रन्दन - काव्य में पुत्र की मृत्यु से पीड़ित पितृ-मानस का रुदन गूँजा है। सन् 1909 में सी॰सी॰ बालकृष्ण पणिक्कर द्वारा विरचित काव्य "ओक विलापम्" में अपनी पत्नी की मृत्यु से आकुल पति के मथित मानस का उच्छ्वास संचित है। इन दोनों करुण काव्यों में वैयक्तिकता का अंश है, अत: भावों की तीव्रता भी है। किन्तु इन समस्त रचनाओं के पूर्व ही, सन् 1899 के आसपास से कुमारन आशान स्वच्छन्दतावादी काव्य साधना कर रहे थे।

आशान् की प्रारंभिक रचना है "कल कण्ठगीत"। इसकी रचना उस समय हुई जब वे बंगलूर में विद्यार्थी का जीवन बिता रहे थे। बंगलूर का उनका अध्ययनकाल सन् 1898 से 1899 तक है। इसी काल में

1· डॉ॰एन॰ई॰ विश्वनाथय्यर - आधुनिक हिन्दी काव्य तथा मलयालम काव्य - पृ॰65

2· प्रो॰एस॰ गुप्तन नायर - इसङ्ङलक्कप्पुरम - पृ॰33

रचित कविता है "कलकण्ठगीत" । इसकी रचना-तिथि स्पष्ट नहीं है, फिर भी यह बताया गया है कि यह बांगलूर के प्रवास काल की रचना है । अतः इसका रचनाकाल सन् 1896 और 1899 के बीच में पड़ता है । इसका रचना-काल सन् 1899 मानने पर भी यह कविता "मलयविलासम" और "ओरुविलापम्" से पूर्व की रचना ठहरती है ।

आशान के कलकण्ठगीत में वैयक्तिक भावना का सुन्दर स्फुरण हुआ है । प्रस्तुत रचना में कवि के मानस में आध्यात्मिकता और लौकिकता का जो संघर्ष हुआ था उसका चित्रण किया गया है । अन्त में कवि ने जगत और जीवन की नश्वरता की ओर संकेत कर यह आदेश दिया है कि चिरन्तन सत्य को समझना चाहिए । परम प्रभु ही चिरन्तन सत्य है । इस कविता में कवि ने मन के प्रतीक के रूप में कोकिल को स्वीकार किया है । यह प्रतीकात्मकता इस कविता का विशेष आकर्षण है । वैयक्तिक अनुभूति की अभिव्यक्ति तथा प्रतीकात्मकता इस कविता की ऐसी विशेषतायें हैं जिनमें स्वच्छन्दतावाद का आभास मिलता है ।

प्रतीकात्मकता की ओर अपना झुकाव आशान् ने प्रारम्भकाल की अन्य कई रचनाओं में भी दिखाया है । उनके परम मित्र "शिवलिंग स्वामी की मृत्यु पर लिखित कविता है - परन्नु पोय हंसम् - हंस जो उड़ गया । उसमें कवि ने हंस को अपने मित्र की आत्मा का प्रतीक माना है ।

आशान् की सन् 1903 में रचित कविता "उलनाट्टिले ओणम"- गाँव का ओणम् - में प्रकृति के प्रति कवि की नवीन दृष्टि व्यंजित हुई है । प्रकृति के मानवीकरण की प्रवृत्ति इस कविता में दिखायी देती हैं -

मन्दम् मर्मरमाषीपूर्वपवनम्
मनिसुमंगु गलम्
नन्दिच्चाट्टि चिटर्न्नु पूक्कलचिरकुल -
मेचिच्चु तेन्नीच्चकल ।

अर्थात् - मन्द-मन्द बोलनेवाला पूर्व दिशा का पवन आ गया । प्रसन्न होकर कुसुम ने अपना सिर हिला दिया । भ्रमर ने परों को फैला दिया । इस वर्णन से ऐसा प्रतीत होता है कि घर में कोई सज्जन सौम्यभाषी अतिथि आया है । गृह-स्वामिनी प्रसन्न हो मुस्कुरा रही है । गृह-स्वामी हाथ पसार कर स्वागत कर रहा है ।

"झरना" और "वीणपूवु"

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य के इतिहास में 'झरना' तथा 'वीणपूवु' का महत्व पूर्ण स्थान है । क्योंकि इन दोनों काव्यों के प्रकाशन से ही हिन्दी तथा मलयालम में स्वच्छन्दतावाद का उदय हुआ ।

"प्रसाद" के "झरना" का प्रकाशन सन् 1918 ई• में हुआ । इस के प्रकाशन के साथ ही हमें हिन्दी स्वच्छन्दतावाद के उद्घोष की स्पष्ट सूचना मिली । समीक्षकों को यह स्वीकार करना पड़ा कि यह स्वच्छन्दतावादी काव्य का प्रथम चरण है । झरना की अधिकांश कविताओं में प्रेमानुभूति के विभिन्न पक्षों का अभिव्यंजन मिलता है । कवि यहाँ अधिक उन्मुक्त

1• कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - दूसरा भाग - पृ•386

भाव-भूमि पर खड़ा है । "झरना" की कविताओं के भावजगत का निर्माण प्रेम और सौन्दर्य की सम्मिलित अनुभूतियों से किया गया है । कवि की वैयक्तिक प्रेमानुभूति का सुन्दर रूप इस में मिलता है । वस्तुत: "झरना" स्वच्छन्दतावाद के आविर्भाव को सूचित करता है । इसे हिन्दी की नयी रोमानी प्रवृत्ति का उद्घोष भी कहा जा सकता है । "झरना"की कविताओं पर विचार करते हुए आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने लिखा है - "झरना" में एक विचित्र अवसाद, जो नवीन बौद्धिक अन्वेषणों और तज्जन्य संशयों का परिणाम जान पड़ता है, बहुत ही स्पष्ट है"[1] ।

"झरना"की कविताओं में स्वच्छन्दतावाद का जो रूप उभरता है उसकी पहली पहचान यह है कि कवि अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों का प्रकाशन करने में अधिक निस्संकोच भाव से काम लेता है । प्रसाद ने अपनी वैयक्तिक वेदनानुभूति में प्रकृति को मुख्य सहचरी के रूप में स्वीकारा और इस दिशा में सचेष्ट रहे कि यह वेदना उनकी नितान्त व्यक्तिगत कुण्ठा बनकर न रह जाय, और बृहत्तर मानवीय अनुभूति से उसका मेल हो । यह मानवीय संवेदना ही प्रसाद को काव्य की महत्तम ऊँचाइयों पर ले जा सकी"[2] ।

वीणपूवु

1909 में "वीणपूवु"का प्रकाश हुआ, जो मलयालम काव्य में एक अभूतपूर्व मोड़ को सूचित करता है । यह रोमान्टिक काव्य प्रवृत्ति का स्पष्ट परिचायक है । मर्मस्पर्शी अन्तर्भाव चित्रण और नये शिल्प के कारण

---

1. आधुनिक काव्य-रचना और विचार - आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी पृ.118 {सारथी प्रकाशन, सागर - 1962}

2. डॉ. प्रेमशंकर - हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य - पृ.164

मलयालम में यह नये काव्य-आन्दोलन की महत्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में स्वीकृत किया गया । इस में हम देखते हैं कि एक गिरे हुए फूल ने कवि के अन्तर्मन की उपनिषदीय साहोदर्य भाव को जगाया । इसमें कवि नीचे गिरे हुए एक फूल को देखकर खिन्नता से अपने उद्गार सुनाते हैं । कली का विकास, विकसित पुष्प का मधुर हास और अंत में उस का भूमिजात आदि का वर्णन अत्यंत कुशलता से प्रस्तुत किया है । महाकवि उल्लूर के शब्दों में "स्वामीजी की शिष्यता, बंगाल का निवास, अंग्रेज़ी साहित्य से ममता और सब से बढ कर स्वतंत्रता की प्यास ने एक साथ आशान को जो प्रेरणा दी उसी का सुफल है "वीणपूवु" । कवि ने फूल पर चेतनता का आरोप करते हुए उसके जीवन की ऊँच - नीच दशा की कथा उसी को सुनायी है ।

वीणपूवु के प्रकाशन के से आशान को मलयालम में स्वच्छंदतावाद के प्रथम और प्रबल प्रवर्तक होने का श्रेय प्राप्त हुआ । पाश्चात्य रोमान्टिक काव्य से सबसे अधिक प्रभावित कवि कुमारन आशान थे । वल्लत्तोल और उल्लूर प्राचीन साहित्य से अपनी आस्था के कारण सांकेतिक पक्ष पर अधिक ध्यान देते थे । आशान जो कुछ काल तक बंगाल में रहे और पाश्चात्य काव्य तथा रवीन्द्रनाथ की कविताओं से परिचित हुए थे, स्वच्छन्दतावाद की ओर अग्रसर हुए।। वीणपूवु में कल्पना का जो उत्कर्ष हुआ है, वह आशान को एकदम ऊँचे स्तर पर खडा करता है । आशान के पहले भी अनेक कवियों ने फूल पर कवितायें लिखी थीं । किन्तु आशान के इस काव्य में मार्मिक भावों का जो समावेश हुआ है, वर्णन का जो वैदग्ध्य हुआ है, वह अन्यत्र नहीं मिलता । शेली, कीट्स आदि अंग्रेज़ कवियों के

---

1. प्रो. एस. गुप्तन नायर - इस्लुकलक्कप्पुरम - पृ.25

विलाप काव्यों का स्वर तथा भाव वीणपूवु में प्रकट दीखते हैं । किन्तु उसकी विचारसरणि बिल्कुल भारतीय है । वस्तुतः आशान का वीणपूवु मलयालम काव्य साहित्य की महान् उपलब्धि है ।

उपर्युक्त विवेचन से यह विदित हो चुका है कि हिन्दी और मलयालम में स्वच्छन्दतावाद का सुप्रभात करनेवाले महान कवि जयशंकर प्रसाद और कुमारन आशान हैं । हिन्दी में प्रसाद के साथ-साथ सुमित्रानन्दन पंत, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, महादेवी वर्मा जैसे कवियों के द्वारा स्वच्छन्दतावादी काव्य का पूरा विकास हुआ । मलयालम में कुमारन आशान के अतिरिक्त उल्लूर वल्लत्तोल, चंगपुषा, जी॰ शंकर कुरुप जैसे कवियों के द्वारा स्वच्छन्दतावादी कविता पर्याप्त विकास प्राप्त कर सकी है । आगे हम हिन्दी और मलयालम के प्रतिनिधि स्वच्छन्दतावादी कवियों के कृतित्व का संक्षिप्त अध्ययन प्रस्तुत करेंगे ।

जयशंकर प्रसाद [1889-1939]

हिन्दी स्वच्छन्दतावाद का प्रथम प्रवर्तक और सब से प्रमुख कवि है जयशंकर प्रसाद । स्वच्छन्दतावादी कविता के संदर्भ में वेडस्वर्थ ने सशक्त भावनाओं के सहज प्लावन की बात कही है । हृदय के संवेग को काव्य का एक प्रमुख उपादान स्वीकार करके प्रसाद ने काव्य की स्वच्छन्दतावादी वृत्ति की ओर आरंभिक संकेत किया । अपने कवि और कविता नामक महत्वपूर्ण निबन्ध में [संवत् 1967] प्रसाद ने कविता के तीन मुख्य गुण माने हैं, कल्पना-शक्ति, सौन्दर्य की आलोचना और प्रकृति-ज्ञान । इनमें कल्पना स्वच्छन्दतावादी काव्य का प्रमुख तत्व बन गयी । सौन्दर्य की आलोचना से कवि का तात्पर्य

---

1. पी॰के॰ परमेश्वरन नायर - मलयालम साहित्य का इतिहास - पृ॰185

इन्द्रियजन्य सुख से ऊपर उठ सकने की क्षमता से है । यहाँ मानव और प्रकृति के संबन्ध की ओर भी संकेत है । इस प्रकार स्वच्छन्दतावादी काव्य की आरंभिक रूप-रेखा का निर्माण होती है । प्रसाद की आरंभिक कविताओं का संग्रह है "चित्राधार"। इसमें पौराणिक आख्यानों के साथ प्रसाद को इतिहास की दुनियाँ में प्रवेश करते हुए दिखायी देता है । यहाँ भी कवि की दृष्टि रोमानी है । वस्तुपरकता अथवा तटस्थता कवि को पसंद नहीं । यहाँ हम कवि की स्वच्छन्दतावादी वृत्ति का आरंभ देखते हैं । प्रकृति और मानवीय भावनाओं में संवाद इसका एक प्रमुख पहलू है । "काननकुसुम" {1913 ई०} प्रसाद की खड़ीबोली कविताओं का प्रथम संकलन है । इसमें प्रकृति के प्रति कवि का जिज्ञासा-भाव और मानवीय भावों से उसका संवाद विशेष उल्लेखनीय है । प्रकृति के प्रति रोमानी दृष्टि लेकर मानवीय भावों से उसका तालमेल बिठाने में कवि अधिक उत्सुक है । "प्रथम प्रभात" कविता इसका सुन्दर उदाहरण है -

> मनोवृत्तियाँ खग कुल-सी थीं सो रहीं
> अन्त:करण नवीन मनोहर नीड में,
> नील गगन सा शान्त हृदय भी हो रहा
> बाह्य आन्तरिक प्रकृति सभी सोती रही ।

प्रसाद की रोमानी दृष्टि का अधिक परिचय "कानन कुसुम" की उन कविताओं में मिलते हैं, जो संकलन के अन्त में रखी गयी हैं । प्रेम पथिक एक लम्बी रचना है जिस में एक रोमानी दुनियाँ झलकती है । इसमें कवि जिस प्रेम दर्शन की नियोजना करना चाहता है, उसमें उसके पिछले संस्कारों का अनुदान शेष है, नहीं तो ऐसी स्वच्छन्दतावादी कथा को ऐसा आदर्शवादी मोड प्राप्त न होता । "झरना" में हम स्वच्छन्दतावाद का उदय देखते हैं । इसकी कविताओं का भाव-गत प्रेम और सौन्दर्य की सम्मिलित अनुभूतियों से बना है । इसमें कवि ने अपनी वैयक्तिक प्रेमानुभूतियों का अधिकाधिक प्रयोग किया है ।

इसमें कवि की वेदना की भी झलक मिलती है । प्रसाद ने अपनी वैयक्तिक वेदनानुभूति में प्रकृति को मुख्य सहचरी के रूप में स्वीकारा और इस दिशा में सचेष्ट रहे कि यह वेदना उनकी नितान्त व्यक्तिगत कुण्ठा बन कर न रह जाय, और बृहत्तर मानवीय अनुभूति से उसका मेल हो । यह मानवीय संवेदना ही प्रसाद को काव्य की महत्तम ऊंचाइयों पर ले जा सकी ।[1] "आँसू" कवि के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का प्रकाशन है । इसमें कवि अपनी वैयक्तिक प्रेमानुभूति को वाणी देता-सा दिखायी देता है । कवि की आत्म-स्वीकृति ही "आँसू" के भावजगत का मूलाधार है । हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य की स्थापना की दिशा में यह मील का पत्थर है । "आँसू" यह संकेत करता है कि स्वच्छन्दतावादी काव्य वैयक्तिक अनुभूतियों का सफल प्रयोग करता हुआ जीवन की अन्य दिशाओं का समावेश भी स्वयं में कर सकता है ।[2] वस्तुत: आधुनिक साहित्य के इतिहास में "आँसू" जिस मोड की सूचना है उससे स्वच्छन्दतावादी काव्य की संभावनाओं के द्वार खुलते हैं । "लहर" प्रसाद की प्रौढ रचना है । भावनाओं का केन्द्रित होना, विचारों की परिपक्वता और अभिव्यक्ति की शक्ति लहर में दृष्टव्य है । इसमें कवि संवेदन प्रकृति के संवेदनों से ऐसे एकाकार हो गये हैं कि उन्हें अलग पाना आसान नहीं मालूम होता । मानव और प्रकृति का इस प्रकार घुलमिल जाना प्रसाद की स्वच्छन्दतावादी चेतना को वह आधार देता है, जहाँ से वे "कामायनी" के अधिक व्यापक फलक की कल्पना कर सकते हैं ।[3] कवि की भावनाओंका प्रकृति की छवियों और मानवीय सदाशयता की इच्छाओं से एक अनुबन्ध स्थापित करने की क्षमता "लहर" के अनेक गीतों में विद्यमान है । प्रसाद का महत्वपूर्ण काव्य है "कामायनी"। इसमें हम कवि की बहुमुखी प्रतिभा का चरमोत्कर्ष देखते हैं । हिन्दी का आधुनिक काल मुख्यत: मुक्तकों और प्रगीतों का काल है किन्तु प्रसादजी की "कामायनी" ने प्रमाणित कर दिया कि आधुनिक

---

1. डॉ॰ प्रेमशंकर-हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य - पृ॰164
2. वही 168
3. वही 173

युग में भी महाकाव्य लिखे जा सकते हैं । प्रसादजी का यह महाकाव्य भी समस्त प्राचीन साहित्यिक शास्त्रीय रूढ़ियों को एक चुनौती ही है । इस महाकाव्य को न तो हम विषय-वस्तु की कसौटी पर कस सकते हैं और न तो अन्य विहित महाकाव्य के शास्त्रीय लक्षणों पर । यह प्राचीनता के विरोध में सफल नवीन प्रयोग है[1] । अपनी आरंभिक कविता और कामायनी के बीच प्रसाद पर्याप्त विकास पा चुके थे । कामायनी में कवि इतिहास से सामग्री ग्रहण करते हुए भी इतिहास के प्रति अपनी रोमानी दृष्टि के कारण ऐतिहासिक याथार्थ्य का निषेध भी उन्होंने किया है । "कामायनी" में पौराणिक सामग्री का मनमाना उपयोग इस बात को सूचित करता है कि प्रसाद के मन में उनकी कल्पना की अपनी एक दुनिया है और वे उसे स्थापित करने केलिए मनोवांछित चीज़ों का चुनाव भी करना चाहते हैं । कामायनी के निर्माण में कवि की स्वच्छन्दतावादी चेतना का महत्त्वपूर्ण हाथ रहा है । पुराण और इतिहास की घटनाओं पर आधारित यह महाकाव्य हिन्दी साहित्य की, विशेष कर स्वच्छन्दतावादी साहित्य की महान उपलब्धि है । इस ग्रन्थ के प्रणयन के साथ ही प्रसाद अपने कवि व्यक्तित्व को स्थापित करने में पूर्ण सफल हुए । वस्तुत "कामायनी" का निर्माण कवि के स्वच्छन्दतावादी व्यक्तित्व से संपन्न हुआ है । इस में वैयक्तिक अनुभूति, अन्तर्मुखी दृष्टि, पुराण कथा, इतिहास की रोमानी कल्पना, अभिजात भाषा, प्रगीतात्मक बनावट, मानवीय सदाशयता के तत्व सभी मिले-जुले रहते हैं । प्रसाद के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण प्रकाशन तो इसमें है ही, इसके अतिरिक्त स्वच्छन्दतावादी काव्य की उपलब्धियाँ और सीमाएँ उसमें साथ-साथ देखी जा सकती है । एक "क्लासिक" के रूप में उसका स्थान सुरक्षित है, क्योंकि उसने हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य की अधिकांश सम्भावनाओं का उपयोग कर लिया[2] । "कामायनी" को प्रसाद गौरव ग्रन्थ मानना चाहिए ।

---

1. डा॰ त्रिभुवनसिंह - आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्दधारा - पृ॰120
2. डॉ॰ प्रेमशंकर - हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य - पृ॰195-196

यही एक काव्य ग्रन्थ है जो अनेक विद्वानों की चर्चा का पात्र बन गया है। रूप-वर्णन की जो विशिष्टता प्रसाद में पायी जाती है, अन्यत्र दुर्लभ है। इन्द्रिय संवेदनाओं की मूल भूमिका से उत्थित होकर प्रसाद का रूप वर्णन रहस्यवादी ऊँचाइयों तक पहुँचा है। प्रेम और सौन्दर्य के शारीरिक उपादानों से लेकर अतिशय आध्यात्मिक भावस्तर पर ले जाने का श्रेय प्रसाद को ही दिया जा सकता है। इस प्रेम और सौन्दर्य दर्शन की समग्रता प्रसाद के कामायनी महाकाव्य में पूर्णतः प्रतिफलित हुई है। डॉ॰ इन्द्रनाथ मदान के अनुसार कवि प्रसाद हिन्दी के गौरव हैं और आधुनिक कवियों में उनका स्थान सर्वश्रेष्ठ है[1]। भारतीय और पाश्चात्य कवियों से प्रसाद की तुलना करते हुए डॉ॰ प्रेमशंकर कहते हैं "उनका कृतित्व उन्हें भारतीय काव्य परंपरा के सच्चे कवियों में स्थान देता है। वे हिन्दी के कालिदास हैं, और उन्होंने देश की स्वाभाविक काव्य परंपरा को नवजीवन प्रदान किया। .... प्रसाद के संपूर्ण कृतित्व पर एक विहंगम दृष्टि डालने के पश्चात् उन्हें विश्व के शीर्ष कवियों के निकट स्थान देना पड़ता है"[2]। "कामायनी" महाकाव्य इस निराश, भय-त्रस्त, भ्रमित एवं चिर-दग्ध दुखी वसुधा को शान्ति और सुख की आशा बंधाता हुआ अखण्ड आनन्द प्राप्ति का मंगलमय संदेश दे रहा है[3]।

---

1. जयशंकर प्रसाद - चिन्तन व कला - पृ॰23
2. प्रसाद का काव्य पृ॰497 तथा पृ॰473
3. डॉ॰ द्वारिका प्रसाद सक्सेना - कामायनी में काव्य, संस्कृति और दर्शन - पृ॰498

सुमित्रानन्दन पन्त (1900 ई·   )

हिन्दी स्वच्छन्दतावाद के प्रमुख कवि सुमित्रानन्दन पंत को प्रकृति का कवि कहा जा सकता है। पंत ने प्रकृति को निकट से देखा, प्रकृति के साथ आत्मीयता स्थापित करने में वे समर्थ हुए। प्रकृति कवि के अवचेतन में प्रवेश कर गयी और उनके व्यक्तित्व का प्रमुख अंग बन गयी। अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावादी कवियों में प्रकृति कवि के रूप में वेडस्वर्थ का जो महत्वपूर्ण स्थान है वही स्थान हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों में पंत जी को प्राप्त हुआ है। किन्तु ध्यान देने की बात है कि प्रकृति के प्रति उनकी धारणा में समय-समय पर परिवर्तन भी देखने को मिला है। पंत की स्वच्छन्दतावादी चेतना के निर्माण में प्रकृति के प्रति उनकी अदम्य प्रति क्रियाओं का महत्वपूर्ण प्रभाव परिलक्षित होता है। जो प्रकृति आरंभ में उनकी दृष्टि में स्वतंत्र रूप से उपस्थित थी, वह आगे चलकर प्रिया, सखी व संगिनि बन गयी। यह परिवर्तन उनकी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का परिणाम है। ~~हिन्दी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का परिणाम है~~। हिन्दी स्वच्छन्दतावाद की एक प्रमुख प्रवृत्ति है प्रकृति और मानवीय भावनाओं में संवाद की प्रक्रिया। इस दिशा में पंत जी का प्रदेय अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। पंत जी पर अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावादी कवियों का स्पष्ट प्रभाव पडा है। कवि ने स्वयं इस बात को व्यक्त की है - "उन्नीसवीं शती के कवियों में कीट्स, शेली, वर्डस्वर्थ तथा टेनिसन ने मुझे गंभीर रूप से आकृष्ट किया। कीट्स के शिल्प वैचित्र्य, शेली की सशक्त कल्पना, वर्डस्वर्थ का प्रांजल प्रकृति-प्रेम, कॉलरिज की असाधारणता तथा टेनिसन के ध्वनि-बोध ने मेरी कविता संबन्धी रूप विधान के ज्ञान को अधिक पुष्ट, व्यापक तथा सूक्ष्म बनाया। इन कवियों की विशेषताओं को हिन्दी काव्य में उतारने केलिए मेरा कलाकार भीतर ही भीतर प्रयत्न करता रहा। काव्य-संगीत में व्यंजनों की योजना से शक्ति तथा चित्रात्मकता और स्वरों की सहायता से सूक्ष्मता तथा मार्मिकता आती है, इसका ज्ञान मुझे अंग्रेज़ी कवियों के रूप-शिल्प के बोध से ही प्राप्त हुआ।[1] वास्तव में काव्य संबन्धी पंत जी की मान्यतायें

1· पन्त - साठ वर्ष : एक रेखांकन - पृ·32-33

"पल्लव" और "आधुनिक कवि" की भूमिकाओं में देखने को मिलती हैं। छायावाद एक पुनर्मूल्यांकन नामक आलोचनात्मक ग्रंथ में भी उनकी उक्त मान्यताओं की अभिव्यक्ति मिलती है। "पल्लव" की प्रवेश नामक भूमिका को हिन्दी स्वच्छन्दताव का घोषणा-पत्र मानना चाहिए क्योंकि इस में कवि ने स्वच्छन्दतावादी काव्य प्रवृत्तियों के संबन्ध में नयी सौन्दर्यवादी घोषणायें प्रस्तुत की।

पंत जी की कविताओं का प्रथम संकलन है "वीणा"। 1920 ई॰ ग्रंथि नामक लघु काव्य की रचना की जिस में असफल प्रणयगाथा का वर्णन मिलता है। इन प्रारंभिक काव्यों में प्रकृति के साथ कवि की प्रेम संबन्धी वैयक्तिक भावनाओं का भी परिचय मिल जाता है। किन्तु इन भावनाओं की प्रबल अभिव्यक्ति "पल्लव", "गुंजन", "ज्योत्स्ना" आदि में हुई। इस प्रकार वीणा से "ज्योत्स्ना" तक को हम पंत का प्रथम काव्य चरण मान सकते हैं। यह पंत की स्वच्छन्दतावादी काव्य यात्रा का भी प्रथम चरण है। द्वितीय चरण में "युगान्त", "युगवाणी" तथा "ग्राम्या" की कविताएं सम्मिलित है। ये रचनायें पंत जी की सौन्दर्य चेतना को एक यथार्थपरक मोड देने में समर्थ है। पंत का तीसरा काव्य-चरण "स्वर्ण किरण" से आरंभ होकर लोकायतन तथा आज तक चला आ रहा है। इसे दर्शन आध्यात्म का चरण कहना उचित होगा।

प्रथम प्रकाशित "वीणा" में तिरसठ गीत संकलित हैं। इन कविताओं में एक प्रार्थनाभाव का दर्शन होता है। प्रकृति की असंख्य छवियों के प्रति कवि की जिज्ञासा भी इस में स्पष्ट दिखायी देती है। "वीणा" के प्रार्थनाभाव पर "गीतांजलि" का प्रभाव पडा है जिसे स्वयं कवि ने भी स्वीकार किया है। वीणा की कविताओं में मिलनेवाली एक मुख्य स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति है जडता में चेतनता का आरोप। "ग्रंथि" पंत जी की विशेष मार्मिक विरह-गाथा है। कुछ लोग इसे असफल प्रेम गाथा भी कहते हैं। "पल्लव" का प्रकाशन 1929 ई॰ में हुआ जो पंत जी के काव्य का सर्वोत्तम प्रतिनिधि है। कवि ने इस में

काव्य की पुरानी मान्यताओं के स्थान पर नये प्रतिमान स्थापित किये, साथ ही साथ रचना संबन्धी अपना दृष्टिकोण भी व्यक्त किया । कविता के अन्त में पल्लवों को कल्पना के विहृवल बाल कह कर संबोधित किया गया है और उन्हें अनेक भावनाओं का प्रतीक भी माना गया है । अंतिम पंक्तियों में सदाशयता का भाव भी देखने को मिलता है -

आज पल्लवित हुई है डाल
झुकेगा कल गुंजित मधुमास
मुग्ध होंगे मधु-से मधु-बाल
सुरभि से अस्थिर मरूताकाश ।

यहाँ कवि के व्यक्तित्व की कई दिशाओं की ओर संकेत मिलता है । इनके माध्यम से हमें कवि की स्वच्छन्दतावादी दृष्टि का आरंभिक किन्तु प्रौढ स्वरूप का भी परिचय मिलता है । प्रकृति के प्रति कवि की रागात्मकता भी यहाँ व्यक्त होती है । कल्पना-तत्व, जो पंत के काव्य का मूलाधार है, की ओर भी कवि ने संकेत किया है । पंत की कल्पना-शक्ति की विशेषता को स्पष्ट करते हुए आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने जो उद्गार व्यक्त किये वह इस प्रसंग में स्मरणीय है - "कल्पना ही पंत जी की कविता का मेरूदण्ड, उनकी काव्य सृष्टि का मापदण्ड रही है । कल्पना की बाल सुलभ रंगीन उडानों से लेकर अत्यंत तल्लीन और गहन कल्पना - अनुभूतियों के चित्रण में पंत जी का विकास क्रम देखा जा सकता है" ।

पंतजी ने अपनी काव्य यात्रा प्रकृति से प्रारंभ की । उन्होंने प्रकृति को नयी दिशा प्रदान की । "पल्लव" की कवितायें, विशेषकर, छाया, मौन-निमन्त्रण, बादल आदि प्रकृति दृश्यों की दृष्टि से हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य की महान उपलब्धि है । प्रकृति को समग्र और सजीव रूप में चित्रित

करने में पन्त की कुशलता अनुपम है । "पल्लव" की दीर्घ कविता "परिवर्तन" हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य के इतिहास में अपना विशेष स्थान रखती है । "परिवर्तन" कवि पंत की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति को प्रकृति और रोमांस के जाल से बाहर निकाल कर बृहत्तर सन्दर्भों की ओर बढने की सूचना देनेवाली कविता है[1] ।

पंत जी की गीतात्मक प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करने वाला काव्य संकलन है "गुंजन" । "गुंजन" की कविताओं के बनावट में भी प्रकृति का महान योगदान रहा है । गुंजन में प्रकृति के अभिराम चित्र प्राय: प्रिया के माध्यम से आये हैं । स्वतंत्र दृश्यों की ओर कवि का ध्यान कम ही लक्षित होता है । "गुंजन" का मुख्य स्वर मानवीय सदाशयता है । "गुंजन" में एक बलवती मानवीय आशावाद की अभिव्यक्ति भी दृष्टिगत होती है । पंत के काव्य के पहले चरण की समाप्ति ज्योत्स्ना नाटिका से होती है । यह प्रतीकात्मक नाटिका पाँच अंकों में विभाजित है । इस में अमूर्त भावों को पात्रों के रूप में प्रस्तुत किया गया है । विश्व बन्धुत्व की भावना का प्रसार ही इस नाटिका में कवि का मुख्य उद्देश्य है । इस कृति की ओर आलोचकों की दृष्टि कम ही गयी है ।

द्वितीय चरण की प्रमुख रचनायें हैं "युगान्त" "युगवाणी" और "ग्राम्या" । "युगान्त" कवि की स्वच्छन्दतावादी दृष्टि को इतना मोड देती है कि यहाँ प्रकृति के स्थान पर मानव के बारे में अधिक सोच-विचार देखने को मिलता है । प्रकृति को कल्पना-लोक से बाहर निकाल कर अधिक कठोर भूमि पर ले चलने में "युगान्त" की कविता में सफल निकली है । इसकी अंतिम कविता बापू के प्रति महात्मा गान्धी के प्रति कवि की आस्था और आदर को सूचित करती है । "युगवाणी" कविता का आरंभ यथार्थपरक है किन्तु धीरे-धीरे वह आदर्श परक बन जाती है । "युगवाणी" में पंत ने श्रमजीवी, मध्यवर्ग धनपति तथा नारी सब को

---

1. डॉ॰ प्रेमशंकर-हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य - पृ॰393

कविता का विषय बनाया है । धनपतियों को नृशंस, नर पशु, गत संस्कृति के गरल आदि कह कर संबोधित करने में कवि ने संकोच प्रकट नहीं किया । दीन-दुखियों पर कवि ने सहानुभूति भी प्रदर्शित की है ।"युगान्त" और "युगवाणी" में कवि जिस वैचारिक भूमि की खोज कर रहा था उसका वास्तविक प्रयोग ग्राम्या में देखने को मिलता है । "ग्राम्या" में काव्य का अनुभूति-पक्ष अधिक सशक्त है । हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य को एक नयी गति देनेवाली ये कवितायें ग्राम-जीवन की प्रशंसा के साथ ही वहाँ की दयनीयता की ओर भी संकेत करती है । "ग्राम्या" में कवि कल्पना की अपेक्षा यथार्थ का स्वागत करते दिखायी देता है । "ग्राम्या" में ग्रामीण जीवन के जो चित्र अंकित किये हैं उन्हें पंत ने पास से देखा है । यही कारण है कि उनमें अनुभूति की तीव्रता है ।

"स्वर्ण किरण" से "वाणी" तक करीब दस वर्षों तक पंत का तीसरा काव्य चरण एक प्रकार की आध्यात्मिकता से आच्छादित है । चतुर्थ चरण का सबसे प्रमुख काव्य "लोकायतन" है । यह एक दीर्घकाव्य है जिसका प्रकाशन 1963 ई॰ में हुआ । स्वयं कवि ने इसे लोकजीवन का महाकाव्य कहा है । कवि ने इस में अपने आदर्शवादी मन्तव्य का प्रकाशन भी प्रस्तुत किया है । इस में स्वतंत्रता-संग्राम की चर्चा भी मिलती है । इस काव्य पर गांधी-युग का स्पष्ट प्रभाव है । प्रकृति-वर्णन में कवि की कुशलता का पता भी इस में मिलता है । "लोकायतन" में पंत ने अपने आदर्शवादी जीवन दर्शन को अधिक विस्तार से अभिव्यक्त करने की आकांक्षा प्रकट की है, जिसमें वे सफल निकले हैं । "लोकायतन" के बाद पंत जी की और भी कई रचनायें निकली हैं जिनमें प्रमुख है - पतझर एक भाव क्रांति, गीत हंस, शंख ध्वनि, राशि की तरा, समाधिता, आस्था, सत्यकाम गीत अगीत ।

हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों में पंत जी का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है । प्रकृति और कल्पना से ओतप्रोत पंत जी की कविताएं हिन्दी स्वच्छन्दतावाद की महान उपलब्धि बन गयी हैं । उनका समस्त काव्य अन्तर मुक्ता का काव्य न होकर आत्मोत्कर्ष का काव्य है । यह आत्मोत्कर्ष अपनी समग्र संरचना में एक सार्वभौमिक शुभेच्छा तक ले जाता है । इसीलिए उनका काव्य अतीतोन्मुखी

न होकर वर्तमान के फलक पर भविष्योन्मुखी काव्य है । यह सार्वभौमिक शुभेच्छा ही वह तत्व है, जिस के भीतर से कवि पंत ने विश्व मानव और नव मानव की परिकल्पना को अपनी कविता में सार्थक किया है[1] । सचमुच पंत जी सम्पूर्णता का कवि है ।

सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" (ई॰1896 1961)

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य को विस्तृत आयाम प्रदान करने में कविवर सूर्यकान्त त्रिपाठी"निराला"का महत्वपूर्ण हाथ रहा है । निराला की रचनाओं में भारतीय नवजागरण का स्पष्ट रूप परिलक्षित होता है । उनके काव्य पर वेदान्त का भी स्पष्ट प्रभाव है । इस प्रभाव ने उनकी कविताओं को एक आध्यात्मिक आवरण प्रदान किया है ।

निराला का प्रथम प्रतिनिधि कविताओं का संकलन है "परिमल" जो 1930 ई॰ में प्रकाशित हुआ । उसकी भूमिका में निराला ने ये उद्गार व्यक्त किये - "मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है । मनुष्यों तरह की मुक्ति कर्मों के बन्धन से छुटकारा पाना है । और कविता की मुक्ति छन्दों के शासन से अलग हो जाना । मुक्त काव्य कभी साहित्य केलिए अनर्थकारी नहीं होता, प्रत्युत उससे साहित्य में एक प्रकार की स्वाधीन चेतना फैलती है, जो साहित्य के कल्याण की भी मूल होती है[2] ।

1• दूधनाथसिंह - तारापथ की भूमिका - पृ॰51

2• परिमल - भूमिका - पृ॰92

"निराला" ने प्रस्तुत भूमिका में वैदिक साहित्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों के उदरण देते हुए उसका प्रबल समर्थन किया है । "निराला" ने व्यापक सांस्कृतिक स्तर पर काव्य की मुक्ति का आवाहन किया और स्वच्छन्दतावादी काव्य का उद्बोध उद्बोध किया । "परिमल" की एक प्रसिद्ध कविता है "जुही की कली"। यह हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में एक नये मोड देने के साथ ही रोमानी काव्य की नयी-नयी सम्भावनाओं की ओर भी संकेत करती है । जागो फिर एक बार कविता देश प्रेम की भावना से ओत-प्रोत है । यह कविता ओज गुण से पूर्ण है । परिमल निराला के कवि व्यक्तित्व को हमारे सामने लाता है । परिमल में वैयक्तिक अनुभूतियाँ हैं, जो प्रेम-भावना समन्वित गीतात्मक कविताओं में अभिव्यक्त हुई हैं । यहाँ हमें प्रिय-प्रिया के कई सघन अनुभूति चित्र देखने को मिलते हैं ।

"निराला" के गीतकार व्यक्तित्व को स्पष्ट करने वाली कविता है "गीतिक इसकी भूमिका में कवि ने भारतीय गीत-सृष्टि का इतिवृत्त प्रस्तुत करने के बाद अपना मौलिक दृष्टिकोण भी व्यक्त किया है । यहाँ कवि का शास्त्रीय संगीत-ज्ञान भी स्पष्ट होता है । "गीतिका" के गीत कई प्रकार की भावभूमियों से होकर गुजरते हैं । सर्वप्रथम प्रेम और सौन्दर्य के गीत हैं, जो कवि की स्वच्छन्दतावादी वृत्तियों को सजग करने वाले हैं । "गीतिका" में कवि की प्रकृति चित्रण कुशलता भी व्यंजित होती है । "गीतिका" के ऋतु चित्र अत्यंत सम्मोहक हैं । कवि प्रकृति और मानव की भावनाओं में सामंजस्य लाने का यत्न करते हैं, जो स्वच्छन्दतावादी काव्य की एक प्रमुख विशेषता है । ऋतु चित्रों के निर्माता रूप में निराला हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में विशिष्ट स्थान पाते हैं । "निराला" प्रकृति के विराट रंगमंच पर मानवीय क्रिया-व्यापार को रखने की चेष्टा करते हैं और इस प्रकार उनकी स्वच्छन्दतावादी दृष्टि को एक सहज विस्तार मिल जाता है"[1] ।

---

1. डॉ॰ प्रेमशंकर - हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य - पृ॰249

"गीतिका" के गीत संगीतात्मकता की दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है । "परिमल" और "गीतिका" इस बात की ओर संकेत करते हैं कि "निराला" की मूल वृत्ति स्वच्छन्दतावादी है तथा उनके मुख्य विषय प्रेम, सौन्दर्य, प्रकृति और अध्यात्म हैं ।

"निराला" की "अनामिका" अत्यंत महत्वपूर्ण काव्य-कृति है । इसमें कुछ प्रेम और अध्यात्म के गीत हैं तो "राम की शक्तिपूजा" जैसी बौद्धिक रचनाएं भी मिलती हैं । इस में "सरोज स्मृति" जैसा शोक गीत है तो "तोडती पत्थर" जैसे यथार्थ चित्र भी । "दान" जैसी व्यंग्यपूर्ण रचना भी इसमें मिलती है । इस प्रकार "अनामिका" की कविताएं "निराला" के वैविध्य को पूर्ण रूप से स्पष्ट करती है । "अनामिका" हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य को एक नया आयाम प्रदान करती है । इस प्रसंग में डॉ॰ धनंजय वर्मा जैम के निम्नलिखित शब्द स्मरणीय हैं । "हमारे मत में सब दृष्टियों से अनामिका निराला का ही नहीं, पूरे स्वच्छन्दतावादी युग का प्रतिनिधि काव्य संग्रह है" [1] । "अनामिका" की प्रथम कविता प्रेयसी में हम "निराला" की रोमानी प्रवृत्ति का दर्शन करते हैं । इसमें प्रकृति चित्रों के माध्यम से कवि ने प्रेमी-प्रेमिका के घनिष्ठ मिलन की ओर संकेत किया है । प्रेयसी के ये शब्द कितना चित्ताकर्षक हैं - याद है, उषाकाल -

प्रथम किरण कम्प प्राची के दृगों में
प्रथम पुलक फुल्ल चुम्बित वसंत की
मंजरित लता पर
प्रथम विहग बालिकाओं का मुखर स्वर
प्रणय मिलन गान,
प्रथम विकच कलि वृन्त पर नग्न तनु
प्राथमिक पवन के स्पर्श से कांपती । [2]

---

1. धनंजय वर्मा - निराला : काव्य और व्यक्तित्व - पृ॰196
2. निराला - अनामिका - प्रेयसी नामक कविता

"अनामिका" की दो अत्यन्त महत्वपूर्ण कविताएं है - "सरोजस्मृति और "राम की शक्तिपूजा"। ये दोनों "निराला" की कवित्व-शक्ति का सुन्दर अभिव्यंजन हैं । "सरोजस्मृति" एक शोक गीत है, साथ ही साथ सामाजिक विषमताओं पर प्रहार भी, जिस में कवि अपनी प्रिय पुत्री को खो देता है । "राम की शक्तिपूजा" में आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने महाकाव्य की संभावनायें दर्शायी हैं । वस्तुत: इसमें महाकाव्योचित गरिमा विद्यमान है ।

"निराला" का सांस्कृतिक काव्य है "तुलसी दास", जिसका प्रकाशन 1938 ई० हुआ । इसमें कवि पौराणिक जगत से इतिहास की ओर प्रयाण करते हैं । यह काव्य "निराला" के पूर्ण व्यक्तित्व की ओर भी संकेत करता है । कवि की स्वच्छन्दवादी कल्पना का भी परिचायक है । तुलसीदास में इतिहास और कल्पना, यथार्थ और स्वच्छन्दता का सुन्दर सामंजस्य देखने को मिलता है । तुलसीदास स्वच्छन्दतावादी चेतना को बौद्धिक स्तर पर लाने की चेष्टा में समस्त स्वच्छन्दतावादी काव्य को एक आयाम प्रदान करता है । तुलसीदास के प्रणयन में कवि की सांस्कृतिक दृष्टि और स्वच्छन्दतावादी चेतना दोनों का मेल है ।

"अणिमा" में कवि की सांस्कृतिक जानकारी और उसमें उनकी गहरी रुचि का परिचय मिलता है । "अणिमा" के गीतों में प्रार्थना भाव भरा रहता है । कभी-कभी विषाद का भाव भी मिलता है । अणिमा की कुछ कविताएं सामाजिक यथार्थत्व को व्यक्त करनेवाली हैं जिन्हें प्रगतिशील कविताएं भी कह सकते हैं ।

"कुकुरमुत्ता" का प्रकाशन 1942 ई० में हुआ । "कुकुरमुत्ता" को नये हिन्दी जनवादी काव्य का साहसी उद्घोष कह सकते हैं । यह एक व्यंग्यपूर्ण काव्य है ।

इसका व्यंग्य पूंजीपति से लेकर निम्न वर्ग के लोगों तक व्याप्त है। इसमें कई सामायिक संदर्भ भी उभरते हैं जो निराला की जागरूकता के प्रमाण हैं ।

"बेला" में सामयिक समस्याओं की ओर संकेत मिलता है । कभी-कभी कवि विद्रोही भी बन जाते हैं जिससे सर्वहारा के प्रति उनकी सहानुभूति व्यक्त होती है । "नये पत्ते" में सामयिक समस्याओं के चित्रण के साथ ही कवि ग्राम जीवन की दयनीयता की ओर भी संकेत करते हैं । कृषक वर्ग से कवि सहानुभूति प्रकट करते हैं। "अर्चना" और "आराधना" में प्रार्थना परक गीत मिलते हैं । "निराला" के प्रार्थना गीतों में मानवीय सदाशयता का भाव भरा रहता है । "अर्चना" और "आराधना" के गीतों में भी यह गुण विद्यमान है । "निराला" का समापन काव्य संकलन है "सान्ध्य काकली" जिसका प्रकाशन 1969 ई॰ में कवि के निधन के पश्चात् हुआ । इसमें लगभग सत्तर रचनाएं संकलित है । इनमें सौन्दर्य चित्र, प्रकृति, मानवीय संवेदन, प्रार्थना- भाव आदि के साथ ही साथ कवि की मनोव्यथा का भी अंकन मिलता है । इनमें सौन्दर्य के मांसल चित्र नहीं हैं, किन्तु स्मृति- चित्रों के रूप में रोमानी चित्रों का आधिक्य हैं । इस संकलन की अंतिम कविताओं में कवि अपनी आत्मगाथा ही सुनाते हैं ।

"निराला" को एक प्रकार से हम क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावादी कह सकते हैं । उनकी रचनाओं का केन्द्र-बिन्दु यही क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद है । वस्तुत: "निराला" का काव्य हिन्दी स्वच्छन्दतावाद साहित्य-भण्डार केलिए महान उपलब्धि बन गया है । "निराला" के बारे में अज्ञेय ने ठीक ही लिखा है -

छायावाद का स्वच्छन्दतावादी-पक्ष अपने पुष्ट और सबल रूप में श्री॰ सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला के काव्य में व्यक्त होता है । अपने समूचे कृतिकाल में वह अपना कवि नाम सार्थक करते हुए एक अविराम विद्रोह भावना के कवि रहे । किसी भी क्षेत्र में गतानुगतिकता उन्हें अमान्य हुई और एक प्रखर व्यक्तित्व की ओज भरी और दुर्दान्त अभिव्यक्ति से उन्होंने पाठक और आलोचक को अभिभूत कर दिया ।

महादेवी वर्मा * (1907 ई॰)

हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों में महादेवी वर्मा का अपना एक विशेष स्थान है । वेदनावाद को लेकर वे काव्य-जगत में अवतीर्ण हुई और हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य-क्षेत्र में अपनी अमिट छाप छोड़ी । सम्पन्न और शिक्षित परिवार में जन्म, चित्रकला और संगीत की शिक्षा का प्रबन्ध, बुद्ध की करुणा की छाया, दार्शनिक चिन्तन, सेवा भावना आदि कई बातों ने मिलकर उनके व्यक्तित्व का निर्माण किया है । महादेवी जी के प्रमुख कविता संग्रह हैं - "नीहार", "नीरजा", "रश्मि", "सांध्य गीत" और "दीपशिखा" । इनमें नीहार नीरजा, रश्मि तथा सांध्यगीत की कविताएं एक ही संग्रह "यामा" में संकलित की गयी हैं ।

"नीहार" में हम पंतजी का प्रभाव देखते हैं । रश्मि और नीरजा में कवयित्री की काव्य पूर्ण प्रौढ हो चुकी है । "नीहार" की रचना के पश्चात् से ही महादेवी की प्रतिभा का स्वतंत्र विकास हुआ । महादेवी के काव्य के प्रमुख गुण हैं अतिरंजित भावना, निराशा, सुन्दर शब्द चयन, ऊंची कल्पना और तीव्र वेदना । नीहार में महादेवी के काव्य की रूप सेवा भाव मिलती है । इस काव्य में एक अव्यक्त पीडा भाव अवश्य है । किन्तु उसका कोई स्थिर रूप नहीं मिलती । कवयित्री की रचना में नीरजा का अत्यधिक महत्व है । इस में रसानुभूति का उत्कर्ष देखने को मिलता है । अभिव्यंजना का क्रमिक विकास भी इसमें विद्यमान है । नीरजा के गीतों में रागात्मक अनुभूति की तीव्रता है । नीरजा के गीतों में अनुचिन्तन का भी प्राधान्य है । यही कारण है कि ये गीत नीहार और रश्मि के गीतों से अधिक आत्मचेतनापूर्ण हैं । नीरजा की कविताओं में कवयित्री प्रियतम को अपने ही अन्दर बसा हुआ मान कर संतुष्ट होती है ।

इन गीतों में हम साधक के आत्म साक्षात्कार का आनन्द देखते हैं । विरह दशा का वर्णन भी इसमें मनोरम हुआ है । नीरजा के गीतों में आत्मा का परमात्मा के प्रति आकुल प्रणय निवेदन बड़ी मात्रा में मिलतेहैं। `नीरजा'में गीति काव्य का पूर्ण विकास द्रष्टव्य है । सांध्यगीत में दार्शनिक एकाग्रता का भव्य रूप मिलता है । किन्तु काव्य उपादान उतना समृद्ध नहीं । अतः इन गीतों में रहस्य भावना को ही प्रमुखता मिली है । दीपशिखा के गीतों में आत्म निवेदन की प्रेरणा विद्यमान है । इस में एक रहस्योन्मुख प्रेम की अभिव्यक्ति है । यामा में संग्रहीत कविताओं के समान ही उनकी भूमिकाएं भी विशेष महत्व रखती है । इन भूमिकाओं के अवलोकन से उनके काव्य पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है । "यामा"और"दीपशिखा"केवल संग्रह पुस्तकें ही नहीं हैं, उनमें महादेवी जी का पूरा काव्य-व्यक्तित्व ही निहित है[1] ।

महादेवी के काव्य में एक अदम्य वेदना भाव का दर्शन होता है । यह वेदना-भाव उनके काव्य का केन्द्र बिन्दु है । यह उनके काव्य के स्वच्छन्दतावादी पक्ष को अधिक पुष्ट करता है । इस प्रसंग में विश्वंभर मानव का यह उद्गार स्मरणीय है "महादेवी जी के काव्य में दुःख पक्ष की प्रधानता है । उसका अधिकांश विरह वेदना-समन्वित है । इसी से उसमें आँसुओं के उल्लेख की प्रचुरता है । उनके काव्य में प्रवाहित पीड़ा धारा में आंतरिक वृत्ति के देर तक निमग्न होते ही एक प्रकार की मनोव्यथा का अनुभव पाठक को होने लगता है[2] । "रश्मि" के गीतों में यह दुःख पतिंगे के समान जल-जल उठता है । इस दुख की अभिव्यक्ति में एक प्रकार की अधीरता है । इस में एक प्रकार की आतुरता है । 'नीरजा"और"सांध्य गीत"में यह दुखवाद अत्यंत शान्त, स्निग्ध व कोमल है । वस्तुतः महादेवी के व्यक्तित्व की सब से बड़ी भावना है उनकी

---

1. नन्ददुलारे वाजपेयी - आधुनिक काव्य : रचना और विचार - पृ॰184
2. विश्वंभर मानव - महादेवी वर्मा काव्य-कला और जीवन-दर्शन में संग्रहित लेख - पृ॰98

कविता का दुखवाद । यह दुखवाद कवयित्री के जीवन में अनजाने ही बस गया है। अपनी इस वेदना को कवयित्री प्रियतम की देन मानती है । पीडा को ग्रहण करने के कारण उनके जीवन का लौकिक सुख-स्वप्न नष्ट हो गया । यही कारण है कि हृदय में निराशा का वास होने लगा । कवयित्री को यह पीडा अत्यंत प्रिय है, अत: वे इसे छोड़ना नहीं चाहतीं । महादेवी जी को पीडा इसलिए प्रिय है कि इससे जीवन की साधना की पूर्ति होती है । यह पीडा उन्हें आनन्द की चरमावस्था तक ले चलने की क्षमता रखती है । कवयित्री की दृष्टि में पीडा और प्रियतम दोनों में कोई अंतर नहीं है ।

अपनी पीडा के विषय में कवयित्री स्वयं लिखती हैं - "दुख मेरे निकट जीवन का ऐसा काव्य है जो सारे संसार को एक सूत्र में बांध रखने की क्षमता रखता है । हमारा एक बूंद आंसू भी जीवन को अधिक मधुर अधिक उर्वर बनाये बिना नहीं रहता । मनुष्य सुख को अकेला भोगना चाहता है, परन्तु दु:ख सब को बांट कर विश्व जीवन में अपने जीवन को, विश्व वेदना में अपनी वेदना को इस प्रकार मिला देना, जिस प्रकार एक जल-बिन्दु समुद्र में मिल जाता है कवि का मोक्ष है[1] । किन्तु इतना होने पर भी महादेवी जी का विश्वास है कि उनका दुख कभी सुख में परिणत हो जायगा । "नीरजा" में हम इस का कुछ आभास पाते हैं । वहाँ कवयित्री दु:ख के साथ कभी-कभी सुख का अनुभव करती सी प्रतीत होती है । यही भावना "सांध्य गीत" में और परिष्कृत रूप में प्रकट हुई है । वहाँ विरह की घड़ियाँ कवयित्री को मधुर मधु की यामिनी सी जान पड़ती है । "दीप शिखा" में साधना के आरम्भ से लेकर सिद्धि-लाभ तक की सभी स्थितियों के दर्शन मिलते हैं ।

---

1. यामा - भूमिका

महादेवी की कविता की दूसरी विशेषता उनका माधुर्य-भाव है । मीरा की भांति महादेवी भी माधुर्य भाव की उपासना करती हैं । माधुर्य भाव से ही कवयित्री अपने प्रियतम का भजन करती हैं ।

सभी स्वच्छन्दतावादी कवियों की भांति महादेवी भी प्रकृति की ओर आकृष्ट हुई । उनकी कविता की तीसरी विशेषता भी यही है । प्रकृति के रूपों, दृश्यों और भावों को महादेवी जी ने एक चेतन व्यक्तित्व दे दिया है । इसे यों कहें कि प्रकृति उनके साथ ही उन के प्रियतम के प्रति आत्म निवेदन में सहायक होकर समर्पित हो गयी है, तो अधिक संगत होगा[1] । वस्तुतः प्रकृति महादेवी जी के जीवन में एकाकार होकर उनमें विरह एवं मिलन की अनुभूतियों के चित्रण में अत्यंत सहायक हुई है । अन्य स्वच्छन्दतावादी कवियों की भांति महादेवी भी प्रकृति से तादात्म्य प्राप्त कर सकी । संध्या से अपनी तुलना करती हुई कवयित्री कहती हैं -

प्रिय सांध्य गगन, मेरा जीवन ।
यह क्षितिज बना धुंधला विराग,
छाया-सी काया वीतराग,
सुधि भीने स्वप्न रंगीले घन
साधों का आज सुनहलापन,
घिरता विषाद का तिमिर गहन
संध्या का नभ से मूक मिलन -
यह अश्रुमती हंसती चितवन[2] ।

---

1. डॉ॰ इन्द्रनाथ मदान - महादेवी वर्मा - काव्य कला और जीवन दर्शन पृ॰115

2. यामा - पृ॰1

पूरी कविता में अपने जीवन की छाया संध्या के आकाश में प्रतिबिंबित है । मानवीकरण की प्रवृत्ति भी महादेवी की प्रकृति-चित्रण में द्रष्टव्य है । उनके काव्य में प्रकृति इतनी घुल मिल गयी है कि उसे विश्लेषण केलिए अलग करके देखना भी कठिन है । हिन्दी के वर्तमान कवियों में महादेवी जी ने प्रकृति के द्वारा अपनी भावनाओं को परिपूत अभिव्यक्ति दी है और विराट की प्रेमानुभूति केलिए उनके व्यक्तित्व को विशालता तथा भव्यता दी है । यही उनकेलिए प्रकृति की सब से बडी देन है[1] । महादेवी भाव-प्रधान कवयित्री हैं । भावोन्मेष ही उनमें जीवन साधक आशा आनन्द, तुष्टि, साहस, आस्था, उद्योग और व्यष्टि-समष्टि सम्बन्धी व्यापक अनुभूति और विरोधी तत्वों को उन्मीलित करने की शक्ति देता है । इसी भाव-भावना से उनमें आत्मनिष्ठा उत्पन्न हुई है[2] । उन्होंने अभिव्यक्ति के प्रत्येक क्षेत्रों में अपनी वैयक्तिकता और नवीनता का परिचय दिया है[3] ।

कुमारन आशान [1873 - 1924 ई॰]

मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों में महाकवि कुमारन आशान का सर्वोच्च स्थान है । "वीणपूवु" से "करुणा" तक की अपनी काव्य कृतियों के द्वारा मलयालम के साहित्य-जगत में एक हृदयवादी रोमानी काव्य विधा की अवतारणा और प्रतिष्ठा करने में वे अत्यंत सफल निकले । प्रारंभ में आशान ने शृंगारिक कविताओं की रचना में रुचि दिखायी थी । किन्तु श्री नारायण गुरु ने आशान की इस शृंगारी भाव पर असंतोष प्रकट किया । श्री गुरु का आशान पर स्पष्ट प्रभाव पडा । इस प्रभाव ने आशान के काव्य को और भी उदात्त बनाया ।

---

1. डॉ॰ त्रिभुवनसिंह - आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्दधारा - पृ॰170
2. शचीरानी गुर्टू - महादेवी वर्मा - काव्य,कला और जीवन दर्शन-पृ॰163
3. पद्मसिंह शर्मा कमलेश - वही

सन् 1915 में उच्च शिक्षा केलिए आशान बंगालूरचले गये । बांगलूर और कलकत्ता में उन्होंने करीब पांच वर्ष बिताये थे । यह प्रवास उनके जीवन का सब से महत्वपूर्ण काल माना जाता है । इस अवधि में उन्हें अपने ज्ञान और अनुभव के दिशा विस्तार का अपूर्व अवसर प्राप्त हुआ । उनके अन्यतम सामाजिक तथा साहित्यिक व्यक्तित्व का रूपायन भी इस समय हुआ था । बांगलूर के प्रवास में आशान को संस्कृत के विशाल साहित्य का विशेष अध्ययन और अनुशीलन करने का अवसर मिला । इससे उनकी भावना और चिंतन को एक नया रूप और रंग प्राप्त हुआ । वेदों तथा उपनिषदों के अध्ययन से उनमें अध्यात्मवाद और दार्शनिकता का बीजारोपण हुआ । महाकवि कालिदास के काव्यों ने उन्हें विशेषत: प्रभावित किया और उन लोकोत्तर रचनाओं के प्राण तत्वों को आत्मसात् कर उन्होंने अपनी काव्य-चेतना की गरिमा बढाई । इसी बीच आशान ने अंग्रेज़ी भी सीखी और उसके विपुल साहित्य का अध्ययन भी उन्होंने किया । कलकत्ता में रहते हुए उन्होंने बंगला साहित्य का भी अध्ययन किया । यह बंगाल के साहित्यिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक नवोत्थान का समय था । उन दिनों शरत्चन्द्र चेटरजी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, मैकेल मधुसूदनदत्त जैसे क्रांतदर्शी साहित्यकार पश्चिमी प्रभावको आत्मसात कर काव्य-साधना में लगे हुए थे । राजाराम मोहन राय, श्री रामकृष्ण परम हंस, स्वामी विवेकानन्द जैसे सामाजिक तथा आध्यात्मिक नेताओं के उद्बोधनों से बंगाल के जन-जीवन में नया जागरण हुआ था । बंगाल के इस साहित्यिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक नवोत्थान से आशान ने खूब लाभ उठाया था ।

पांच वर्ष के इस प्रवास काल में आशान को विभिन्न देशों और विभिन्न जन-विभागों का परिचय भी प्राप्त हुआ जिसने उनके अनुभवों को विस्तृत, चिंतन को सम्पुष्ट और दृष्टिकोण को परिष्कृत किया था । उन्होंने जीवन के सुख-दुखों का ज्वार-भाटा देखा, दुर्दैव की क्रूर लीलायें देखीं और स्वयं दुर्योग के विपदाओं का सहन किया । जीवन के इन कटु अनुभवों ने आशान को भाग्यवादी

और नश्वरतावादी दार्शनिक दृष्टिकोण प्रदान किया ।

सन् 1907 में "वीणपूवु" रोमान्टिक काव्य प्रवृत्ति का परिचय देते हुए प्रकाशित हुआ जो मर्मस्पर्शी अन्तर्भाव चित्रण और नये शिल्प के कारण मलयालम में नये काव्य-आन्दोलन की महान उपलब्धि के रूप में स्वीकृत किया गया । एक गिरे फूल ने कवि के अन्तर्मन की उपनिषदीय भ्रातृभाव को जगाया । "वीणपूव" का प्रकाशन साहित्य के क्षेत्र में एक ऐतिहासिक महत्व की घटना रही । इस ने एक नये प्रवर्द्धमान कवि की प्रतिभा के प्रकाश को फैलाया । वीणपूव कवि के अनुस्यूत अध्ययन और मनन तथा निस्तन्द्र साधना का सुपरिणाम है । कथ्य और शिल्प की दृष्टि से यह नितान्त नूतन रचना सिद्ध हुई और मलयालम काव्य जगत में इसका अपूर्व स्वागत हुआ । "वीणपूव" में एक सुमन को माध्यम बनाते हुए कवि ने जीवन के सौभाग्य-सौन्दर्य तथा रागात्मक संबन्धों की अनिवार्य शोकात्मक परिणति की ओर आर्षदृष्टि डाली है । प्रथम श्लोक में ही प्रज्ञाचक्षु कवि एक गहन प्रश्न प्रस्तुत करता है -

हाय कुसुम । अति तुंग पद पर
रानी की भाँति तु कितना शोभित था ।
श्री भूमि पर स्थिर नहीं यह है अविवाद
वह भूति तेरी हाय है कहाँ ? यह हाल कहाँ ?

वस्तुतः विमल प्रतिभावान हृदयों को ~~सी/ह~~ एक असाधारण अनुभूति के अमृत सरोवर में निमज्जन कराने की अपूर्व क्षमता "वीणपूव" में विद्यमान है।1

---

1. के. एम. डानियल - वीणपूव कणमुनपिल - पृ. 104

सन् 1911 में "नलिनी" का प्रकाशन हुआ । तत्कालीन मलयालम के प्रतिष्ठित काव्यालोचक एवं कवि ए॰आर॰ राजराजवर्मा ने इस काव्य की भूमिका में स्पष्ट किया कि यह काव्य एक नई काव्य प्रवृत्ति का दिशा-निर्देश कर रहा है । इस कथा काव्य में नलिनी और दिवाकर के अपार्थिव प्रेम जीवन की व्याख्या लौकिक धरातल पर हुई है । सत्वगुण से मण्डित व्यक्ति-चेतना में प्रेम के प्रभाव की अभिव्यक्ति में काव्य सौन्दर्य की जो अपूर्व झलक है वह देखते ही बनती है । "नलिनी" सचमुच आशान के आंतरिक संघर्ष की कहानी है । नलिनी और दिवाकर राग और विराग के प्रतीक हैं । नलिनी में प्रकृति-प्रेम और दार्शनिकता का सम्मिलन है । भाव, भाषा और काव्य शैली की दृष्टि से भी यह अत्यंत नवीन था ।

"लीला" तीन सर्गों में विभाजित एक सुन्दर खण्ड काव्य है । नलिनी और दिवाकर के सात्विक जीवन में जिस प्रेम-तत्व की छवि दिखायी पड़ी थी उसी की विवेचना लीला काव्य में राजसी भावों से अनुप्रेरित जीवन की भूमिका में की गयी है । लीला और मदन के प्रेम की काव्यात्मक अभिव्यक्ति मलयालम काव्य के भाव और शिल्प के विकास के नये आयाम का संकेत देती है । प्रत्यावर्तन शैली में कथा सूत्रों को ग्रथित करने में तथा नाटकीय शैली में काव्यारंभ और उसकी परिसमाप्ति करने में आशान ने अपूर्व क्षमता दिखायी है ।

आशान की अन्य रचनाओं की अपेक्षा "चिन्ताविष्टा सीता" का विशेष महत्व है । इसमें एक ऐतिहासिक पात्र सीता के विक्षुब्ध हृदय के उद्गारों का वर्णन मिलता है । पति परित्यक्ता सीता वाल्मीकि के आश्रम में, सन्ध्या-समय अपने तपोनिरत जीवन की संध्या में "उटजात-वाटि में अकेले बैठी हुई अपने अतीत जीवन अनुभवों का मानसिक आकलन करती है, हृदय और मस्तिष्क के गूढ - गुप्त व्यापारों का अनावरण करती है । आशान के प्रमुख खण्ड काव्य "नलिनी", "लीला", "चण्डालभिक्षुकी", "दुरवस्था" आदि में जिस प्रेम का चित्रण है, वह सामान्यत:

प्रेमी-प्रेमिका का प्रेम है । किन्तु "चिन्ताविष्टा सीता" प्रेमी-प्रेमिका के प्रेम का काव्य नहीं, दाम्पत्य-प्रेम का काव्य है[1] "सचमुच चिन्ताविष्टा सीता आशान के कवि-व्यक्तित्व की गरिमा बढानेवाला काव्य है । एक ऐतिहासिक पात्र को क्रान्तिकारी, किन्तु परम्परानुमोदित संस्कृति के अविरुद्ध विचार धारा में बहते दिखानेवाली कवि-कल्पना निराली और भारतीय साहित्य में अनुपम है ।

आशान के काव्य-विकास में "दुरवस्था" एक मील का पत्थर है । इसमें कवि ने सर्वप्रथम समसामयिक इतिवृत्त को काव्य का विषय बनाया । समाज को क्षति पहुंचानेवाली जाति-व्यवस्था और जाति के नाम पर कलह आशान को अत्यंत दुस्सह था । प्रस्तुत काव्य में कवि ने सामाजिक असमानता के प्रति अपना विरोध स्पष्ट प्रकट किया है । केरल के उत्तर भाग में हुए हिन्दु-मुस्लिम संघर्ष की पृष्ठभूमि में यह काव्य लिखा गया है । इसमें एक अभिजात वंश की कन्या सावित्री और एक अत्यंज युवक चात्तन के परिणय की कथा वर्णित है । अत: प्रगतिशील साहित्य में इस काव्य का महत्व अधिक है । "चण्डालभिक्षुकी" में भी कवि जाति - भेद की निरर्थकता की स्थापना की है । चण्डाल कन्या मातंगी का, बुद्धशिष्य आनन्द के प्रति जो अनुराग है उस के माध्यम से जाति पर आधारित समाज-व्यवस्था की कटु आलोचना कवि ने की है ।

आशान की अंतिम रचना "करुणा" में बुद्धशिष्य उपगुप्त पर अनुरक्त होने वाली वासवदत्ता नामक अभिसारिका के पवित्र और अनश्वर प्रेम की गाथा मिलती है । आशान की कवि-प्रतिभा का चरमोत्कर्ष इस काव्य में मिलता है । आशान की रचनाओं में शब्द और अर्थ की इतनी चारुता से पूर्ण और कोई कृति नहीं । मधुर एवं उदार दर्शन भी इस कृति की महिमा बढा देता है[1] । वस्तुत: आशान के काव्य में मनुष्य की आत्मशक्ति को उत्तेजित करनेवाला अत्युज्ज्वल आदर्शवाद का चित्रण मिलता है । स्पेनसर की भांति आशान को भी कवियों का कवि कहें तो उसमें कोई अत्युक्ति न होगी[2] ।

---

1. टी॰एम॰ चुम्मार - पद्यसाहित्य चरित्रम - पृ॰231

2. जोसफ मुण्डश्शेरी - मनुष्यकथानुगायिकल - पृ॰ 33

वल्लत्तोल नारायणमेनोन (1879- 1958 ई.)

मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य विकास में महाकवि वल्लत्तोल नारायण मेनोन का महत्व पूर्ण हाथ रहा है । वल्लत्तोल ने छोटी अवस्था में ही काव्य रचना में रुचि प्रदर्शित की थी । संस्कृत और मलयालम में स्फुट पद्यों की रचना का अभ्यास करते हुए उन्होंने अपने बारहें वर्ष में किरात शतकम नामक मलयालम काव्य की रचना की ।

सन् 1910 में "बधिरविलापम" काव्य की रचना की । श्रवण शक्ति के नष्ट होने पर कवि को जो दुख अनुभव हुआ उसकी अभिव्यक्ति ही इस लघु काव्य में मिलती है । कवि ने जिस शोक का इसमें वाणी दी । वह अत्यंत मार्मिक है । "बधिर विलापम" के प्रणयन के बाद ही वल्लत्तोल स्वच्छन्दतावादी कवि के रूप में विख्यात हो गये । वल्लत्तोल की अगली रचना है "चित्रयोगम" । यह एक महाकाव्य है जिसकी रचना केलिए कवि ने कथा सारी सागर का आश्रय लिया है ।

वल्लत्तोल का प्रसिद्ध खण्ड काव्य है "बन्धनस्थनाय अनिरुद्धन" (बन्धनस्थ अनिरुद्ध) । यह एक प्रेम काव्य है । "रूप और भाव का इतना सुंदर सामंजस्य मलयालम की किसी अन्य रचना में मिलना मुश्किल है[1] । उषा और अनिरुद्ध का प्रेम-प्रकाशन ही काव्य में आद्यांत मिलता है । प्रेम के सम्मुख अपने परिवार को ही नहीं, अपने प्राण तक त्यागने केलिए तैयार होने वाली नायिका और धीरोदात्त तथा आत्माभिमानी नायक का समागम इस काव्य में अत्यंत मनोरम हुआ है । अत्यंत औचित्यपूर्ण संवाद भी इस काव्य की विशेषता है । पौराणिक पात्र उषा में आधुनिक केरल की वीर वनिता का दर्शन होता है ।

---

1. टी. एम. चुम्मार - पद्यसाहित्य चरित्रम - पृ.246

जब उषा का प्रेमी अनिरुद्ध कारागार में बन्दी हो जाता है तो वह उसे एक बार देखने की इच्छा मंत्री से प्रकट करती है । यह भाग अत्यधिक मर्मस्पर्शी है । अपने पिता के प्रति रोष प्रकट करती हुई उषा कहती है -

ञानाल्यथि ञाहवन्नित्यत्ताणु तन्ने -
त्तानार्यपुत्रनेपुन्नल्कयल्ल येल्लु
नानातरत्तिलपराधमोरायकु बन्धु -
स्थानात्तियन्पयुम्मितोअलिवरर्थम् ?

अर्थात् - मेरे दूती भेजने पर ही मेरे प्रेमी यहाँ आये । वे अपनी इच्छा से स्वयं नहीं पधारे । एक पर कई प्रकार के अपराध लगाये गये हैं, दूसरे को कारावास का दण्ड दिया गया है, क्या, यही अतिथि का धर्म है ?

वल्लत्तोल की अनेक स्फुट कविताओं का संकलन "साहित्य मंजरी" में किया गया है । इसके आठ-नौ भाग हैं । इस में संग्रहित कवितायें मलयालम की काव्य-प्रगति की ओर स्पष्ट संकेत करती हैं । प्रथम भाग की कविताओं में "मातृवन्दनम", "मातृभूमि", "वीरपत्नी" आदि विशेष उल्लेखनीय है । द्वितीय भाग की कविताओं में प्रमुख है, "सत्यगाथा", "पूर्णमंडलम", "उण्णानिल्ला", "उटुक्कानिल्ला" (खाने को नहीं, पहनने को नहीं) आदि । इनमें कवि की उज्ज्वलता, भाव संपन्नता रसात्मकता तथा आस्तिकता का परिचय मिलता है । तृतीय भाग में राधयुटे कृतार्थता, कर्मभूमियुटे पिंचुकाल, एन्टे गुरुनाथन आदि विख्यात कवितायें संग्रहीत हैं । एन्टे गुरुनाथन (मेरे गुरुदेव) में शिष्य वल्लत्तोल ने अपने गुरु महात्मा गांधी के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की है । किलिक्कोञ्जल नामक कविता का विषय पुराण से लिया गया है । वल्लत्तोल की भावुकता पर चार चाँद लगाने में समर्थ है यह कविता । किलिक्कोञ्जल *नामक कविता का विषय* वल्लत्तोल के कल्पना वैभव तथा कलाकुशलता की विजय वैजयन्ती है[1] ।

---

1. पी. के. परमेश्वरन नायर - मलयालम साहित्यचरित्रम - पृ.203

"साहित्य मंजरी" में संग्रहीत सभी रचनाओं में कवि की स्वच्छन्दतावादी चेतना का उत्कर्ष द्रष्टव्य है। इन कविताओं को हम वैयक्तिक, स्वानुभूति पूर्ण, सामाजिक, राजनैतिक आदि कई भागों में विभाजित कर सकते हैं। इनमें वर्णित विषयों से कवि के अगाध ज्ञान और अनुभव का भी परिचय मिलता है। भारतीय संस्कृति तथा भारत की स्वतंत्रता आदि पर लिखते समय कवि भावावेश से पूरित हो जाता है। मातृभूमि, मातृभाषा और भारत के महापुरुषों पर लिखते समय कवि हृदय अभिमान से पुलकित हो जाता है। केरल और भारत पर वल्लत्तोल ने अनेक कविताएं लिखी हैं। भारत का यशोगान करने में कवि ने विशेष रुचि दिखायी है। देश के नेताओं और महत्वपूर्ण घटनाओं पर कविताएं लिखने की इच्छा भी उन्हें हमेशा होती थी। स्वतंत्रता-आन्दोलन पर उन्होंने जो कविताएं लिखी हैं उन से कवि का देश प्रेम प्रकट होता है।

धीरे-धीरे वल्लत्तोल की कविता मानव प्रेम की उदात्त भूमि का स्पर्श करने लगी। वल्लत्तोल कोमल हृदय के कवि थे। अतः दीन-दलितों और दुखी किसानों की व्यथा का चित्रण उन्होंने खुल कर किया है। समाज में प्रचलित जाति-व्यवस्था पर भी कवि ने प्रहार किया। "जाति प्रभावम" शीर्षक कविता में कवि बड़े परुष शब्दों में कहते हैं, जाति ! हाय ! यह शब्द नारकीय है। इसके दो अक्षर संसार को खा जाने वाले पिशाच के ग्रंथ के अक्षर हैं।

भारत के प्राचीन आदर्श पुरुषों पर लिखते समय वल्लत्तोल कविता में उत्कट भावावेश में प्राप्त होता है। जनक जैसे आत्मज्ञानी, परशुराम जैसे वीर, वाल्मीकि, व्यास आदि महर्षियों पर लिखते समय वल्लत्तोल का हृदय भावावेश से उमड़ने लगता है।

पुराणों से कथावस्तु ग्रहण करते हुए जीवन की आलोचनापूर्ण और भी अनेक खण्ड काव्यों की रचना कवि ने की। उनमें प्रमुख हैं शिष्यनुं मकनुम, मग्दलनमरियम, कोच्चुसीता और अच्छनुं मकलुम। पौराणिक विषयों का प्रतिपादन

होते हुए भी इन काव्यों में एक विशेष नवीनता है । वल्लत्तोल का सब से प्रमुख खण्ड काव्य है "मग्दलनमरियम" । "शीमोन"नामक एक धनी का आतिथ्य ग्रहण करके ईसा उस के यहाँ रात का भोजन करने आते हैं । तब मरियम नामक वेश्या अपने अतीत के पापपूर्ण जीवन के बारे में सोचकर पश्चात्ताप प्रकट करती है । उसकी आँसुओं से ईसा का चरण सरोरुह धुल जाते हैं साथ ही मरियम का पाप भी धुल जाता है । यही इस की कथावस्तु है । इस कथानक को वल्लत्तोल ने अत्यंत मनोवैज्ञानिक रीति से संगठित किया है । मरियम का पश्चात्ताप उसके हृदय को पवित्र कर देता है । अत: पाप से उसकी मुक्ति अत्यंत युक्तिसंगत लगती है । वल्लत्तोल के औचित्य तथा कला-कुशलता के लिए उनके काव्यों में सब से उत्तम दृष्टांत है मग्दलनमरियम[1] ।

वल्लत्तोल की कविताओं में प्रकृति-चित्रण विपुल मात्रा में मिलता है । प्राकृतिक-सुषमा का चित्ताकर्षक चित्रण करने में वे पटु हैं । वल्लत्तोल के प्रकृति सौन्दर्य चित्रण में महाकवि कालिदास का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है । खण्ड काव्यों के अतिरिक्त मातृवन्दना, ओरु उल्नाट्टिले म कुकालम {एक गाँव का जाडा}, भारतप्पुष़ा {भारतनदी}, प्रभात कीर्तनम् आदि लघु कविताएं भी प्रकृति सौन्दर्य चित्रण की दृष्टि से अत्यंत महत्व रखती हैं ।

अंग्रेज़ी शिक्षा से वंचित होने पर भी वल्लत्तोल पश्चिमी साहित्य तथा दर्शन की सरणि में बहुत दूर तक यात्रा कर सके । सहज ज्ञान तृष्णा और अन्वेषण बुद्धि के कारण पाण्डित्य का अर्जन उन्होंने स्वप्रयत्न से ही प्राप्त किया वल्लत्तोल की कविता-सरणि में पश्चिमी साहित्य का गहरा प्रभाव द्रष्टव्य है । अपने खण्ड काव्यों तथा लघु-कविताओं में कवि ने पश्चिमी काव्य रूपों का अनुसरण किया है । मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य विकास में वल्लत्तोल का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है ।

---

1. पी॰के॰ परमेश्वरन नायर - मलयालम साहित्य चरित्रम - पृ॰109

उल्लूर परमेश्वर अय्यर {1877 - 1947 ई•}

मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों में उल्लूर एस• परमेश्वर अय्यर की कविता अत्यंत पाण्डित्यपूर्ण है । प्रशासकीय सेवा में लगे रहने पर भी उल्लूर ने साहित्य-साधना की अपूर्व क्षमता दिखायी । उनके जीवन की सफलता का रहस्य था कठिन परिश्रम । अपने प्रयत्न से उल्लूर ने एम•ए• की परीक्षा उत्तीर्ण की । पुराण, साहित्य और इतिहास में उल्लूर विपुल ज्ञान प्राप्त कर सके । उन्होंने केरलीय साहित्य का बृहद् इतिहास लिखा जो उनकी विद्वत्ता का सूचक है । इतना विशद और बृहद् इतिहास मलयालम में और किसी ने नहीं लिखा । दूसरे लेखकों के ग्रंथों की भूमिका के रूप में उन्होंने जो आलोचनात्मक लेख लिखे वे साहित्य के विद्यार्थी केलिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं । कविता लिखने की रुचि उल्लूर में बचपन से ही विद्यमान थी । चौदह वर्ष की अवस्था में उल्लूर ने कुछ कविताएं लिख कर केरल कालिदास के नाम से विख्यात केरलवर्मा को भेंट कीं । उल्लूर की काव्य-साधना तीस वर्ष की लंबी अवधि तक व्याप्त है ।

उल्लूर के काव्य-रचनाकाल को तीन युगों में विभाजित कर सकते हैं - परंपरावादी परंपरावाद से स्वच्छन्दतावाद की ओर बढनेवाली और स्वच्छन्दतावादी । प्राचीन काव्य पद्धति पर उल्लूर ने जो कविताएं लिखीं उनमें प्रमुख हैं - सुजादोद्वाहम चम्पू, मंगल मंजरी और वंजीशगीति । प्रथम काव्य पौराणिक कथा पर आधारित है । वंजीशगीति में ट्रावनकोर राजाओं की प्रशंसा मिलती है । इस के पश्चात् उल्लूर ने "उमाकेरलम" नामक महाकाव्य का प्रणयन किया । इसकी रचना के साथ ही उल्लूर महाकवि के रूप में विख्यात हो गये । "उमाकेरलम" में उल्लूर के परंपरावादी काव्य-विधा का परिचय मिलता है । प्राचीन ट्रावनकोर के इतिहास की कुछ घटनाओं के आधार पर ही यह महाकाव्य लिखा गया है । उन्नीस सर्गों में विभाजित इस काव्य में इतिहास और कल्पना का सुन्दर समावेश मिलता है । वस्तुत: एक उदात्त महाकवि का उदात्त महाकाव्य है "उमाकेरलम" ।

G3960

खण्ड काव्यों की रचना में उल्लूर पूर्ण सफल निकले । उनके प्रसिद्ध खण्ड काव्य हैं "कर्णभूषणम्", "पिंगला" और "भक्ति दीपिका"। उल्लूर ने अपने काव्यों का विषय पुराणों से ग्रहण किया । पौराणिक कथा के आधार पर लिखे गये काव्यों में कर्णभूषणम् का प्रमुख स्थान है । कवि-कर्म में उल्लूर की सफलता का उद्घोष करनेवाला काव्य भी यही है[1] । महाभारत के वन-पर्व की कथा के आधार पर ही प्रस्तुत काव्य का प्रणयन किया गया है । महापराक्रमी एवं वीर कर्ण और उस के पिता सूर्य की भेंट का वर्णन इस में मिलता है । कर्ण और सूर्य के संवाद का प्रसंग अत्यंत रोचक बन गया है । पौराणिक कथाओं में कवि का गहरा ज्ञान सर्वत्र प्रकट होता है । उल्लूर की काव्य-प्रतिभा उन्मेष इसमें द्रष्टव्य है ।

"पिंगला" की रचना में कवि ने पूर्ण रूप से पौराणिक कलावस्तु को ग्रहण किया है । वेश्या पिंगला का हृदय परिवर्तन ही इस काव्य का प्रतिपाद्य है । ~~मलयालम के अन्य खण्ड काव्यों प्रतिपाद्य है~~ । मलयालम के अन्य खण्ड काव्यों की तुलना में पिंगला का अत्यधिक महत्त्व है । इसकी कुछ पंक्तियों का काव्य-सौन्दर्य मलयालम के अन्य स्वच्छन्दतावादी काव्य कृतियों में दुर्लभ है ।

उल्लूर के खण्ड काव्यों में "भक्तिदीपिका" का भी विशेष महत्त्व है । यह काव्य भी पौराणिक कथा पर आधारित है । शैली की विविधता, चरित्र-चित्रण की पूर्णता तथा काव्य में सर्वांगीण रूप से व्याप्त माधुर्य के कारण "भक्ति-दीपिका" कवि की अन्य रचनाओं को पीछे छोड़ता है । श्री॰ शंकराचार्य के शिष्य सनन्दन ज्ञान पर गर्वित होकर भगवान नृसिंह की साधना में वर्षों तक लगे रहे । उन्हें वन में चात्तन नामक एक शूद्र सेवा केलिए मिल गया । भोला चात्तन ने सनन्दन केलिए अदृश्य नृसिंह को अपनी पवित्र साधना से प्रसन्न किया । यही

---

1. टी॰एम॰ चुम्मार - पद्य साहित्य चरित्रम - पृ॰139

इस का प्रतिपाद्य है । चरित्र-चित्रण में कवि ने अत्यधिक उत्कर्ष का परिचय दिया है "भक्तिदीपिका" की सब से बडी विशेषता उसका भाव सौन्दर्य है । पाप, पुण्य, प्रेम, भक्ति आदि भावों के अर्थ और तात्पर्य की इतनी सुन्दर अभिव्यक्ति अन्यत्र नहीं है ।

विषय की विविधता एवं रचनाओं की अधिकता की दृष्टि से उल्लूर का विशेष महत्व है । सामाजिक, धार्मिक, ऐतिहासिक तथा राजनैतिक विषय उनके काव्य में स्थान प्राप्त कर सके । काव्य की सभी विधाओं पर उन्होंने लेखनी चलायी । उल्लूर कविता की सर्वांगीण महानता भावों का उत्कर्ष है । उन्होंने हमेशा उदात्त भावों की ही अवतारणा की है । मलयालम के विख्यात आलोचक सुकुमार अषीक्कोड ने उल्लूर को मलयालम के कवियों में सब से प्रगतिशील दार्शनिक की उपाधि दी है[1] ।

उल्लूर की लघु कविताओं के कई संग्रह मिलते हैं जिन में प्रमुख हैं, किरणावली, तारहारम, अमृतधारा, मणिमंजूषा, कल्पशाखी और तप्तहृदयम । इन सभी काव्य संग्रहों में उल्लूर की स्वच्छन्दतावादी काव्य-चेतना का परिचय मिल जाता है इन काव्य संग्रहों की छोटी बडी सभी कविताएं मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य-भण्डार के अमूल्य रत्न हैं ।

उल्लूर की प्रेमसंगीत नामक कविता वस्तुतः प्रेम शास्त्र का उपनिषद है । इस संसार में जीवन बितानेवाले सभी मनुष्यों केलिए अत्यंत आवश्यक प्रेम, विश्वास, सहानुभूति तथा सेवापरायणता पर इतनी हृदयगम कविता संसार में और किसी कवि ने लिखी है इस में संदेह है[2] । प्रेम की महिमा पर लिखते हुए कवि कहते हैं -

---

1. सुकुमार अषीकोड - उल्लूर कविता
2. आर॰ रामचन्द्रन नायर - उल्लूरिन्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - प्रस्तावना ।

ओरोट्टमक्तमृण्डलकिन्नुयिराम
प्रेमक्तोन्मल्लो
परक्के नम्मे प्यालमृतुदट्टुम
पार्वण शशिबिम्बम ।

अर्थात्, संसार के सार रूप में एक ही धर्म जो है वह प्रेम के सिवा और कुछ नहीं । प्रेम तो हमें अमृत पिलानेवाला चन्द्र है ।

यहाँ प्रेम को कवि ने एक महान धर्म ही घोषित किया है ।

"ऐक्यगाथा" नामक कविता भी स्वच्छन्दतावादी चेतना से पूर्ण है । यह मानव राशि की एकता से बढ़कर संसार के समस्त चराचरों की एकता का संदेश प्रदान करनेवाला उज्ज्वल काव्य है । "सौभ्रात्र गानम" नामक कविता में विश्व-भ्रातृत्व के उदात्त भाव का उद्घोष है ।

अन्य स्वच्छन्दतावादी कवियों की भाँति उल्लूर भी प्रकृति की ओर अत्यधिक आकृष्ट हुए । उनकी रचनाओं में प्रकृति के अभिराम रूपों का हृदयहारी चित्रण मिलता है । उल्लूर की कविता में प्रकट होनेवाली और एक विशेषता कवि का उत्कट मानव प्रेम है । दीन-दुखियों के प्रति कवि ने अत्यधिक सहानुभूति प्रदर्शित की है ।

उल्लूर की कविताएं आदि से अंत तक ओज गुण से पूर्ण हैं । काव्य प्रभावम, शिशुगीता, मालती आदि कविताएं इसके उत्तम निदर्शन हैं। उत्कृष्ट भावों को कविता में अभिव्यक्त करने में उल्लूर सिद्धहस्त हैं । उल्लूर को भावों का कवि कहें तो कोई अत्युक्ति न होगी । इस दृष्टि से वे एषुत्तच्छन और आशान के समकक्ष हैं । आशान और वल्लत्तोल की भाँति मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य-विकास में उल्लूर की देन अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं ।

चंगंपुषा कृष्ण पिल्ले {1912 - 1948 ई॰}

कुमारन आशान, वल्लत्तोल और उल्लूर के पश्चात् मलयालम के काव्य-क्षेत्र में प्रविष्ट होनेवाले स्वच्छन्दतावादियों में सब से प्रमुख हैं चंगंपुषा कृष्ण पिल्ले। बाल्यावस्था से ही कवि के हृदय में कविता की रुचि विद्यमान थी। वे नौ वर्ष की अवस्था में ही कविता का प्रणयन करने लगे। उस छोटी अवस्था से जीवन के अंत तक उनकी लेखनी निरंतर काव्य-निर्माण में व्यस्त रही। प्रेम और विषाद को लेकर कवि काव्य-क्षेत्र में अवतीर्ण हुए। प्रेम-संबन्धी कविताएं इसके पहले भी बहुत लिखी गयी थीं। किन्तु चंगंपुषा के काव्य में जो प्रेम है, उसमें अनुभूति की तीव्रता है। इसका प्रमुख कारण यह है कि चंगंपुषा का जीवन और काव्य में घनिष्ठ संबन्ध था। कवि ने अधिकतः अपने जीवन के अनुभवों को ही कविता में वाणी दी।

चंगंपुषा कुल मिलाकर सत्तावन साहित्यिक रचनाओं के प्रणेता हैं। इनमें कुछ विश्वोत्तर दीर्घ काव्य, कविता-संग्रह, खण्डकाव्य, अनूदित रचनाएं, उपन्यास आदि सम्मिलित हैं। आधुनिक मलयालम काव्य के विकास में चंगंपुषा का योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। चंगंपुषा का आगमन मलयालम स्वच्छन्दतावादी काव्य के इतिहास में एक अभूतपूर्व घटना थी। वह एक अनन्य प्रतिभावान कवि का आगमन था।

मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य को उत्कर्ष की उच्च कोटि में पहुँचाने का श्रेय चंगंपुषा को प्राप्त है। उनकी कविताओं की मुख्य विशेषताएं हैं - सौन्दर्य के प्रति अदम्य मोह, संगीतात्मकता, सरलता, उत्कट भावावेश और सुन्दर शब्द-चयन। मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य को नया रूप और भाव प्रदान करने में चंगंपुषा अत्यंत सफल हुए।

चंगंपुषा की प्रारंभिक रचनाओं में अंग्रेज़ी साहित्य के अतिरिक्त रवीन्द्रनाथ ठाकुर का प्रभाव भी देखने को मिलता है । आगे की रचनाओं में संस्कृत तथा अंग्रेज़ी में प्राप्त विश्व साहित्य की अनश्वर रचनाओं का प्रभाव भी द्रष्टव्य है । फ्रान्सीसी साहित्य का प्रतीकवाद और शुद्ध कवितावाद ने भी कवि को आकृष्ट किया । "बुराई के फूल"नामक विख्यात काव्य के रचयिता बोदलेयर का चंगंपुषा के काव्य में ही नहीं जीवन में भी स्पष्ट प्रभाव पडा है ।

चंगंपुषा की प्रतिभा का पूर्ण विकास गीतिकाव्य में ही देखा जा सकता है । चंगंपुषा की कल्पना को सबसे अधिक उद्दीप्त करनेवाला विषय प्रेम था । अनुवाद केलिए उन्होंने जो रचनायें चुनीं ; उनका विषय भी प्रेम है । प्रेम चंगंपुषा की कविता की केन्द्र बिन्दु है । अत: प्रेम गायक की उपाधि चंगंपुषा केलिए सर्वथा योग्य है । युवा सहज प्रणय-संकल्प के अनगिनत भाव वैचित्र्यों का आवाहन करने वाली एक अद्भुत सिद्धि चंगंपुषा की कल्पना का सार तत्व है[1] । कवि की सब से प्रमुख रचना "रमणन" स्वच्छन्दतावादी प्रेम का कलापूर्ण स्मृति - चिह्न के रूप में उद्भासित होता है । आराधकन, मोहिनी, मानस्वेश्वरी, वत्सला, देवता यवनिका आदि उनकी सभी दीर्घ कविताओं का मुख्य प्रतिपाद्य प्रेम ही है । उनके भावगीतों में भी प्रेम का मनोरम स्वर ही मुखरित होता है ।

चंगंपुषा की कविताओं का मोहक आकर्षण उसकी संगीतात्मकता है । ऐसी संगीतात्मक कविताओं का निर्माण मलयालम में पहले और बाद के किसी कवि ने नहीं किया है । यह हृदयहारी संगीतात्मकता ही उनकी कविताओं की लोक-प्रियता का मुख्य कारण है । वह केवल बाह्य संगीत नहीं, हृदय से निर्गलित होनेवाला संगीत है । स्निग्ध कोमल शब्द-विन्यास ने उस संगीत के श्रवण-सुख में चार चांद लगा दिया है[2] ।

1• जी• कुमारपिल्ले - चंगंपुषा कृतिकल - प्रथम भाग - प्रस्तावना
2• पी•के• परमेश्वरन नायर - मलयालम साहित्य चरित्रम - पृ•244

चंगंपुषा का प्रथम काव्य संग्रह है "बाष्पांजली"। इसका प्रकाशन 1934 ई॰ हुआ। असीम निराशा और जीवन की कठिनाइयों से दबकर दीन स्वर में विलपने वाले आर्द्र हृदय की निष्कलंक ध्वनियाँ इन कविताओं में मुखरित होती हैं।[1]

अगली रचना है "रमणन" जो चंगंपुषा की लोकप्रियता का मुख्य आधार है। चंगंपुषा का मित्र और सुकवि इडप्पल्लि राघवन पिल्ले के विफल प्रेम और आत्महत्या को कवि ने इस में वाणी दी है। राघवन पिल्ले ने सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति के विरुद्ध एक ऊँचे घराने की लड़की से प्रेम किया। उनका विश्वास था कि लड़की भी उनसे अदम्य अनुराग रखती है। किन्तु समय के बीतने पर लड़की ने अपना प्रेम अनुचित समझा। आभिजात्य के अनुसार दूसरे व्यक्ति के साथ उसका विवाह हुआ। यह दु:खपूर्ण घटना ने राघवन पिल्ले के हृदय में तीव्र आघात पहुँचाया और उन्होंने जीवन से विदा ली। अपने मित्र के इस जीवनानुभव के आधार पर ही चंगंपुषा ने "रमणन" की रचना की।

"रमणन" एक आरण्यक विलाप काव्य [पास्टोरल एलेजी] है। उसके शिल्प के निर्माण में स्पेन्सर का "षेप्पेड्स कलन्डर" और मिलटन का "लिसिडस" आदि काव्यों का प्रभाव पड़ा है। किन्तु "रमणन" का स्वर और प्रतिपाद्य ही कवि की अपनी कल्पना का ही परिणाम है। काव्य की पृष्ठभूमि भी बिलकुल केरलीय है। इसका पृष्ठभूमि नाटकीय संवाद अत्यंत सजीव तथा मनोरम हैं काव्य में आदि से अंत तक प्रकृति का अभिराम रूप जो मिलता है, वह कवि की स्वच्छन्दतावादी चेतना का परिचायक है। संगीतात्मकता प्रकृति का मनोहारी चित्रण, ललित और हृदयहारी भाषा ये सब रमणन की विशेषतायें हैं। छोटी अवधि में रमणन की 64 हज़ार से अधिक प्रतियाँ बिक गयी हैं जो इस अमर कृति की लोकप्रियता का सूचक है। मलयालम की किसी अन्य काव्य-कृति को इतनी लोकप्रियता प्राप्त नहीं हुई है।

---

1. ई॰ वी॰ कृष्णपिल्ले - बाष्पान्जली की भूमिका

"रक्तपुष्पगल" नामक काव्य-संग्रह में कवि की भावुकता का स्पष्ट दर्शन मिलता है । इस में कवि सामाजिक व्यवस्था की विषमता के विरुद्ध आवाज़ उठाते हैं । इस संग्रह की "वाष़क्कुला" {केलों का गुच्छा} नामक प्रथम कविता ही इसका प्रमाण है । मलयालम की प्रगतिवादी काव्य-कृतियों में इसका प्रमुख स्थान है । समाज के दीन-दुखियों के प्रति कवि की सहानुभूति इस में दर्शनीय है ।

"स्पन्दिक्कुन्न अस्थिमाटम" {स्पन्दित अस्थिमंडप} भी कवि की प्रौढ़ रचना है । इस संग्रह की सभी कविताएं कवि की स्वच्छन्दतावादी विचार धारा का निदर्शन हैं । इस की प्रमुख कविताएं हैं - "स्पन्दित अस्थिमंडप", "उपासिनी", "आनन्दलहरी", "भावश्रम", "एन्टे कविता", {मेरी कविता} तेङ्ङुकलुटे विडिङत्तम {नारियल के पेडों की मूर्खता} पट्टिटणिक्कार {भूखे} और "शालिनी" । मलयालम के विख्यात आलोचक ए॰बालकृष्ण पिल्ले ने "स्पन्दिक्कुन्न अस्थिमाटम" को चंगंपुषा का सब से प्रमुख काव्य-संग्रह माना है[1] ।

चंगंपुषा का अंतिम काव्य-संग्रह है "स्वरराग सुधा" । इस संग्रह की सब से प्रमुख कविताएं "मनस्विनी" और "काव्यनर्तकी" हैं । "मनस्विनी" में साध्वी प्रेयसी को कवि अपने प्रेम का उद्‌गार सुनाते हैं । इस कविता में कवि के हृदय की वेदना का भी परिचय मिलता है । वेदना का अनुभव करते करते कवि स्वयं वेदना का स्वागत करने लगते हैं ।
यथा -

वेदन, वेदन, लहरिपिटिक्कुम
वेदन - ञानतिल मुक्कट्टे ।
मुक्कट्टे, मम जीवनिल निन्नोरु
मुरली मृदुरवमोक्कट्टे ।

---

1. ए॰ बालकृष्ण पिल्ले - स्पन्दिक्कुन्न अस्थिमाटम - भूमिका

अर्थात् हे वेदने, उन्मत्त वेदने, मैं मुझमें डूब जाऊं। और तब मेरे प्राण से एक मृदु मुरली - गान निर्गलित हो उठे।

`काव्य नर्तकी" में भी कवि की अनुपम कल्पना का उत्कर्ष द्रष्टव्य है। रूठकर जानेवाली काव्य देवी से कवि रुकने का अनुरोध करते हैं।

प्रकृति और सौन्दर्य की उपासना करनेवाले चंगंपुषा की काव्य कृतियाँ मलयालम स्वच्छन्दतावादी साहित्य की ही नहीं, अपितु विश्व साहित्य की भी महान उपलब्धियाँ हैं।

<u>जी॰ शंकर कुरुप ॥1901 - 1978 ई॰॥</u>

जी॰ शंकर कुरुप एक प्रकृति के सौन्दर्योपासक कवि के रूप में काव्य-क्षेत्र में प्रविष्ट हुए। प्रकृति-प्रेम "जी" की सभी कविताओं में पर्याप्त मात्रा में द्रष्टव्य है। प्रकृति का कवि पर गहरा प्रभाव पड़ा है। इस बात की ओर वे स्वयं संकेत करते हैं और कहते हैं कि अपने गांव का जीवन, वहाँ की परिस्थितियाँ और वहाँ की अभिराम प्रकृति मेरे काव्य पर गहरा प्रभाव डालने में समर्थ हुई। मेरी कविता इस गांव के हृदय का ही एक अंश है। प्रकृति के सम्मुख सिर झुकाकर प्रणाम करने के उपरान्त ही वे काव्य-साधना में लग गये।

नीरन्ध्रनील जलदप्पलकप्पुरत्तु
वारन्जिटुन्नवलरविल्लुवरच्चुमाच्चुम
नेरट्ट केवलकलाल चिल मिन्नल चेर्त्तुम
पारम लसिक्कुममल प्रकृतिक्कु कुप्पाम।

अर्थात्ः नील नीरद आकाश रूपी फलक पर मनोहर इन्द्रधनुष अंकित कर और उसे

1· जी॰शंकरकुरुप - मुत्तुचिप्पियुम ॥मोती और सीपी॥एन्टे कविता॥मेरी कविता॥ पृ॰13

मिटती हुई अपनी लीला में तल्लीन उस अपूर्व प्रकृति सुन्दरी के सामने मैं अंजली जोड़ता हूँ । अपनी अमूल्य प्रतिभा, स्वतंत्र व्यक्तित्व एवं ईमानदारी के कारण वे अपने समय के मूर्धन्य कवि बन गये । आशान, वल्लत्तोल और उल्लूर की अगली पीढ़ी के सब से लब्ध प्रतिष्ठ कवि शंकर कुरुप हैं । पैंतीस से अधिक काव्य ग्रंथों की रचना करके उन्होंने मलयालम के साहित्य भण्डार को समृद्ध किया ।

शंकर कुरुप जब काव्य-क्षेत्र में प्रविष्ट हुए तब आशान, वल्लत्तोल और उल्लूर काफी प्रसिद्ध हो चुके थे । इन तीनों स्वच्छन्दतावादी कवियों का प्रभाव शंकरकुरुप पर पड़ा । कवि ने इन तीनों का अनुकरण भी किया । जी पर वल्लत्तोल का प्रभाव ही अधिक मात्रा में मिलता है । जी की प्रारंभिक कविताएं प्रकृति और प्रेम के चित्रों से संयुक्त है । "साहित्य कौतुकम" की सभी कविताओं में वल्लत्तोल का प्रभाव द्रष्टव्य है । इन कविताओं के प्रतिपाद्य, आविष्करण, और काव्य शीर्षकों तक कवि ने वल्लत्तोल से पर्याप्त प्रेरणा पायी है ।

जी॰ की कविताओं में स्वच्छन्दतावादी चेतना का स्पष्ट स्फुरण विद्यमान है । वस्तुत: निश्चल प्रकृति - प्रेम ही जी की मुख्य स्वच्छन्दतावादी विशेषता है । प्रकृति के साथ आत्मीयता प्राप्त करने में जी अत्यधिक सफल हुए । प्रकृति की सुषमा का आस्वादन करने में ही नहीं, अपितु प्रकृति में स्वयं विलीन होने की चाह तक कवि प्रकट करता है । प्रकृति के साथ कवि-हृदय के तादात्म्य के फलस्वरूप "जी" की प्रकृति मानव प्रकृति बन गयी । बाल्यकाल में कवि ने जो एकांत जीवन बिताया उसके अनुभवों ने रवीन्द्र की भांति जी को भी प्रकृति की गोद में पहुँचाया । कवि ने स्वयं लिखा है "मामा ने मुझे खेलने या साथियों के साथ उधम मचाने केलिए अवसर नहीं दिया । ....

..... ऐसे एक बालक के मित्र हरी-भरी पहाड़ियाँ, सुनहरे खेत, झरने, आकाश में चमकनेवाले तारकों का समूह और सुन्दर सन्ध्या ही तो है । यही वह परिवेश था जिसमें मुझे एकांत में भी एकाकी न रहने देकर मेरे व्यक्तित्व को

विकसित किया[1]।

"जी" की कविताओं का मुख्य विषय प्रेम है । किन्तु वह "वेण्मणि" कवियों का मांसल प्रेम नहीं । वह यथार्थ व स्वाभाविक है । कुमारन आशान की भांति "जी" ने भी प्रेम की अनश्वरता पर बल दिया है । प्रारंभ से ही जी सौन्दर्य के भी उपासक रहे हैं । शंकर कुरुप की प्रारंभिक रचनाओं का संग्रह है "साहित्य कौतुकम" । इसे कवि के जीवन-विकास तथा साहित्य विकास का उज्ज्वल निदर्शन मानना चाहिए । इस में जो कविताएं संग्रहीत हैं, वे कवि के दस वर्ष की साहित्य साधना का सुपरिणाम हैं । मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य के इतिहास को एक नयी गति प्रदान करने में ये कविताएं समर्थ सिद्ध हुई । इनमें जो सौम्यता, जो सौन्दर्य और जो भावोत्कर्ष हैं, वह अन्यत्र नहीं । "जी" की कविता का मुख्य स्वभाव गतिशीलता है[2] । यह विशेषता साहित्य कौतुकम में द्रष्टव्य है । "जी" की काव्य-साधना को एक दीर्घ अन्वेषण और गंभीर दर्शन कहना उचित होगा । वस्तुत: "साहित्य कौतुकम" में मलयालम के एक अनन्य प्रतिभावान कवि की महती कल्पना का उत्कर्ष देखने को मिलता है ।

अगली रचना "विलास लहरी" है जो उमर खैयाम की रुबाइयों का सुन्दर अनुवाद है । "सूर्यकान्ति" [सूरजमुखी] का प्रकाशन 1933 ई॰ में हुआ, जो मलयालम काव्य-साहित्य की एक ऐतिहासिक घटना थी ।

कवि की आत्मा की अभिव्यक्ति गीति काव्य में ही अधिक हुई । भाव-गीत के प्रणयन में "जी" सिद्धहस्त हैं । कल्पना लोक की ओर तीव्रगति से अग्रसर होनेवाली एक भाव संपुष्ट आत्मा का गुंजन इन गीतों में मुखरित होता है । "पंकजगीतम", "निशागीतम", "भृंगगीतम", "सूर्यकान्ति" आदि आत्मालाप-प्रधान कविताओं में यह गुण विशेष द्रष्टव्य है । सहृदयों के हृदय का स्पर्श करने में सक्षम कविता है "साक्षात्कारम" जिस में अध्यात्म भावों से पूर्ण रवीन्द्र की कविताओं

---

1. जी॰ शंकर कुरुप - मुत्तुचिप्पियुम - पृ॰17-18
2. एम॰एन॰ विजयन- साहित्य कौतुकम - भूमिका

का स्वर सुनाई पड़ता है । रवीन्द्र के विश्व-प्रेम एवं सार्वभौम दर्शन ने "जी" को बहुत प्रभावित किया है ।

"जी" को प्रतीकवादी या रहस्यवादी कुछ भी कहो, किन्तु वे हमेशा एक रोमान्टिक हैं । बाहरी प्रकृति और मानव जीवन से सत्य को ग्रहण करने तथा उन मोतियों से विशेष कला रूपों की रचना करने में उनका रोमान्टिक कवि निरन्तर प्रयत्नशील है[1] ।

कवि-हृदय और बाह्य लोक के सम्मिलन से ही महान साहित्य का सृजन होता है । इस भाव को अभिव्यक्त करनेवाला गीत है "नाले" [कल] इसमें कवि प्रगतिवादी दृष्टि से भविष्य की कल्पना करता है । इस में कवि अभिजात पात्र को चेतावनी देता है कि कर्म विजय की विद्रुम पताका लिए हुए नये लोक का अभियान करनेवाला एक "कल" आ रहा है । उस "कल" में परंपरागत अभिमान और दम्भ नष्ट हो जायेंगी और समस्त लोगों को सुख-सुविधाएं प्राप्त होंगी, सभी लोगों को न्याय प्राप्त होगा । इस कविता में कवि का मानव-प्रेम दर्शनीय है । "पूजापुष्पम" "चेंकतिरुकल" [लाल किरणें], "निमिषम" [निमिष] "वनगायकन" आदि काव्य-संकलनों की अधिकांश कविताएं जनसाधारण के जीवन और उनकी विषम समस्याओं से संबन्धित हैं । यहाँ कवि की प्रगतिवादी दृष्टि का भी परिचय मिलता है । "कलकरियुटे काव्यम" [कोयले का काव्य], तुम्पुक्कारि [मेहतरानी] आदि गीतों का मुख्य स्वर भी मानव - प्रेम का है । जीर्णशीर्ण और पतनोन्मुख जीवन को एक नया रूप प्रदान करने में जिम्मेदार कलाकार की स्वास्थ्यप्रद दृष्टि इन गीतों को चेतना प्रदान करती है । नवोन्मेषशालिनी कवि-प्रतिभा के सूक्ष्म स्फुरण का अनुभव होनेवाला एक उत्कृष्ट भाव-गीत है "निमिषम" । यह गीत इस बात की ओर भी संकेत करता है कि कविता की प्रगति में कवि का वैज्ञानिक और दार्शनिक दृष्टिकोण कहाँ तक सहायक है । "पथिकन्टे पाट्टु" [पथिक का गीत] "वन्दर्दाहम", "चित्रालेखम", "पेसिल्वन" आदि गीत भी अत्यंत मनोरम हैं ।

---

1. एम.एस. मेनोन - "जीयुटे काव्य साधना" - पृ. 50

"जीवन से भागने का प्रयत्न नहीं, अपितु जीवन की विषमताओं से उत्पन्न वेदना की अभिव्यक्ति ही इन गीतों के प्रणयन में कवि का उद्देश्य है। वस्तुत: जीवन की अनुभूतियों के उदात्त और उज्ज्वल अभिव्यंजन "जी" के भाव-गीतों में परिलक्षित होता है। मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य के विकास में जी शंकरकुरुप का योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

हिन्दी और मलयालम के प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियों की काव्य-साधना पर दृष्टिपात करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन कवियों के काव्य के प्रमुख प्रतिपाद्य प्रेम और सौन्दर्य हैं। प्रेम और सौन्दर्य की उदात्त और गरिमायुक्त अभिव्यक्ति को ही इनके काव्य में प्रमुखता मिली है। अगले अध्यायों में हम प्रेम और सौन्दर्य के स्वरूप पर विचार करते हुए हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में अभिव्यक्त प्रेम और सौन्दर्य का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करेंगे।

तीसरा अध्याय

प्रेम और सौन्दर्य का स्वरूप

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में चित्रित प्रेम और सौन्दर्य के तुलनात्मक अध्ययन करने के पहले प्रेम और सौन्दर्य के सामान्य स्वरूप का विवेचन करना उचित प्रतीत होता है । हम आगे निम्न शीर्षकों पर विचार करेंगे ।

§1§ प्रेम का स्वरूप §2§ सौन्दर्य का स्वरूप ।

§1§ प्रेम का स्वरूप

व्युत्पत्ति और शब्दार्थ

प्रेम के स्वरूप पर विचार कर लेने से पूर्व उसकी व्युत्पत्ति पर प्रकाश डालना उचित होगा । "प्रेमन्" शब्द से प्रेम की व्युत्पत्ति हुई है । "प्रेमन्" भाववाचक संज्ञा शब्द है । वाचसत्य कोष के अनुसार "प्रिय" शब्द से इसकी व्युत्पत्ति हुई है

यथा, "प्रियस्य भाव: इमनिच् प्रत्यय प्रादेश:"[1]

---

1. वाचस्पत्यकोष - पृ.4520

प्रियस्य भावः - प्रेमा (पुल्लिंग) । प्रिय "प्र" प्रकृति तथा भावार्थक इमनिच् प्रत्यय से "प्रेमा" शब्द निष्पन्न हुआ । अतः "प्रेमन्" का अर्थ हुआ प्रियता, प्रिय का भाव या प्रिय होना ।

"प्रेमन्" शब्द की व्युत्पत्ति "प्री" (अर्थात् प्रसन्न करना, आनन्द लेना या आनन्दित होना) । धातु से मनिन् (मन्) प्रत्यय जोड़कर भी हो सकती है ।

व्याकरणानुसार प्रेम शब्द की एक और व्युत्पत्ति हो सकती है । "प्रीञ्" प्रीतौ" धातु से उणादि सूत्र "सर्व धातुभ्यः" से मनिन् प्रत्यय करके प्रेम शब्द की व्युत्पत्ति हुई है । इस प्रकार व्युत्पत्तिलभ्य "प्रेम" शब्द का अर्थ हुआ - जो प्रीति देता हो, अर्थात् अनन्त आनन्द या तृप्ति प्रदान करता हो ।

शब्दार्थ

"प्रेम" शब्द के विभिन्न अर्थों की व्याप्ति से यह स्पष्ट विदित होता है कि यह शब्द अत्यंत व्यापक है । इसके शब्दार्थ से ही इसकी विशाल भावना का बोध होता है । वाचस्पत्य कोषकार तथा अमरकोषकार आप्टे ने इस शब्द में अनेक सूक्ष्म भावनाओं का वाहक बताया है[1] । संस्कृत-अंग्रेजी कोष में आप्टे ने प्रेम के कई अर्थ बताये हैं[2] ।

---

1. सौहार्द स्नेहे हर्षे (वाचस्पत्य कोष - पृ.4540
प्रेमा ना प्रियता हार्दं प्रेम स्नेहोऽथ दोहदम् ।
(अमरकोष प्रथम काण्डम्)

2. "Love, affection, favour, kindness, kind or tender, sport, pastime, joy, delight, gladness
Apte (Sanskrit - English Dictionary - 1922
p.340

पाश्चात्य कोषकारों ने भी प्रेम की यही विशाल भावना को प्रमुखता दी है साथ ही उन्होंने उसे सूक्ष्मता प्रदान की है[1]।

---

1. "Love, affection, kindness, tender regard, favour, predilection, fondness" - Sir Monier Williams : Sanskrit - English Dictionary - Second edition (Oxford, 1899) p.711

A feeling of strong personal attachment induced by that which delights or commands admiration, by sympathetic understanding, or by ties of kinship or ardent affection.

Manifestation of desire for, and earnest effort to promote, the welfare of a person, esp. as seen in God's solicitude for men and men's due gratitude and reverence to God.

Strong liking, fondness, goodwill, the object of ideal regard, as love of learning, love of freedom, love of country, love of money, tender and passionate affection for one of the opposite sex, as to marry without love, also an instance of love, a love affair.

Sexual passion or, rare, its gratification.

The object of affection, often employed in endearing addresses, cupid, or Eros, as the God of Love, etc.

Websters' New International Dictionary of English Language p.1279

कोषों में जो अर्थ बताये गये हैं वे पूर्ण प्रामाणिक होते हैं, क्योंकि उनके अर्थों का आधार साधारणत: व्याकरणगत व साहित्यगत प्रयोग आदि होते हैं। इसके अतिरिक्त हम देखते हैं कि कवियों, दार्शनिकों तथा अन्य साधकों के द्वारा भी अनुभव व अध्ययन के आधार पर शब्दों के वास्तविक अर्थों की स्थापना होती है। अत: प्रेम शब्द का अर्थ भली भाँति समझने केलिए कुछ परिभाषाओं या विचारसूत्रों का उल्लेख अत्यन्त आवश्यक है। ऐसी कतिपय परिभाषाएं एवं विचारसूत्र नीचे दिये जाते हैं।

परिभाषायें

"विशिष्ट वस्तु या व्यक्ति के प्रति होने पर लोभ वह सात्विक रूप प्राप्त करता है जिसे प्रीति या प्रेम कहते हैं"[1]।
"प्रेम ऐहिक सान्निध्य की पार्थिव आकांक्षा है। अन्य प्रवृत्तियों की भाँति वह भी नितांत भौतिक है"।

"The love, like the sun, expands the self ..... love means perception of beauty.... A man who has never loved can never realise God, that is a fact'[2]

Swami Ram Tirtha.

अर्थात् सच्चा प्रेम सूर्य की भाँति आत्मा के प्रकाश को फैलाता है .... प्रेम का अर्थ है वास्तविक सौन्दर्य का दर्शन... यह सत्य है कि जिसने कभी प्रेम नहीं किया, उसे ईश्वर की प्राप्ति हो ही नहीं सकती।

---

1. चिन्तामणि-1 - लोभ और प्रीति" नामक लेख
पं. रामचन्द्र शुक्ल

2. 'Heart of Rama' p.130 & 133

'For love is the ultimate meaning of everything a-round us. It is not a mere sentiment; it is truth; it is the joy that is at the root of all creation. It is the white light of pure consciousness that emanates from Brahma .... It is through the Lightening of our consciousness into love, and extending it all over the world that we can attain Brahma - Vihara, communion with this infinite joy' Tagore

आशय यह है कि प्रेम केवल एक भावना मात्र ही नहीं है । वह परमार्थ है, परम सत्य है, सृष्टि की आनन्द-प्रेरणा है, ब्रह्म की शुभ्र ज्योति है, इसी के द्वारा हम ब्रह्म विहार कर सकते हैं ।

'To achieve this contact or communion (love) is the final aim and purpose of human existence'[2]

- Radhakrishnan

'Both popular and philosophic thought has recognized these deep foundations of love. Popular thought has given the same name to the affective tie that binds man and woman sexually, man and man in friendship and parents and child in family relationship. A king's love for his people, a disciple's love for his teacher, an animal's love for its young and its master have all been included in the one category inspite of various differences'.[3]

Christopher caudwell

---

1. Tagore : Sadhana (1947) p.107
2. From preface to Dilipkumar Roy's Among the Great 1950
3. Studies in a Dying culture (1949, London) p.131-132

आशय यह है कि विभिन्न मानवों को और विभिन्न सामाजिक वर्गों, संबन्धों और प्राणियों को एक सूत्र में बांधने में सक्षम उदात्त भाव है प्रेम। अनेक विभिन्नताओं के होते हुए भी मूल में एक प्रेम ही है। जिसकी नींव की गहराई, व्यवहार और दर्शन, इन दोनों क्षेत्रों में स्वीकृत है।

'All things must die, but love alone eludes mortality. It overleaps the tombs and bridges the charm of death with generations... Our wealth is a weariness and our wisdom is a little light that chills; but love warms the heart with unspeakable solace, even more when it is given than when it is received. All other things are futile; let us cherish it'.[1]

- Will Durant.

आशय यह है कि प्रेम के अतिरिक्त इस संसार में सब कुछ नश्वर है। प्रेम यदि न हो तो धन-सम्पत्ति भार है और हमारा ज्ञान-ध्यान एक ऐसा प्रकाश है जो जीवन की जड़ता या अन्धकार को कुछ और बढ़ाता ही है, घटाता नहीं। सचमुच प्रेम ही वह मधुर ऊष्मा है जो हृदय को तर-गरम रखता है और अनिर्वचनीय तृप्ति व शान्ति प्रदान करता है। लेने में नहीं, देने में ही प्रेम का स्वाद है। सब कुछ बेकार है, बस प्रेम ही एक सार वस्तु है।

'The meaning of love speaking generally, is the justification and deliverance of individuality through sacrifice of egoism'[2]

- VLADIMIR SOLOVYEN

---

1. Will Durant : The mansions of philosophy, 1929 p.170-171

2. Quoted from 'Psychology of Sex' by Oswald Schwarz, p.98-99

अर्थात् सामान्यत: प्रेम का अर्थ है अहंकार के त्याग द्वारा अपनी मुक्ति ।

"अनिर्वचनीयं प्रेमस्वरूपम । मूकास्वादनवत् । प्रकाशते क्वापि पात्रे । गुणरहितं कामनारहितं प्रतिक्षणवर्धमानमविच्छिन्नं सूक्ष्मतरमनुभवरूपं । तत्प्राप्य तदेवावलोकयति तदेव शृणोति तदेव भाषयति तदेव चिन्तयति"[1] ।

उपर्युक्त परिभाषाओं एवं विचारसूत्रों से पूर्वी तथा पश्चिमी दार्शनिकों व विद्वानों की प्रेम-विषयक धारणाओं का पता चल सकता है । इन परिभाषाओं में कुछ तो आत्मपरक हैं तो कुछ वस्तुपरक । यहाँ प्रश्न यह है कि क्या प्रेम को इस प्रकार आत्मपरक या वस्तुपरक जैसी कोटियों में विभाजित करना उचित है या नहीं, या ये दोनों पक्ष एक ही मूल वस्तु के दो रूप हैं, जो ऊपर से देखने से विभिन्न लगने पर भी मूल में एक ही चीज़ है । इसका जवाब मिलने केलिए हमें प्रेम के मूलस्त्रोत का मनन करना चाहिए ।

<u>प्रेम का स्त्रोत</u>

प्रेम का उद्भव जीवन के प्रथम उन्मेष के साथ ही हुआ है । जब मनुष्य को अपने अस्तित्व का बोध होने लगा तभी प्रेम की वृति उसमें अंकुरित होने लगी होती ।

---

1. नारदभक्तिसूत्र - 53 से 55 सूत्र - महर्षि नारद

वस्तुतः प्रेम की प्रक्रिया का विकास स्थूल से सूक्ष्म और व्यष्टि से समष्टि की ओर होता है । प्रेमी और प्रेमिका के प्रेम में अनत्व, अनन्यता और पूर्णतः समर्पण की भावना निहित रहती है । प्रिय ही प्रेमी का गन्तव्य हो जाता है । इसीलिए वह प्रिय के विचारों, भावों और आस्थाओं से प्रेम करने लगता है । दैहिक बोध से ऊपर उठने पर दोनों की क्रियाएं परार्थ पर होने लगती हैं । उनकी आत्मा का प्रसार और उन्नयन होने लगता है । इस प्रकार प्रेम की सीमाएं विस्तृत होने लगती हैं । अपने विकास-क्रम में प्रेमी - प्रेमिका का पारस्परिक प्रेम सम्पूर्ण सृष्टि के प्रति प्रेम में विनिमज्जित हो जाता है । वही प्रेम अन्ततोगत्वा जीवन के चरम आनन्द की प्राप्ति की ओर उन्हें अग्रसर करता है । 1

प्रेम के गुण व महत्व

अब हम प्रेम के गुण व उसके महत्व पर थोड़ा विचार करें । प्रेम किसी भी रूप [भक्ति, दाम्पत्य, वात्सल्य, श्रद्धा आदि] का हो, उसका मुख्य लक्षण है आत्मा को तृप्त करना । किन्तु यह वास्तविक तृप्ति भी तभी सम्भव है जब कि प्रेम उच्च गुणों से संयुक्त हो । ऐसा ही प्रेम तप्त, मुक्त या पवित्र करनेवाला होता है । मानव को इस तृप्ति का अनुभव उसकी अपनी छोटी सी "स्व" की सीमा से लेकर व्यापक "पर" की सीमा तक होता है या हो सकता है । वस्तुतः आत्मा का यही रसमय अनुभव जीवन की पूर्णता का अनुभव है । मनुष्य केलिए यह तृप्ति अत्यंत आवश्यक या यों कहिए कि अनिवार्य है, अन्यथा उसका जीवन निष्प्रयोजन और विफल ही है । प्रतिभा, धन, मान सम्मान व ख्याति आदि सब

---

1. प्रसाद का साहित्य : प्रेम तात्त्विक दृष्टि - प्रभाकर श्रोत्रिय पृ.3

इस अनुभव के अभाव में प्राणहीन हैं। आत्मा प्रेम से ही सरस स्वस्थ व प्रफुल्लित होती है । प्रेम के अभाव में जीवन जड़ व दीन है । इसलिए इस तृप्ति की खोज में मनुष्य नाना प्रकार के शारीरिक व मानसिक कष्ट झेलता है, संयम करता है, त्याग करता है व सर्वथ कंटकाकीर्ण पथ पर चलता है, बदले में प्रिय हमारे लिए चाहे कुछ भी न करे । प्रेमी केलिए इतना ही बहुत है कि उसका प्रिय उसके पास [दूर रहते हुए भी हृदय केलिए निकट] है । इतने से ही सच्चे प्रेमी का सारा दुःख दूर हो जाता है[1] । प्रेम जब धर्माचरणयुक्त होकर स्त्री और पुरुष के प्राकृतिक यौन-संबन्धों में प्रकट होता है, तब रति व्यापार में भी ब्रह्म की ही इच्छा प्रकाशित होती है । यह प्रेम इतना पवित्र है कि प्रेमियों की आत्मायें हमेशा केलिए मिल जाती हैं । भवभूति ने ऐसे प्रेम को पूर्व-पुण्यों का फल मानकर उस के भोक्ता को धन्य कहा है[2] । वस्तुतः प्रेम को सृष्टि का सर्वोच्च नियम मानना चाहिए । यदि प्रेम न होता तो सृष्टि में आनंद भी न होता । प्रेम ही जीवन की प्रेरणा प्रदान करता है । वह जीवन की स्फूर्ति है । वह जीवन की प्रतिभा है ।

तुलसी ने प्रेम के अनेक सुन्दर चित्र प्रस्तुत किए हैं । चातक व मेघ के प्रेम के बहाने प्रतीक रूप से, तुलसी ने राम के प्रति अपने प्रेम का जो वर्णन किया है उस में प्रेम के सब गुण विद्यमान हैं[3] । तुलसी की यह प्रेम-कल्पना हृदय का समूल प्रक्षालन करने में समर्थ है । निर्मल व उदात्त प्रेम का ऐसा चित्र अन्यत्र मिलना कठिन है ।

---

1. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल - आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य - पृ. 106
2. उत्तररामचरित - I / 40
3. तुलसीदास - दोहावली, दोहे 277 से 298 तक ।

यूनानी दार्शनिक प्लेटो (Plato) ने भी प्रेम के महान गुणों का वर्णन करके उसे उन्नत आध्यात्मिक धरातल पर प्रतिष्ठित किया है। उस ने "प्रेम-देवता" की कल्पना करके प्रेम का आदर्श स्थापित करते हुए अपनी प्रेम विषयक उदात्त धारणा व्यक्त की है[1]। मनुस्मृति में बताया गया है कि संसार में ऐसी कोई क्रिया नहीं है जो प्रेम व रागात्मक प्रवृत्ति से संचालित न होती हो :

अकामस्य क्रिया काचिद् दृश्यते नेह कर्हिचित्[2]।

पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक विद्वान सेम्पसनमोर भी इससे सहमत हैं[3]। शुक्ल जी प्रेम को मनुष्य के सम्पूर्ण कर्म-पथ को प्रकाशपूर्ण करनेवाला भाव मानते हैं। उनके अनुसार विद्वत्ता, कला, प्रतिभा, उत्साह आदि में प्रेम का ही प्रसार दृश्यमान है[4]। प्रेम ऐसा एकमात्र रस है जो सर्वाधिक व्यापक प्रभाव डालता है। यही कारण है कि अभिनव गुप्त इस को सब रसों से श्रेष्ठ कहते हैं[5]। आचार्य भोजराज के मतानुसार प्रेम की व्याप्ति अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। अतः इस को ही एक मात्र रस मानना चाहिए। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक हवेलाक एलिस ने पशु-पक्षियों में भी विशुद्ध प्रेम के विकास का वर्णन किया है। उन्होंने एक चिड़िया जाति का उदाहरण प्रस्तुत किया है, जिसके जोड़े में से एक की मृत्यु हो जाने पर दूसरे की भी मृत्यु हो जाती है[6]।

---

1. Plato 'Symposium'(Translated by W.Hamilton) p.70-72
2. मनुस्मृति - 2 / 4
3. Sampson Moor : Sex in Religion p.16
4. जीवन के अनुभव की दृष्टि से प्रेम का प्रसार विद्वत्ता, प्रतिभा, कला, उत्साह आदि में भी होता है। वह मनुष्य के सम्पूर्ण कर्म पथ को आलोक दीप्त कर देता है।
   रामचन्द्रशुक्ल - चिन्तामणि-भाग-1, (लोभ और प्रीति)पृ.91
5. Bhoja's Srngara prakash - Dr.V.Raghavan. from p.468
6. Psychology of Sex - Havelock Ellis p.275

बर्ट्रेंड रसेल प्रेम को ऐहिक जगत् से पारलौकिक जगत तक व्याप्त भावना मानते हैं[1]। कविवर सूर के अनुसार प्रेम का प्रसार मनुष्य के लौकिक भाव-बोध से भी आगे अलौकिक जगत् तक भी है। उनके अनुसार प्रेम ईश्वर-प्राप्ति का साधन भी है[2]। प्रसाद के अनुसार प्रेम सारे संसार का चालक है। वह अत्यंत व्यापक भाव-धारा है। उसके आकर्षण से ही पृथ्वी निरन्तर घूमती है और दिन रात बनते हैं। इसके ताप को मरु, धरती, गिरि, सिन्धु आदि आनंद के साथ धारण करते हैं[3]। "कामायनी" में हम देखते हैं कि लौकिक प्रेम ही विकसित होकर मनु को "आनंदलोक" तक ले जाता है।

प्रसाद के प्रेम संबन्धी धारणा को स्पष्ट करते हुए श्री प्रभाकर श्रोत्रिय ने प्रेम का एक सुन्दर एवं व्यापक निर्वचन प्रस्तुत किया है:

प्रेम एक ऐसा अत्यंत सद्भावत, गुंफित, अनादि एवं चराचर व्यापी भाव है, या एक ऐसा बोध है, जो व्यक्ति के भीतर सराहना और आनंद का कारण होता है, जो किसी के सामीप्य, साहचर्य और एकात्मता की कामना करता है, अनन्यता, अनुकूल - वेदनीयता, परार्थपरता और त्याग की भावना से युक्त होता है, किसी पर अधिकार की चाह, कृपा तथा उसकी सुख-समृद्धि की इच्छा करता है, और हर तरह के खतरे झेलकर भी उसमें सहायक होता है। तृप्ति

---

1. Love should be a tree whose roots are deep in the earth, but whose branches extent into heaven.
 - Bertrand Russell - Marriage and Morals.

2. प्रेम-प्रेम सों होय,प्रेम सों पारहि जैये।
प्रेम बंध्यो संसार, प्रेम परमारथ पैये।।
एकै निश्चय प्रेम को जीवन मुक्ति रसाल।
सांचो निश्चय प्रेम को, जाहिं मिलै गोपाल।
भंवरगीत [सूर-साहित्य] पृ.34

3. प्रेम-पथिक - पृ.23

की इच्छा और आवश्यकता से उत्पन्न यह एक ऐसा समर्पणमय राग है जो अहम् और काम से आरम्भ होकर निरहंकारिता और निष्काम समर्पण की पराकाष्ठा पर पहुंचता है तथा व्यक्ति की सीमाओं में से निकल कर सम्पूर्ण सृष्टि की सीमाओं में बिखर जाता है। इसका प्रसार मनुष्य के सम्पूर्ण कर्तृत्व में हो जाता है[1]।

वस्तुत: प्रेम मंगलमय है। वह संसार के अस्तित्व का आधार है। वह स्वयं भी उदात्त जीवन का लक्ष्य है। प्रेम अनश्वर है।

प्रेम के विविध रूप

मानव-जीवन में प्रेम के अनेक रूप मिलते हैं। सामान्यत: प्रेम के मुख्य रूप को हम इस प्रकार विभाजित कर सकते हैं -

(1) स्त्री-पुरुष प्रेम
(2) प्रकृति-प्रेम
(3) देश-प्रेम
(4) विश्व-प्रेम
(5) ईश्वरीय प्रेम

1. स्त्री-पुरुष प्रेम

वय:प्राप्त व संयोगसुखाभिलाषी स्त्री-पुरुष के रूप गुण-जन्य पारस्परिक आकर्षण से अनायास उत्पन्न मादन-भाव के नैसर्गिक प्रेम को प्रणय कहते हैं[2]। हमारे हृदय में होनेवाले राग-तत्व है उससे सब

---

1. प्रभाकर श्रोत्रिय : प्रसाद का साहित्य:प्रेमतात्विक दृष्टि-पृ.33
2. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य - पृ.117

प्रकार के प्रेम संबन्धों में गुंजन उत्पन्न होता है । वह भी सब से अधिक स्त्री-पुरुष के मादन प्रेम-भाव में ही संभव है[1]। स्त्री-पुरुष के संभाग व्यापार भी चैतन्य से प्रकाशित होने पर आध्यात्मिक महत्त्व से पूर्ण हो जाते हैं । चैतन्य का प्रकाश सभी प्रेम-संबन्धों को सुन्दर व दिव्य बनाता है । पाश्चात्य मनोवैज्ञानिकों ने विवाहित जीवन में अध्यात्म की संभावनाओं को बड़ी वैज्ञानिक स्पष्टता के साथ व्यक्त किया है[2]। जीवन में अनुभूत मादन भाव के

---

1. Will Durant : The Mansious of Philosophy, p.162-163

2. Many cases of marriage failures come to the psychologist for adjustment. Cases in which in spite of the real attachment of husband and wife, and the desires of both to realise a spiritual union, the union is not attained and the family has begun to disintegrate.
- Knight Dunlap quoted from 'The Sexual side of Marriage by M.S. Exner, M.D.(1949) p.1949-50

Truly human sex relationships mean not merely a union of bodies but a union of two personalities'
Ibid p.66

"The approach to the physical is by way of the spiritual. When the woman has been wooed and won into spiritual harmony she will give herself to passionate expression of love with free and full abandon. And only so can the men also experience real fulfilment of love.
Ibid p.71

There are, as we know, two main functions in the sexual relationship or what in the biological sense we term marriage, among civilized human beings, the primary psychological function of be getting and bearing off spring and the secondary spiritual function of furthering the higher mental and emotional processes.

Ibid p.71

प्रेम को काव्य की मूल प्रेरणा का स्रोत कहा जा सकता है। इस प्रेम का विवेचन साहित्यशास्त्र में "श्रृंगार रस" के शास्त्रीय विवेचन में देखने को मिलता है। संयोग और विप्रलम्भ नामक श्रृंगार रस के दो भेद माने जाते हैं, यद्यपि जीवन व्यवहार में संयोग ही आनंद का पूर्ण अनुभव कराता है, तो भी काव्य में विप्रलम्भ या वियोग श्रृंगार का भी महत्वपूर्ण स्थान है। इस का मुख्य कारण यह है कि वियोग में प्रेमियों की जिन जीवन स्थितियों का अनुभव है, वे उनके हृदय को मुलायम और स्निग्ध बनाती है। वियोग वर्णन प्रधान काव्य ही अधिक मार्मिक होते हैं।

2. प्रकृति-प्रेम

प्रकृति विषयक रति या प्रकृति प्रेम हमारे हृदय की रति-वृत्ति का प्रमुख खंड है। मानव व प्रकृति का अनादिकाल से घनिष्ठतम संबन्ध रहा है। एक को दूसरे से अलग करके देखना जीवन-समष्टि की यथार्थ सत्ता ओझल देखना है। प्रकृति के दर्शन से मनुष्य के हृदय में एक अनादि व चिर-निगूढ़ मुक्तितरंगवती प्रेम भावना उत्पन्न होती है। काव्य में भाव-व्यंजना तथा दृश्य चित्रण दोनों का उपजीव्य भी यही प्रकृति प्रेम है। प्रकृति-प्रेम या प्रकृति की परिस्थितियों की उचित अवतारणा के बिना कवि मानव जीवन का सजीव तथा सरस चित्रण करने में असमर्थ रहता है। वास्तविक प्रकृति-प्रेम किसी एक रूप, दृश्य, वनस्थली या भू-खंड के ही प्रति प्रेम न होकर, कृत्रिम भौगोलिक सीमाओं को तोड़, समस्त प्रकृति के साथ तादात्म्य की अनुभूति है। यह अनुभूति जितनी ही संश्लिष्ट या समष्टिगत होती है

उसमें अपना ही प्राण-प्रवेश रहता है । प्रकृति के प्रति सच्चा प्रेम वास्तव में विश्व-भर से प्रेम करने की अनमोल प्रेरणा प्रदान करता है, अतः निबन्ध और प्रकृति प्रेम केवल अपने ही प्रांत या देश की प्रकृति तक सीमित रहना नहीं जानता । प्रकृति प्रेम मानव-प्रेम केलिए मार्ग प्रशस्त करता है[1] । वर्डस्वर्थ जैसे जैसे कवि की प्रकृति का सूक्ष्म दर्शन करने से बड़े मनुष्य की चित्तवृत्ति व अंतर्दृष्टि की प्राप्ति होती है[2] । प्रकृति के कोमल तथा परुष दोनों रूप समान रूप से आकर्षक हैं । केवल प्रकृति के मधुर व कोमल रूप के प्रति आकृष्ट होने से हमारा प्रकृति प्रेम अपूर्ण रह जाता है । आचार्य शुक्ल जी इसकी ओर संकेत करते हैं । प्रकृति के सिर्फ कोमल रूप के प्रति आकर्षण रखनेवालों वे प्रकृति के सच्चे प्रेमी नहीं मानते[3] । सच्चे प्रकृति प्रेमी कवि तो प्रकृति के कोमल तथा परुष दोनों रूपों से अपना घनिष्ट प्रेम प्रकट करते हैं[4] । अंग्रेज़ कवियों में शेल्ली (Shelley) का यह प्रकृति प्रेम विशेष द्रष्टव्य है[5] । ऐसे कवियों को प्रकृति के सच्चे प्रेमी कह सकते हैं । वे प्रकृति के पुजारी हैं ।

---

1. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल - आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य" - पृ.127

2. That serene and blessed mood/ In which the affection's gently lead us on/until, the breath of this corporeal frame/And even the motion of our human blood/Almost suspended, we are laid asleep/In body, and become alivi soul/While with an eye made quiet by the power/Of harmony, and the deep power of joy/ We see into the life of thing'. wordsworth - Tintern Abbey.

3. चिंतामणि - भाग-1 में "कविता क्या है" नामक निबन्ध, तथा चिन्तामणि, भाग -2 में "काव्य में प्राकृतिक दृश्य" नामक लेख ।

4. भवभूति : उत्तररामचरित - कालिदास "रघुवंश" ।

5. I love snow and all the forms / If the radiant trost;/ Everything almost / Which is nature's and may be / Untainted by man's misery/
Shelley - Invocation.

3. देश-प्रेम

अपने देश के प्रति प्रेम प्रकट करना ही देश-प्रेम है । सच्चे देश-प्रेमी के लिए देश की संपूर्ण वस्तुएं प्रिय लगती हैं । देश की जनता ही नहीं, देश की भाषाएं तथा प्रकृति (समुद्र, पहाड, नदियां, आकाश, पेड-पौधे, पशु-पक्षी) भी उसकेलिए अत्यंत प्रिय होते हैं । यहां तक कि देश की मिट्टी को देखकर भी वह आनन्दित हो उठेगा । सच्चा देश प्रेमी अपने देश के भूत, वर्तमान तथा भविष्य इन तीनों कालों से प्रेम रखेगा । वह अपने देश के समान अतीत वैभव (प्राचीन कला और साहित्य, संस्कृति तथा सभ्यता आदि) से प्रेम करेगा, देश की वर्तमान स्थितियों को देखकर वह पुलकित हो उठेगा तथा एक उज्ज्वल भविष्य को देखने की अभिलाषा रखेगा । आज "देश" शब्द की व्याप्ति तो बहुत बडी है । छत्रपति शिवाजी केलिए महाराष्ट्र ही देश था । किन्तु आज देश शब्द पुरानी संकुचित सीमा का उल्लंघन करके अत्यंत व्यापक हो गया है । उसमें अनेक धर्म तथा संस्कृतियों के साथ एक विशाल भू-भाग की भावना भर गयी है । ऐसे विशाल देश से प्रेम करनेवाला वास्तव में महत्व का पात्र बन जाता है । देश प्रेम का हमारे रागात्मक हृदय के साथ घनिष्ठ संबन्ध होने के कारण साहित्य में भी इसका महत्वपूर्ण स्थान है ।

4. विश्व-प्रेम

राष्ट्रीयता, भाषा, जाति, धर्म तथा भौगोलिक सीमाओं का उल्लंघन करके जो मानव-मात्र का प्रेमी हो जाता है वही विश्व प्रेमी या मानव प्रेमी कहलाता है । विश्व-प्रेम या मानव-प्रेम आज की प्रमुख समस्याओं में एक है । अतः साहित्य में इस भावना का

बडा महत्व है । विश्व-प्रेम में मानवता की सबसे बडी साधना निहित है । भारतवासियों के लिए यह कोई नयी बात नहीं है । "उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्" ।, यह उक्ति तो इसका प्रमाण है । किन्तु आज जब कि संसार में राष्ट्र-राष्ट्र, धर्म-धर्म, तथा भाषा-भाषा का पारस्परिक संघर्ष छिडा हुआ है, इस प्रेम का प्रकाशन कवियों के काव्य में एक नवीन ही कांति धारण करता दिखाई दे रहा है[1] । अब प्रश्न उठ सकता है कि अन्तर्राष्ट्रीयता प्राप्त करने में राष्ट्रीयता बाधक होगी कि नहीं ? हां, कभी-कभी वह बाधक बन जाती है । और अगर ऐसा अनुभव होगा तो अन्तराष्ट्रीयता जैसे महत्वपूर्ण लक्ष्य केलिए हमें राष्ट्रीयता को त्यागना होगा । दृष्टि में अच्छे संतुलन का विकास करके हम अच्छे राष्ट्रीय तथा अच्छे अन्तर्राष्ट्रीय बन सकते हैं । राष्ट्र-प्रेम वस्तुत: विश्व-प्रेम या मानव-प्रेम की प्रयोगशाला है । विश्व-प्रेम की प्राप्ति ही हमें अपना चरम लक्ष्य समझना चाहिए ।

5. <u>ईश्वरीय-प्रेम</u>

श्रद्धा और प्रेम के योग से होनेवाली धर्म की रसात्मक अनुभूति को भक्ति कहते हैं[2] । भक्ति के दो भेद किया जा सकता है : (1) निर्गुण भक्ति और (2) सगुण भक्ति । वस्तुत: निर्गुण ही सगुण रूप में प्रकट होता है । अत: भक्ति की मूल सत्ता निर्गुण ही है ।

---

1. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल - आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य - पृ.13।
2. श्रद्धा और प्रेम के योग का नाम "भक्ति" है तथा धर्म की रसात्मक अनुभूति का नाम भक्ति है" ।
   पं. रामचन्द्र शुक्ल : चिन्तामणि, भाग-1, "श्रद्धाभक्ति" और "मानस की धर्मभूमि" नामक लेख ।

प्रेम के विविध रूपों में भक्ति का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है । भक्ति साधक को अखण्ड आनंद प्रदान करती है । भक्ति अमृत-स्वरूप है । इस के प्राप्त होने पर मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है, संतृप्त हो जाता है ।

इस प्रेम का मुख्य रूप आत्म समर्पण है । यह प्रेम अनिर्वचनीय है, गूंगे का गुड़ है[1] । यह प्रेम अत्यंत सूक्ष्म है । अनुभव से ही यह जान सकता है । यह प्रेम शान्ति रूप और परमानन्द रूप है[2] । भक्ति ही ईश्वर-प्राप्ति का एकमात्र उपाय है । भक्ति ही परम पुरुषार्थ है[3] ।

भक्त केलिए केवल भगवान पर ही विश्वास है, क्योंकि भगवान क्षमाशील, महिमावान्, प्रतापी और दयालु हैं । भक्त के हृदय की अशांति को दूर करने की शक्ति केवल उन्हीं में है । भक्ति के जितने भेद हैं उनमें माधुर्य भावपूर्ण भक्ति का महत्वपूर्ण स्थान है । इस भक्ति में भक्त और भगवान का वैसा संबन्ध है जैसा कि प्रेमी प्रेमिका में होता है । भक्त या तो सर्वशक्ति-मान ईश्वर की प्रिया बनती है, या वह परमात्मा को अपनी प्रेयसी के रूप में देखता है । ऐसे मधुर संबन्ध के आधार पर चलने से भक्त को सर्वाधिक आनंद की प्राप्ति होती है ।

---

1. नारदभक्ति सूत्र - 51 - 52
2. वही 60
3. "प्रेमा पुमानो महान्" चैतन्य ।

सौन्दर्य

प्रेम के विभिन्न रूपों पर दृष्टिपात करने के उपरान्त सौन्दर्य पर विचार करना उचित होगा ।

व्युत्पत्ति और शब्दार्थ

संस्कृत के "सुन्दर" शब्द से ही "सौन्दर्य" की उत्पत्ति होती है । धात्वर्थ के अनुसार सुन्दर शब्द का अर्थ है - "सु" अर्थात् अच्छी तरह और "उन्द" अर्थात् आर्द्र करना । अरन् कर्तृवाचक प्रत्यय है । अत: इस शब्द का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है - अच्छी तरह आर्द्र या सरस करनेवाला । नन्दयति शब्द से भी इसकी उत्पत्ति हो सकती है । नन्दयति का अर्थ है जो प्रसन्न करता है । इसके अनुसार जो भली भांति प्रसन्न करे, वह सुन्दर कहलाता है ।

सौन्दर्य शब्द की एक अन्य उत्पत्ति इस प्रकार भी है - सुन्दं राति इति सुन्दरम्, तस्य भाव: सौन्दर्यम् । जो "सुन्द" को लाता हो वह सुन्दर और जहाँ उसका भाव हो, वह सौन्दर्य जाना जाता है ।

सौन्दर्य शब्द की विशेषता यह है कि यह अत्यन्त व्यापक अर्थवाला शब्द है । पाश्चात्य तथा भारतीय कोशकारों ने इस शब्द के अर्थ-वैविध्य पर अच्छा प्रकाश डाला है । प्रमुख अंग्रेजी

कोषकार सर मोनियर विलियम्स[1] तथा जोन वेब्स्टर[2] ने इस शब्द से बाहरी एवं भीतरी सौन्दर्य को सूचित करनेवाले अर्थ की ओर संकेत किया है ।

भारतीय कोषकारों में आप्टे,[3] अमरकोषकार,[4] एवं वाचस्पत्यकोषकारों[5] ने भी सौन्दर्य शब्द के व्यापक अर्थ को ग्रहण किया है । साहित्याचार्यों ने भी सौन्दर्य शब्द के व्यापक अर्थ को ग्रहण किया है[6] ।

---

1. Beauty, loveliness, gracefulness, elegance, noble conduct, generosity. (p.1253) Splendour, brilliance, lustre, beauty, grace, loveliness (p.1092) exquisite beauty, splendour (p.1237) Sir Monier Williams : Sanskrit - English Dictionary II Edition Oxford 1899

2. An assemblage of graces or properties, or some one of them satisfying, the eye, the ear, the intellect, the aesthetic faculty or the moral sense; also the abstract quality characteristic of such properties; the beautiful. In aesthetics, Beauty broadly comprises the sublime, biagie, comic, etc; as well as the sensuous qualities which characterize Beauty in the narrower sense'

   - Webster's New International Dictionary of the English Language, p.199

3. Beauty, loveliness, gracefulness, elegance- V.S. Apte : Sanskrit-English Dictionary(1972) p.616

4. सुषमा परमा शोभा शोभा कान्ति द्युति छविः ।

   अमरकोष, 1 / 2 / 88

   सुन्दरं रुचिरं चारु सुषमं साधु शोभनम्
   कान्तं मनोरमं रुच्यं मनोज्ञं मंजु मंजुलम ।
   रम्यं मनोहरम् सौम्यं......... अमरकोष, 3 / 9 /52-53

5. वाचस्पत्य कोष, पृ.5338

6. विश्वनाथ, साहित्यदर्पण, तृतीय परिच्छेद ।

परिभाषाएं

समय-समय पर पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों ने सौन्दर्य की कई परिभाषाएं प्रस्तुत की हैं। सौन्दर्य के यथार्थ स्वरूप समझने में ये परिभाषाएं बहुत सहायक होती हैं। अतः इन परिभाषाओं पर दृष्टिपात करना उचित होगा।

पाश्चात्य विद्वानों में प्लेटो का महत्वपूर्ण स्थान है। आदर्शवादी दार्शनिक प्लेटो ने सौन्दर्य को शिव-तत्व के प्रकाशन में सहायक माना है[1]। प्रमुख दार्शनिक बर्क ने आनन्ददायक बाह्य रंग एवं आकार में सौन्दर्य का दर्शन किया है[2]। जर्मन विद्वान हेगल ने पदार्थ में आत्मा के प्रकाशन को सौन्दर्य माना है[3]। शेलिंग के अनुसार मानव के माध्यम से पूर्ण या दिव्य सत्ता की अभिव्यक्ति ही सौन्दर्य है[4]। उन्होंने और एक जगह बताया है कि ससीम में असीम का प्रकाशन ही सौन्दर्य है[5]। निष्काम और निरपेक्ष आनन्द देनेवाले पदार्थ को ही कान्ट सौन्दर्य-पूर्ण मानता है[5]।

---

1. The principle of goodness has reduced itself to the law of beauty. For measure and propertion always pass into beauty and excellence. Quoted from A History of Aesthetic by Bernard Bosanquet - 1934, p.33
2. Beauty consists of a certain composition of color and figure causing delight in the beholder. Quated from websters New International Dictionary.
3. Beauty is the shinning of the idea through matter. Quoted from Tolstoy's What is Art.
4. Beauty is a supreme expression of the absolute ordivine reality as uttering itself through man. Schelling
5. Beauty is the inifinite represented in the form of finite.
6. That is beautiful which pleases, which pleases all, which pleases without interest and without a concept, and pleases necessarily - Quoted from History of Aesthetic by Bearnard Bosanquet - p.45 and What is Art by Tolstoy - p.97

शारीरिक, नैतिक तथा बौद्धिक एकता में ही मार्टन सौन्दर्य का दर्शन करता है।[1] प्रसिद्ध अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावादी कवि कीट्स ने सत्य और सौन्दर्य में सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया है।[2] समाजवादी विचारधारा पर ज़ोर देनेवाले सुप्रसिद्ध रूसी साहित्यकार प्लेखनोव तो सौन्दर्य को सामाजिक उपयोगिता के प्रसंग में ही देखते हैं।[3] विल डुरान्ट के मतानुसार सौन्दर्य का संबन्ध शाश्वत चेतना के स्रोत से है।[4] इस प्रकार हम देखते हैं कि पाश्चात्य विद्वानों एवं विचारकों की सौन्दर्य-संबन्धी धारणा बहुत ही व्यापक है।

---

1. Beauty results from adaptation to our faculties and a perfect state of health, physical, moral and intellectual. Quoted from Webster's New International Dictionary.

2. Beauty is truth, truth beauty - that is all ye
Ye know on earth, and all ye need to know.
Keats - Ode on a Grecian Urn.

A thing of beauty is a joy for ever;
Its loveliness increases; it will never
Pass into Nothingness. Keats : Endymion.

3. If those acts of the individual are moral which he performs irrespective of all considerations of self interest, this still does not mean that morality has no relation to social interest; Quite the contrary : self - abnegation on the individual has a meaning only in so far as it is useful to the kind. For this reason the kantian thesis, that the beautiful is that which pleases us independently of all interest is wrong..... consequently the enjoyment of a work of art is enjoyment of the depiction advantageous to the kind, independently of any conscious consideration whatsoever of such advantage - G.V. Plakhanov: Art and Social life - 1953 p.11

4. All genius, like all beauty and all art, derives its power ultimately from that same reservoir of creative energy which renews the ray perpetually, and achieves the immortality of life.
The Mansions of philosophy, p.299

भारतीय आचार्यों तथा विचारकों ने भी सौन्दर्य के स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। महाकवि कालिदास ने कुमारसंभवम् एवं अभिज्ञान शाकुन्तलम् में सौन्दर्य के महत्व का प्रतिपादन किया है[1]। माघ ने भी अपने "शिशुपालवधम्" में रमणीयता की परिभाषा प्रस्तुत की है[2]। रसगंगाधरकार ने रमणीयार्थ का प्रतिपादन करनेवाले शब्द को ही काव्य कहा है[3]। कवीन्द्र रवीन्द्र ने सत्य और सौन्दर्य में एकता का प्रतिपादन किया है[4]। पं॰रामचन्द्र शुक्ल ने सौन्दर्य के स्वरूप पर गहरा अध्ययन प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार "सौन्दर्य बाहर की कोई वस्तु नहीं है, मन के भीतर की वस्तु है। योरपीय कला-समीक्षा की यह एक बडी ऊंची उडान पर बडी दूर की कौडी समझी गयी है, पर वास्तव में यह भाषा के गडबडझाले के सिवा और कुछ नहीं है। जैसे वीर कर्म से पृथक वीरत्व कोई पदार्थ नहीं, वैसे ही सुन्दर वस्तु से पृथक् सौन्दर्य कोई पदार्थ नहीं। कुछ रूप रंग की वस्तुएं ऐसी होती हैं जो हमारे मन में आते ही थोडी देर केलिए हमारी सत्ता पर ऐसा अधिकार कर लेती है कि उसका ज्ञान ही हवा हो जाता है और हम उन वस्तुओं की भावना के रूप में परिणित हो जाते हैं। हमारी अन्तःसत्ता की यही तदाकार परिणति सौन्दर्य की अनुभूति है[5]।

---

1. प्रियेषु सौभाग्य फला हि चारुता। कुमारसंभवम्
   अहो सर्वास्ववस्थासु रमणीयत्व मा कृति विशेषाणाम्।
   अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1 / 18
2. क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः।
3. रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्। रमणीयताच लोकोत्तराह्लादजनक ज्ञान गोचरता। लोकोत्तरत्वं चाह्लादगत चमत्कारत्वापर पर्यायोऽनुभव साक्षिको जातिविशेषः।
4. This is the ultimate object of our existence that we must even know that beauty is truth, truth beauty - Tagore : Sadhana, p.141
5. पं॰रामचन्द्र शुक्ल - चिन्तामणि भाग-1, पृ॰224

ज्यों-ज्यों चित्त की वृत्ति शिथिल होगी त्यों-त्यों अपने स्वरूप का, जो भीतर-बाहर विद्यमान है, साक्षात्कार होगा। परन्तु द्वैत भावना एकदम दूर नहीं हो सकती। इसलिए अपना अन्तर्मुख होना बाह्य जगत की सूक्ष्मता के रूप में अनुभूत होगा। यह सूक्ष्मता की अनुभूति ही सौन्दर्य की अनुभूति है[1]। सुमित्रानन्दन पंत जी सौन्दर्य को सारे ऐश्वर्य का आधार मानते हैं -

अकेली सुन्दरता कल्याणि,
सकल ऐश्वर्यों का सन्धान[2]।

पंत जी सौन्दर्य में दिव्यत्व की कल्पना करते हैं,

वही प्रज्ञा का सत्य-स्वरूप हृदय में बनता प्रणय-अपार;
लोचनों में लावण्य-अनूप, लोक सेवा में शिव अविकार;
स्वरों में ध्वनित मधुर, सुकुमार सत्य ही प्रेमोद्गार;
दिव्य सौन्दर्य, स्नेह साकार, भावनामय संसार[3]।

"स्थूल या सूक्ष्म जगत में आत्मा की अभिव्यक्ति ही सौन्दर्य है[4]"। "कुछ ऐसे दृग्विषय हैं जिनको देखकर हृदय में रस का संचार होता है। ...... हम इन सब में जो मनोहारिता पाते हैं उसको सौन्दर्य कहते हैं[5]"।

---

1. पं॰रामचन्द्र शुक्ल - दर्शन और जीवन, पृ॰186
2. पंत - पल्लव - पृ॰54
3. पंत - पल्लव - पृ॰87
4. हरिवंशसिंह - सौन्दर्य विज्ञान - पृ॰56-57
5. बाबू संपूर्णानंद - चिद्विलास, - पृ॰209

"सौन्दर्य की उत्पत्ति और उसके विकास का कारण यौन व्यापार है"[1]।

डॉ॰ रामविलास शर्मा सौन्दर्य को आनन्ददायक मानते हैं और कहते हैं, प्रकृति मानव जीवन तथा ललित कलाओं के आनन्ददायक गुण का नाम सौन्दर्य है[2]।

सौन्दर्य के प्रयोजन पर विचार करते हुए बा॰ गुलाबराय कहते हैं, स्वयं "सौन्दर्य" हृदय को परिष्कृत, पवित्र, कोमल और व्यापक बनाता है, यही उसकी उपयोगिता है"[3]।

इन परिभाषाओं पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि सौन्दर्य के सम्बन्ध में मुख्य रूप से तीन दृष्टिकोण प्रचलित हैं। कुछ तो सौन्दर्य को पूर्ण रूप से आन्तरिक मानते हैं तो और कुछ विचारक उसे पूर्णतया बाह्य मानते हैं। इन दोनों के अलावा कुछ तो मध्यवर्ती भी हैं। इन तीनों रूपों का विश्लेषण करने पर सौन्दर्य का यथार्थ रूप हम समझ सकेंगे।

---

1. पं॰ सद्गुरुशरण अवस्थी - बुद्धितरंग, पृ॰23
2. सौन्दर्य की वस्तु सत्ता और सामाजिक विकास नामक लेख (समालोचक का सौन्दर्य शास्त्र विशेषांक)
3. सौन्दर्यानुभूति नामक लेख, वही

वैज्ञानिक या वस्तुपरक दृष्टिकोण

§अ§ पाश्चात्य धारणा

पाश्चात्य देशों में पिछले तीन सौ पच्चीस वर्षों में सौन्दर्य तत्व पर वैज्ञानिक चिंतन किया गया है । सौन्दर्य के तत्वों का विशद एवं महत्वपूर्ण अध्ययन करने का प्रयास वहाँ दृष्टिगत होता है । पाश्चात्य देशों के सौन्दर्य-तत्व चिन्तकों को उनके विचारों के आधार पर तीन वर्गों में विभाजित कर सकते हैं : §1§ यथार्थवादी, §2§ आदर्शवादी एवं §3§ समन्वयवादी । यथार्थवादियों को वस्तुवादी वैज्ञानिक भी कह सकते हैं । आदर्शवादियों को आत्मवादी संज्ञा भी दे सकते हैं । वे मुख्य रूप से दार्शनिक हैं । समन्वयवादी तो आदर्शवाद और यथार्थवाद दोनों को न स्वीकार करके मध्य मार्ग का ही ग्रहण करते हैं ।

यथार्थवादियों में प्रमुख हैं सुकरात्त §Socrates§ अरस्तू §Aristotle§ डिडेरो §Diderot§ होगार्थ §Hogarth§ पीयर बफियर §Pere Buffier§ रेयनाल्ड्स §Reynolds§ बर्क §Burke§ लेसिंग §Lessing§ हेर्बर्ट स्पेंसर§ Herbert Spencer§ डार्विन §Darwin§ हेमिल्टन §Hamilton§ स्टुअर्ट §Stuart§आदि।

---

1. Leo Tolstoy - What is art - W. Knight - The philosophy of the Beautiful, Bernard Bosanquet - History of Aesthetic, Melvin M. Rader - A Modern Book of Aesthetic.

इन विचारकों ने वस्तुवादी दृष्टिकोण से ही सौन्दर्य का विवेचन प्रस्तुत किया है। व्यक्ति और वस्तु के वे सब गुण या धर्म, जो हमारी पंचेन्द्रियों - आँख, कान, नाक, जीभ, और त्वचा को सुखद व आनन्ददायी प्रतीत होते हैं, इन दार्शनिकों के सौन्दर्य - सम्बन्धी निर्णय के स्थायी और मूलभूत आधार हैं। अतएव इन्हीं ने सौन्दर्य कों वस्तु, व्यक्ति, दृश्य या किसी स्थिति के रूप (form), रंग (Colour) आकार (Shape) व्यवस्थित क्रम (Orderly arrangement) नियमितता (Regularity), एकान्विति (Unity), स्पष्टता (Distinctness), मसृणता (Smoothness), स्निग्धता (Softness) वर्ण-दीप्ति (Brightness of colour), वैचित्र्य (Variety), जटिलता (Intricacy), शुद्धता (Purity), उदात्तता (Sublimity) उपयोगिता (Utility), सममात्रा (Symmetry), प्रतीकमयता (Symbolicness), सुकुमारता - कोमलता (Tenderness or delica(सूक्ष्मता-अग्राह्यता (elusiveness), सजीवता (liveliness) वास्तवता (Lifelikeness), व्यंजकता (Suggestiveness) विरोध (contrast), अवयव-अवयवी-सम्बन्ध (Relation of parts with the whole), माधुर्य (Sweetness, agreeableness) नवता (Freshness), निश्चित विधान (Definite limitation) सामंजस्य (Harmony), संतुलन (Balance), संश्लिष्टता (Connectedness), औचित्य (Reasonableness or propriety) समन्वय (Synthesis), व अनुपात (proportion) आदि आत्म-निरपेक्ष बाह्य गुण-धर्मों में ही माना[1]। रस्किन ने सौन्दर्य को ईश्वर के साथ संबन्ध जोड़ने का प्रयास किया है[2]।

---

1. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल - आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य - पृ.148-49
2. डॉ. फतहसिंह - साहित्य और सौन्दर्य - पृ.307

काडवल ❴ Christopher Caudwell ❵ ने इसके विरुद्ध सौन्दर्य को मनुष्य में ही माना है । उसने सौन्दर्य की समाजपरक व्याख्या प्रस्तुत की । उसके सौन्दर्य चिन्तन में हम समन्वयवादी दृष्टिकोण का दर्शन करते हैं ।

ख॰ भारतीय धारणा

भारतीय आचार्यों ने सौन्दर्य पर विचार करते हुए कई महत्त्व पूर्ण निष्कर्ष प्रस्तुत किए हैं । भरतमुनि के रस-सूत्र के व्याख्याता भट्ट लोल्लट एवं श्री॰ शंकुक ने सौन्दर्य को विषय में ही अधिक माना है । अलंकारवादी, गुणवादी, रीतिवादी एवं वक्रोक्तिवादी आचार्यों ने सौन्दर्य को बाह्य विषयों में मानने का प्रयास किया है । भरत, विश्वनाथ, अभिनवगुप्त, पण्डितराज, जगन्नाथ आदि रस-संप्रदाय के प्रवर्तकों ने सौन्दर्य को आत्मप्रधान मान लिया है ।

आत्मपरक दृष्टिकोण

क॰ पाश्चात्य-धारणा

कुछ आदर्शवादी दार्शनिकों ने सौन्दर्य को अध्यात्म की ओर ले चलने का प्रयास किया है । इनमें प्रमुख हैं प्लेटो ❴Plato ❵, प्लोटिनस ❴Piotiness ❵, सेंट आगस्टीन ❴St.Augastine ❵, बाम गार्टन ❴Baum Garten ❵, शिलर ❴Schiller ❵, हेरबर्ट ❴Herbert ❵, विषर ❴Vischer ❵, काण्ट ❴Kant ❵, हीगेल ❴Hegel❵ शैलिंग ❴Schelling ❵, शापेनहावर ❴Schopenhav-er ❵, ऑस्कार वैल्ड ❴Oscar Wilde ❵, क्रोचे ❴Croce ❵, रस्किन ❴ Ruskin❵ शेल्ली ❴Shelley ❵ और कीट्स ❴Keats ❵ । इन्होंने सौन्दर्य-संबन्धी जो व्याख्यायें प्रस्तुत की हैं, वे सभी आत्मपरक हैं । इनकेलिए वस्तु का कोई महत्त्व नहीं है ।

पाश्चात्य विद्वानों के सौन्दर्य-संबन्धी विचारों को हम इस प्रकार संक्षिप्त कर सकते हैं -

1. समस्त दृश्य जगत् या सृष्टि के मूल में कोई न कोई एक चिर निगूढ आध्यात्मिक सत्ता अवश्य विद्यमान है जो प्रत्येक क्षण सक्रिय रहकर कार्य कर रही है। शैलिंग उसे निरपेक्ष ज्ञान या प्रज्ञा [अब्सल्यूट] कहता है। उसी को हेगेल जड़-चेतन में नित्य प्रकाशित होनेवाली प्रज्ञा या अद्वय [अब्सल्यूट और थाट] कहता है। शापेनहार उसी को इच्छा-शक्ति या संकल्प [विल] कहता है। प्लाटिनस केलिए वही मूल सत्ता बुद्धि या विधयात्मक प्रज्ञा [इन्टलिजेन्स और ओब्जेटीव रीसन] है। प्लेटो ने उसी को विचार [आइडिया] या आदर्श जगत् [आइडियल वेल्ड] कहा है। तात्पर्य यह है कि इस वर्ग के मूर्धन्य चिंतक अपने सौन्दर्य-संबन्धी आधार केलिए एक लोकोत्तर व आध्यात्मिक सत्ता को मान कर चले हैं। विषर की धारणा है कि सौन्दर्य की सम्यक् मीमांसा अद्वैत भूमि पर पहुँच कर ही हो सकती है। लोज भी एक ईश्वर [पेर्सनल डाइटी] की कल्पना आवश्यक समझता है।

2. सौन्दर्य-संबन्धी निर्णय व्यक्तिगत ही होता है, यह कांट और हेरबर्ट की धारणा है। मन के बाहर सौन्दर्य की सत्ता कहीं नहीं है। सौन्दर्य केवल एक मानसिक वृत्ति है। रीड का कहना है कि सौन्दर्य वस्तुगत नहीं है।

3. सैंट आस्टीन की धारणा है कि भगवान् सत्य, शिव व अनंत सौन्दर्य के निदान हैं, तथा उनका सौन्दर्य ही सृष्टि के समस्त सौन्दर्य का स्रोत या मूल कारण है।

4· प्लेटो तथा जाफ्राय का कहना है कि सुखकर प्रिय या उपयोगी होना एक बात है और सुन्दर होना दूसरी । दोनों भिन्न - भिन्न हैं । प्लेटो की धारणा है कि उपयोगिता सौन्दर्य में वृद्धिकर हो सकती है पर वह स्वयं सौन्दर्य नहीं । जाफ्राय का कहना है कि सुन्दर वस्तु के स्वार्थ भावना जन्य सामीप्य-लाभ की कामना से वस्तु का सौन्दर्य कम पड़ जाता है ।

5· प्लेटो की धारणा है कि सृष्टि का मूल सौन्दर्य सदा अखण्ड व एकरस रहता है तथा तमाम सुन्दर पदार्थों में वही मूल सौन्दर्य निहित है ।इसी प्रकार कांट व जाफ्राय की मान्यता है कि वे ही पदार्थ सुन्दर होते हैं कि जो हमें उच्च कोटि का सात्विक आनन्द प्रदान करें । कांट, मैंडिल्सोन, जाफ्राय, हेरबर्ट व आगस्टाइन सौन्दर्य के आनन्द को नि:स्वार्थ विमल व निष्काम मानते हैं । कांट की धारणा है कि सौन्दर्य सार्वदेशिक है तथा वह सब को एक समान आनन्द प्रदान करता है । मैंडिल्सोन कहता है कि हम सौन्दर्य के आनन्द के उपभोग में पूर्ण तृप्ति व शांति का अनुभव करते हैं ।

6· लोज, रीड व हेरबर्ट का कथन है कि सौन्दर्य-बोध सहज ज्ञान-गम्य है, अभ्यास-साध्य नहीं । यह वृत्ति उच्च आत्मिक संस्कारों का परिणाम है । हरबर्ट स्पेंसर कहते हैं कि सौन्दर्य की भावना व्यक्ति और जाति के जीवन में सदा संस्कार बनकर विकसित होती रही है ।

7· बॉमगार्टन की धारणा है कि हमारे अन्त:करण की समस्त वृत्तियां स्वाभाविक रूप से अपनी चरम पूर्णता का आदर्श प्राप्त करने केलिए सतत विकासशील हैं । ज्ञान सत्य की ओर, इच्छा मंगल की ओर

और ऐन्द्रिक ज्ञान सौन्दर्य की ओर बढ़ रहे हैं । अतः सौन्दर्य हमारी वृत्तियों का एक आदर्श लक्ष्य है, जिसकी प्राप्ति में जो भी बाधक है वह कुरूप और कुत्सित है ।

8. विक्टर कूजाँ का कथन है कि वस्तुओं का सौन्दर्य भावों को जागृत करने की शक्ति रखता है, इसीलिए सौन्दर्य हमें प्रिय है ।

9. जाफ्राय का कथन है कि सौन्दर्य और ईश्वर एक है । प्रकृति का समस्त सौन्दर्य उसी परमप्रिय परमात्मा का प्रकाश है । रीड का कथन है कि सौन्दर्य पूर्ण रूप से एक आध्यात्मिक वस्तु है । विक्टर कूजाँ की धारणा है कि शारीरिक व प्राकृतिक दोनों प्रकार का भौतिक सौन्दर्य आध्यात्मिक या नैतिक सौन्दर्य का प्रकाश है । फिर यह आध्यात्मिक या नैतिक सौन्दर्य भी मूल रूप में स्वयं ईश्वर के सौन्दर्य पर ही आधारित है अतः ईश्वर के सौन्दर्य से बढ़कर और कोई सौन्दर्य नहीं । नैतिक जगत् या भौतिक जगत् में सर्वत्र उसी का सौन्दर्य प्रकाशित हो रहा है[1] ।

उपर्युक्त विवेचन से पाश्चात्य आदर्शवादी सौन्दर्यशास्त्र की प्रमुख धारणाओं का परिचय मिलता है ।

---

1. डॉ॰ रामेश्वर लाल खण्डेलवाल : आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य - पृ॰151-153

ब· भारतीय धारणा

सौन्दर्य के संबन्ध में भारतीय आचार्यों की व्यक्त तथा स्पष्ट धारणाएं हैं । इनकी धारणाएं प्रधानत: आध्यात्मिकता पर आधारित है । इस धारणा के अनुसार प्रकृति तभी सुन्दर लगती है जब उसमें ब्रह्मतत्व विद्यमान है[1] । शंकराचार्य का कथन स्मरणीय है - "ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या" । ब्रह्म से युक्त होने पर ही जगत् का आकर्षण है । अत: भारतीय विचारधारा के अनुसार ब्रह्म भावना से युक्त होने पर ही प्रकृति का सौन्दर्य व आकर्षण है । इस सौन्दर्य में आत्मतत्व की प्रधानता है । इन्द्रियों से इसका कोई संबन्ध नहीं है[2] । प्राचीन एवं नवीन सभी भारतीय सौन्दर्य चिन्तकों ने सौन्दर्य के आदर्श रूप को ही स्वीकार किया है । यद्यपि सौन्दर्य संबन्धी भारतीय दृष्टि आदर्शात्मक है तो भी उस में यथार्थ का भी प्रमुख स्थान है । भारतीय सौन्दर्य-दृष्टि में आदर्श और यदार्थ दोनों का सुन्दर समन्वय वर्तमान है । भक्ति संप्रदाय के कवियों एवं आचार्यों की दृष्टि इसकी पुष्टि करती है । इन कवियों व आचार्यों ने सगुण ब्रह्म को स्वीकार किया है, अत: इनकी दृष्टि में आदर्श एवं यथार्थ का सामंजस्य सिद्ध होता है । रस संप्रदाय के साहित्याचार्यों की सौन्दर्य-संबंधी दृष्टि तो आदर्शवादी है, किन्तु बात तो यह है कि रस-निष्पत्ति

---

1. Nature in her apparent nakedness has no beauty; but it is beautiful in so far as it is the expression of spirit..... The figure may be harmonious in all parts but it is beautiful when it is such as is indicative of the underlying meaning of the soul.
- Mahendra Nath Sircar : Estern Lights, 1935, p.123

2. At first we detach beauty from its surroundings, we hold it aprat from the rest, but at the end we realise its harmony with all.... When he has the power to see thing detached from self-interest and from the insistent claims of the lust of the senses, then alone can he have the true vision of the beauty that is everywhere.
- Tagore : Sadhana (1947) p.139-140

में आलम्बन का आधार अनिवार्य है। अत: उन्हें समन्वयवादी मानने में कोई आपत्ति नहीं है। आत्मपरक एवं वस्तुपरक दृष्टिकोणों का समन्वय :-

{क} समन्वय की आवश्यकता

उपर्युक्त सौन्दर्य संबन्धी दृष्टियों पर विचार करने से ज्ञात होता है कि इन दृष्टिकोणों में कुछ समन्वय आवश्यक है। क्योंकि ये दोनों ही अतिवादी हैं। कुछ विचारक तो केवल वस्तु को महत्त्व देते हैं और कुछ आत्मा को। कहीं - कहीं इसका अपवाद भी मिलते हैं। किन्तु अधिकांश विचारकों में दृष्टिकोणों की एकांगिता देखने को मिलती है। हमें तो सौन्दर्य की रस या काव्यपरक व्याख्या पर ध्यान देना चाहिए। साहित्यिक दृष्टि से सौन्दर्य-संबन्धी वही दृष्टिकोण अधिक उपयुक्त है जो आश्रय व आलम्बन दोनों का समान महत्त्व स्वीकार करें। कारण यह है कि रसानुभूति केलिए ये दोनों ही अंग अत्यंत आवश्यक हैं[1]।

केवल अन्त:करण या वस्तु में ही सौन्दर्य का दर्शन करना वास्तविक सौन्दर्य दर्शन नहीं कहा जा सकता। अत: इन दोनों में समन्वय आवश्यक है क्योंकि उसके बिना साहित्यिक व्यवस्था का मार्ग

---

1. व्यक्तित्व के एकान्त की स्थिति में कलात्मक सौन्दर्य और आनन्द का उदय नहीं होता। व्यक्तियों की अनेकता में समात्मभाव उत्पन्न होने पर ही सौन्दर्य और आनन्द का स्फोट होता है।
डॉ॰ रामानन्द तिवारी : कला और सौन्दर्य नामक लेख {समालोचक, सौन्दर्य शास्त्र अंक - पृ॰३७

दूर ही दूर रहता है । वास्तव में शुद्ध सौन्दर्य की अनुभूति व्यक्तिगत अनुभूति है[1] । किन्तु बात तो यह है कि जब वह अभिव्यक्ति के क्षेत्र में प्रविष्ट करती है तो विभाव के माध्यम से ही प्रकट होती है । पश्चिमी तथा भारतीय विद्वानों ने इस बात को स्वीकार किया है[2] ।

---

1. Everyone chooses his love out of the objects of beauty according to his own.
   Plato - Symposium.
   Quoted from A. Coomara Swamy's-Dance of Siva, p.60

2. Every work of art causes the receiver to enter into a certain kind of relationship both with him who produced or is producing the art and with all those who, simultaneously, previously or subsequently, receive the same artistic impression.

   - Tolstoy : What is Art, p.120

   Yet, though all aesthetic theories must be based on aesthetic judgements, and ultimately all aesthetic judgements must be matters of personal taste, it would be rash to assert that no theory of aesthetics can have general validity.

   - Clive Bell : 'Art' p.9

" ...... सम्बन्धविशेषस्वीकारपरिहार नियमानध्यवसायात् साधारण्येन प्रतीतेरभिव्यक्त:......." मम्मट : काव्य प्रकाश चतुर्थ उल्लास, कारिका 26 की अभिनव गुप्त की व्याख्या, तथा पं॰ रामचन्द्र शुक्ल के "चिन्तामणि" का साधारणीकरण और व्यक्ति वैचित्र्यवाद नामक लेख ।

पश्चिम में सौन्दर्य की अत्यंत हल्की धारणा का प्रचार हुआ है । इसी वजह से वहाँ सौन्दर्य चिन्तन संबन्धी बहुत अधिक गड़बड़-झाला भी हुआ है । वहाँ सुन्दर की व्याप्ति केवल इन्द्रिय - सुख तक सीमित है । पश्चिम में सौन्दर्यानुभूति का संबन्ध केवल कल्पना के साथ जोड़ कर देखने लगे । जीवन-मूलक भाव या अनुभूति से उसका कुछ संबन्ध नहीं रखा गया । इसका चरम विकास हम क्रोचे के सौन्दर्य चिन्तन में देखते हैं । सौन्दर्य-संबन्धी भारतीय धारणा को पूर्ण कह सकते हैं । कारण यह है कि यहाँ प्रेम का महत्व केवल श्रेय के साथ ही माना गया है । "भारत में किसी वस्तु को "सुन्दर" कहना सांस्कृतिक, कलात्मक व धार्मिक सभी दृष्टियों से किसी वस्तु को सुन्दर ठहराना है । केवल साहित्यिक दृष्टि से, या केवल धार्मिक दृष्टि से, या केवल सांस्कृतिक दृष्टि से कोई वस्तु यहाँ क्रमशः सुन्दर नहीं । यदि कोई वस्तु "सुन्दर" है तो एक साथ इन सभी दृष्टियों से । इसका कारण मुख्यतः भारत की आध्यात्मिक दृष्टि है"[1] । भारतीय सौन्दर्य-दृष्टि में हम आत्मा का प्रकाशन पाते हैं । सद्, चिद् तथा आनन्द इन तीनों का सम्मिलित स्वरूप ही आत्मा है । अतः उसके बाह्य प्रकाशन में ये तीनों ही गुण वर्तमान हैं । अतएव भारतीय सौन्दर्य-संबन्धी धारणा पूर्ण व व्यापक है । इस का स्पष्ट परिचय हमें वैष्णव भक्ति-मार्ग में मिलता है । वहाँ भाव की पराकाष्ठा का दर्शन मिलता है । वैष्णव भावना का यह विशेषण है कि वहाँ सौन्दर्य ही सब कुछ है । वह चाहे गोचर हो चाहे भौतिक पूर्णतः आध्यात्मिक है[2] । भौतिक और आध्यात्मिक वस्तु या भाव के पूर्ण सामंजस्य का यह सुन्दर उदाहरण है।

---

1. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल : आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य - पृ. 188

2. The senses are, so to speak, spiritualized; and in this acceptation the vaishnavas synthetize the conception of beauty as transcendental with its sensuous expression in the soul..... The vaishnavas add that this sense is supra-sensuous sense and obtain in the realm of spiritual transcentence. Nature becomes denaturalized, it becomes the reflection of spirit. Mahendra Natha Sircar: Eastern Lights, p.127-128

सौन्दर्य का स्वरूप

(क) मनोवैज्ञानिक आधार

हम ने देखा कि सौन्दर्य केवल वस्तुगत या केवल आत्मगत नहीं। इन दोनों के सुन्दर समन्वय में ही यथार्थ सौन्दर्य निहित है। आगे हमें सौन्दर्य की कुछ विशेषताओं की ओर दृष्टिपात करना आवश्यक है। साथ ही यह भी जानना आवश्यक है कि सौन्दर्य की भावना का उत्पादन करने में कौन कौन सी बातें सहायक होती हैं तथा उसका मनोवैज्ञानिक आधार क्या है।

स्मरण रखना चाहिए कि सौन्दर्य-निर्धारण में प्रत्येक व्यक्ति का अपना-अपना व्यक्तिगत मापदण्ड होता है। यही कारण है कि दो व्यक्तियों की सौन्दर्य धारणा में भिन्नता रहती है। फिर भी सौन्दर्य-भावना के कुछ सामान्य मनोवैज्ञानिक आधार स्थापित किये जा सकते हैं। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार सौन्दर्य की उत्पत्ति का प्रधान कारण हमारी यौन भावनायें हैं। विभिन्न वय के लोग सौन्दर्य का समान रूप से आस्वादन नहीं कर सकते। एक विशेष वय या मानसिक अवस्था के दिनों में ही हम सौन्दर्य का पूर्ण अनुभव कर सकते हैं। युवावस्था में हमें जो सौन्दर्यानुभूति होती है, वह बाल्यावस्था या वृद्धावस्था की सौन्दर्यानुभूति से भिन्न है। शिक्षा, संस्कार, समाज की परम्परायें आदि भी सौन्दर्यानुभूति में सहायक होती हैं।

(ख) साहित्यिक आधार

साहित्यकार या कवि की सौन्दर्य-धारणा में भिन्नता विद्यमान है। वह केवल सौन्दर्योत्पत्ति की मनोवैज्ञानिक स्थितियों के वर्णन से तृप्त नहीं होता। वह सौन्दर्य-दर्शन में कल्पना का आश्रय लेता है। अतः कवियों ने सौन्दर्य को जिस ढंग से देखा है और वे जिस ढंग से उसकी अनुभूति कराना चाहते हैं, वह सामान्य मनोवैज्ञानिक स्थापनाओं या विश्लेषण-विवेचन से कुछ भिन्न है। काव्य-जीवन के विभिन्न क्षेत्रों के तथ्यों को कल्पना चित्रों के रूप में ग्रहण करके फिर उसका रसात्मक निरूपण करता है। अतः धर्म, दर्शन, विज्ञान आदि सब क्षेत्रों का सारभूत ज्ञान लेकर वह सौन्दर्य के माध्यम से आत्म-साक्षात्कार करने और कराने का प्रयत्न करता है[1]।

(ग) सौन्दर्य की सामान्य विशेषताएँ

अब हम सौन्दर्य की विशेषताओं पर विचार करें। सौन्दर्य की सबसे प्रमुख विशेषता है, आकर्षण। द्रष्टा आँख, कान, त्वचा आदि के द्वारा सौन्दर्यानुभूति का अनुभव करता है। अतः इन्द्रिय व्यापार को सौन्दर्यानुभूति का महत्वपूर्ण अंग कहा जा सकता है। आदर्शवादी दार्शनिकों की धारणा है कि सौन्दर्यपूर्ण पदार्थ को व्यक्तिगत स्थूल सुखोपभोग केलिए अपनाने की चाह जितनी ही न्यून होगी, सौन्दर्यानुभूति उतनी ही उज्ज्वल व उदात्त होगी। उनकी दृष्टि में सौन्दर्य एक ईश्वरीय देन है[2]। कवि और दार्शनिक तो

---

1. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल - आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य - पृ. 167-68
2. वही पृ. 169

सौन्दर्य को वैज्ञानिकों की तरह बाह्य तथा आत्मवादियों की तरह आत्मा तक सीमित रखने में संतोष नहीं मानते । वे उसे जन्म-जन्मान्तर से सम्बन्धित करके उसकी अमरता अनंतता की भी प्रतिष्ठा करते हैं[1] । उदाहरण केलिए हम महाकवि कालिदास को ले सकते हैं । उन्होंने सौन्दर्यानुभूति के साथ जन्मांतर का सम्बन्ध माना है[2] । भारतीय धारणा के अनुसार सौन्दर्य पवित्र होना चाहिए । जो सौन्दर्य पवित्र नहीं वह दूसरे को भी पवित्र नहीं कर सकता । महाकवि सूर के अनुसार सौन्दर्य अनिर्वचनीय है । "प्रसाद" केलिए बाह्य सौन्दर्य भी हृदय या आत्मा का ही प्रतिबिम्ब है[3] । महाकवि माघ के अनुसार सौन्दर्य वही है जो प्रत्येक क्षण नवीन बना रहे[4] । कीट्स केलिए सौन्दर्य शाश्वत आनन्द प्रदान करता है[5] । सच्चा सौन्दर्य तो अपने में पूर्ण है । उसमें कोई न्यूनता या कमी नहीं होती । सौन्दर्य-दर्शन से हमारी सब कामनाएं पूर्ण हो सकती है[6] । सच्चा सौन्दर्य तो अपने में पूर्ण है । उसमें कोई न्यूनता या कमी नहीं होती ।

---

1. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल - आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य - पृ.169

2. रम्याणि वीक्ष्य मधुरांश्च शब्दान्पर्युत्सुकी भवति
   यत्सुखितापि जन्तुः तच्चेतसा स्मरति नूनमबोध पूर्वं
   भावस्थिराणि जननान्तर सौहृदानि ।
   अभिज्ञानशाकुन्तलम्, पंचम अंक श्लोक - 2 /

3. हृदय की अनुकृति बाह्य उदार एक लम्बी काया उन्मुक्त,
   मधु पवन क्रीडित ज्यों शिशु साल सुशोभित हो सौरभ संयुक्त ।
   कामायनी : श्रद्धा सर्ग ।

4. क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः । माघ

5. A thing of beauty is a joy for ever. - Keats: Endymion

6. सबहि मन हि मन किए प्रनामा । देखि राम भय पूरनकामा"
   तुलसी : मानस ।

प्रेम और सौन्दर्य का पारस्परिक सम्बन्ध

प्रेम और सौन्दर्य के उपर्युक्त विवेचन के पश्चात् हमें यह देखना चाहिए कि इन दोनों का पारस्परिक सम्बन्ध क्या है । वास्तव में दोनों में घनिष्ठ संबन्ध है । जहाँ प्रेम है, वहाँ सौन्दर्य रहता है और जहाँ सौन्दर्य है वहाँ प्रेम की सम्भावना है । सौन्दर्य की एक प्रमुख विशेषता है आकर्षण और आकर्षण प्रेम का कारण बन जाता है । सौन्दर्य से प्रेम उत्पन्न होता है तो प्रेम से सौन्दर्य भी उत्पन्न होता है । प्रेम सौन्दर्य से ही जीवन-रस ग्रहण करता है । अंत में वह सौन्दर्य में ही पर्यवसित होता है । आदर्श सौन्दर्यानुभूति में प्रेम सहायक होता है[1] । वास्तव में प्रेम को हम सौन्दर्य का जनक मान सकते हैं[2] । प्रेम से ही सौन्दर्य का पूर्ण विकास होता है[3] । जहाँ प्रेम है वहाँ हम सौन्दर्य का पूर्ण विकास देख सकते हैं । दिव्य प्रेम ही सौन्दर्य-रूपी शरीर की आत्मा है[4] । इसी प्रकार सौन्दर्य ही विकसित होकर प्रेम का रूप धारण कर लेता है[5] । वस्तुतः जीवन में सौन्दर्य की अपेक्षा प्रेम का अधिक महत्त्व है, फिर भी प्रेम और सौन्दर्य दोनों को अन्योन्याश्रित समझकर समान महत्त्व देना ही उचित है ।

---

1. In the acquisition of this blessing (Ideal Beauty) human nature can find no better helper than love'.

   Plato : Symposium, p.95
2. Love then, is the mother of beauty, and not its child it is the soul origin of that primary beauty which x
3. प्रेम की प्राप्ति से दृष्टि आनन्दमयी और निर्मल हो जाती है । जो बातें पहले नहीं सूझती थीं वे सूझने लगती हैं, चारों ओर सौन्दर्य का विकास दिखाई पड़ने लगता है" ।

   - पं. रामचन्द्र शुक्ल - जायसी ग्रन्थावली की भूमिका - पृ.87

   All thoughts, all passions all delights, whatever stirs this mortal frame: All are but ministers of Love.
4. यह सौन्दर्य चेतना उसके अमर प्रेम की छाया, दिव्य प्रेम देही, सुन्दरता उसकी सतरंग काया" । सुमित्रानंदन पंत - स्वर्ण किरण - पृ.33
5. सौन्दर्यपलक प्याले का मद प्रेम बना जीवन में । प्रसाद-आँसू - पृ.32

x is of persons and not of things. Will Durant: The Mansions of philosophy, p.283

सौन्दर्य के विविध रूप

सौन्दर्य के स्वरूप के अध्ययन के साथ ही उसके विविध रूपों पर भी विचार करना आवश्यक है । सौन्दर्य के निम्नलिखित भेद माने जा सकते हैं -

[1] रूप-सौन्दर्य [2] भाव-सौन्दर्य [3] कर्म-सौन्दर्य

रूप सौन्दर्य के अन्तर्गत मानवसौन्दर्य तथा प्राकृतिक सौन्दर्य का समावेश कर सकते हैं ।

क. मानवीय सौन्दर्य

लोक व्यवहार और कला में मानवीय सौन्दर्य का महत्वपूर्ण स्थान है । मानवीय सौन्दर्य को हम काव्य की मूल प्रेरणाओं का स्रोतमान सकते हैं । मानवीय सौन्दर्य के आस्वादन के द्वारा ही चराचर जगत् के सौन्दर्य का आस्वादन करता है । मानव सौन्दर्य तो प्रकृति का ऋणी है । प्रकृति ही हमें वे रस प्रदान करती है जो शरीर को स्वस्थ व सुन्दर रखते हैं । मानव सौन्दर्य परिवर्तनशील है । अवस्था के बढने पर मानव सौन्दर्य मुरझाने लगता है । मानव सौन्दर्य का विकास भी एक हद तक ही होता है । वह व्यक्ति, देश और काल के अनुसार बदलता रहता है । किन्तु प्राकृतिक सौन्दर्य केलिए ऐसी बात नहीं होती ।

मानवीय सौन्दर्य का निर्णय व्यावहारिक उपयोगिता के आधार पर होता है । मानवीय सौन्दर्य ईर्ष्या आदि दुर्वृत्तियों को पैदा कर सकता है और कभी - कभी यह भयानक युद्ध का कारण भी बन जाता है ।

मानवीय सौन्दर्य और प्राकृतिक सौन्दर्य में घनिष्ठ संबन्ध भी है। प्रकृति के सुन्दर अंचल में मानवीय सौन्दर्य का पूर्ण विकास होता है। इसी प्रकार शारीरिक सौन्दर्य व मानसिक सौन्दर्य का भी पारस्परिक संबन्ध है। व्यक्ति के मन व हृदय का सौन्दर्य (शील) बाहरी कुरूपता को भी रमणीयता में बदल सकता है। प्राकृतिक सौन्दर्य का विकास मानव के अभाव में भी हो सकता है, किन्तु प्रकृति के अभाव में मानवीय सौन्दर्य का पूर्ण विकास नहीं होता। इसीलिए अनेक कवियों ने मानवीय सौन्दर्य-चित्रण के प्रसंग में प्राकृतिक सौन्दर्य चित्रण की ओर भी पर्याप्त ध्यान दिया है।

मानवीय सौन्दर्य के दो विभाग कर सकते हैं - (1) नारी सौन्दर्य तथा (2) पुरुष सौन्दर्य. । प्रायः कवियों ने पुरुष - सौन्दर्य वर्णन की अपेक्षा स्त्री-सौन्दर्य - वर्णन में अधिक ध्यान दिया है। नायिकाओं के सौन्दर्य-वर्णन में भी बाह्य सौन्दर्य की ओर अधिक मनोयोग प्रदर्शित किया है।

नारी-सौन्दर्य

नारी सौन्दर्य को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं - (1) स्थूल तथा (2) सूक्ष्म। स्थूल में बाह्य सौन्दर्य तथा सूक्ष्म में आन्तरिक सौन्दर्य का समावेश होता है। आन्तरिक तथा बाह्य दोनों मिल कर ही सौन्दर्य पूर्ण होता है।

स्थूल सौन्दर्य के अन्तर्गत स्त्री के अंगों, वेश-भूषाओं व चेष्टाओं का वर्णन होता है। अंगों के वर्णन में उनकी गठन, स्निग्धता, सुकुमारता, पुष्टता, वय, वर्ण, कद आदि का वर्णन होता है।

स्त्रियों के परिधानों के वर्णन में, उनके रंगों के वर्णन में भी विशेष ध्यान दिया जाता है। शरीर की चेष्टायें भी स्त्रियों के सौन्दर्य-वर्णन में बहुत सहायक होती हैं। ये चेष्टायें हैं, वाणी, मुस्कान, भ्रूनिक्षेप, अंग-संचालन, पद-क्षेप आदि। वास्तव में काव्य में स्त्रियों के बाह्य सौन्दर्य के वर्णन ही अधिक मिलते हैं।

सूक्ष्म-सौन्दर्य के अन्तर्गत स्त्रियों के शील का निरूपण किया जाता है। शील के अन्तर्गत सच्चरित्रता, लज्जा, सेवा, दया, करुणा, त्याग, समर्पण, उदारता, विनम्रता आदि गुण उल्लेखनीय है। भवभूति, कालिदास, रवीन्द्र, शेक्सपियर आदि कवियों ने शील को अधिक महत्त्व दिया है। प्रसाद, हरिऔध, मैथिली शरण गुप्त, आशान, वल्लत्तोल आदि में भी हम यह प्रवृत्ति देखते हैं। शील के अभाव में भारतीय नारी का सौन्दर्य तुच्छ समझा गया है।

पुरुष-सौन्दर्य

नारी-सौन्दर्य के समान पुरुष-सौन्दर्य का भी काव्य में महत्त्व है। किन्तु उसका अपेक्षाकृत कम चित्रण होता है। बाह्य-सौन्दर्य की अपेक्षा पुरुष का कर्म सौन्दर्य ही प्रधान है। पुरुष का कर्म सौन्दर्य विदेशी व भारतीय काव्यों में प्रायः रणक्षेत्र के बीच ही जाकर दिखाया गया है। उसके प्रताप बल व ओज आदि के वर्णन का भी पर्याप्त महत्त्व है। किन्तु बाह्य वीरता से भी बढ़कर जीवन में आन्तरिक वीरता के उदाहरण हमें देखने को मिलते हैं। रण क्षेत्र के योद्धाओं से भी बढ़कर आत्म-जयी वीरों का सौन्दर्य हमें मुग्ध करता है। इन्द्रिय-संयम, अहिंसा, क्षमा, कष्ट-सहिष्णुता, कर्तव्य परायणता, पर दुःख कातरता, आदर्श केलिए जीवन का विसर्जन, सत्याग्रह, सेवापरायणता

व त्याग आदि गुणों में पुरुष का वास्तविक सौन्दर्य खिल उठता है[1]।

ग. प्राकृतिक सौन्दर्य

प्रकृति मानव की आदिम सहचरी है। मानव की जीवन लीला विराट प्रकृति की गोद में खेली रहती है। इसलिए महान कवियों की कृतियों में मानव के साथ प्रकृति का भी चित्रण मिलता है। प्रकृति हमें निष्काम आनन्द का अनुभव प्रदान करती है। यही कारण है कि जीवन और साहित्य में उसका बड़ा महत्व है उसे हम साहित्य और कला का प्रेरणा-स्रोत कह सकते हैं। प्रकृति का सौन्दर्य मनुष्य को आकृष्ट करता है और मनुष्य प्रकृति के प्रति प्रेम करने लगता है। प्रकृति का इतिहास मानवता के इतिहास से भी प्राचीन है। सृष्टि के बीच सर्वप्रथम जब मानवता की आँखें खुलीं अथवा मानव ने जब अस्तित्व ग्रहण किया तो सर्व प्रथम उसने अपने सामने प्रकृति की रमणीयता देखी तथा उसने अपने को उससे घिरा पाया। उसने प्रकृति के सहारे ही जीना सीखा तथा उससे सन्देश प्राप्त करके ही वह उद्बुद्ध हो पाया। संसार और मानव-जीवन में प्रकृति का स्थान अत्यंत महत्व का है। प्रकृति का वर्णन कविता में पुरातन सनातन वस्तु है। व्यक्ति अपने जीवन में प्रकृति की परिधि द्वारा घिरा रहने के कारण उस से अलग रहकर सोच ही नहीं सकता। उसके विचारों तथा उद्गारों पर प्रकृति का प्रभाव वांछनीय है[2]। सचमुच भारतीय मनीषा को प्रकृति सहचरी के मनोहर और मनोमय रूप से जितनी प्रेरणा मिली है और हृदय को सौन्दर्यानुभूति और मस्तिष्क को चिन्तन का जितना विस्तार मिला है, उतना सृष्टि के किसी अन्य तत्व से नहीं।

---

1. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल - आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य - पृ.180

2. डा.त्रिभुवन सिंह - आधुनिक हिन्दी काव्य की स्वच्छन्दधारा पृ.107

प्रकृति-प्रेम का रूप "स्वच्छन्द-युग" की कविताओं में विशिष्ट महत्व रखता है। लगभग सभी कवियों के काव्य में किसी न किसी रूप में प्रकृति सुषमा के प्रति प्रेम अथवा प्रकृति रूपों से आकर्षण उभरा हुआ दिखलाई पड़ता है। किसी न किसी रूप में प्रकृति इस युग में इतनी प्रमुख हो उठी है कि बहुत से विज्ञ आलोचकों का यह विश्वास हो गया कि प्रकृति-प्रेम ही स्वच्छन्द-युगीन काव्य का मुख्य विभेदक लक्षण है।[1]

<u>प्राकृतिक सौन्दर्य की विशेषताएं</u>

प्राकृतिक सौन्दर्य की सब से प्रमुख विशेषता यह है कि वह सब देशों के लोगों केलिए आस्वाद्य रहा है। प्रकृति का सौन्दर्य कोमल या मधुर भी हो सकता है, भीषण या परुष भी। कुछ लोगों केलिए उसके किसी एक पक्ष ही सुन्दर लगता है तो और कुछ लोगों केलिए उसके दोनों पक्ष ही आकर्षक लगते हैं। जो उसके दोनों पक्षों की ओर आकृष्ट होता है, वही प्रकृति का सच्चा प्रेमी कहा जा सकता है। प्रत्येक क्षण में नवीनता का संचार सौन्दर्य का एक प्रमुख लक्षण है।[2] यह लक्षण प्रकृति में पर्याप्त मात्रा में देख सकते हैं। अरुणोदय, इन्द्रधनुष और पूर्णिमा का सौन्दर्य हमें एक विशेष आनंद प्रदान करता है। प्राकृतिक सौन्दर्य के आस्वादन से मनुष्य का अन्त:करण परिष्कृत एवं उदार बन जाता है।

---

1. डा॰ त्रिभुवन सिंह - आधुनिक हिन्दी काव्य की स्वच्छन्दधारा पृ॰106

2. "क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेवरूपं रमणीयताया:"। माघ

(2) भाव-सौन्दर्य

महान कवि अपनी कृतियों में रूप के साथ भाव का भी वर्णन करते हैं। मानव भावुक प्राणी है। मानव जीवन के चित्रकार कवि का ध्यान मानव के मनोभावों पर पड़ता है। इसलिए महत्त्वपूर्ण काव्य - कृतियों में रूप-चित्रण के साथ - साथ भाव चित्रण के दर्शन होते हैं। रूप - चित्रण की तुलना में भाव-चित्रण अधिक महत्त्वपूर्ण है। अमूर्त भावों का मार्मिक वर्णन करना और उन्हें मूर्तिमत्ता प्रदान करना समर्थ कवियों का ही काम है। स्वच्छन्दतावादी कवि अधिक भावुक हैं। अतः उनकी कविता में भाव सौन्दर्यांकन भी विशेषतः दृष्टिगोचर होती है।

(3) कर्म-सौन्दर्य

जीवन कर्मक्षेत्र है। जीवित मनुष्य निरन्तर कर्मण्य रहता है। कर्मण्यता जीवन की चेतना का लक्षण है। अतएव जीवन की चेतना को वाणी देनेवाले कवियों की दृष्टि जीवन के कर्म-पक्ष पर भी पड़ती है। यही कारण है कि महती काव्य कृतियों में कर्म-सौन्दर्य के दर्शन होते हैं। स्वच्छन्दतावादी कवियों की कृतियों में कर्म-सौन्दर्य की उपेक्षा नहीं हुई है।

****

चौथा अध्याय

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम

स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम का स्वरूप

प्रेम या प्रणय को ही स्वच्छन्दतावादी कविता का केन्द्र-बिन्दु मानना चाहिए । स्वच्छन्दतावादी प्रेम की मुख्य विशेषता यह है कि इस में प्रेम-विषयक प्राचीन या परंपरागत धारणा की एकदम उपेक्षा देखने को मिलती है । प्राचीन काव्य में लौकिक - अलौकिक, ऐन्द्रिय, आत्मिक, स्वकीया-परकीया आदि प्रेम के विभिन्न विभाजन जो मिलते हैं वह स्वच्छन्दतावादी काव्य में नहीं मिलते । तुलसी ने निर्गुण को भी सगुण बनाने का प्रयत्न किया । किन्तु नवीन कवि तो प्रत्यक्ष जगत के प्राणी को अलौकिकता का आवरण प्रदान करके अपने काव्य में प्रस्तुत करते हैं । भारतीय नीतिशास्त्र के अनुसार पर-स्त्री या पर-पुरुष की ओर दृष्टिपात करना पाप समझा गया है । किन्तु स्वच्छन्दतावादी कवि इस पर कोई ध्यान नहीं देते । इसी कारण स्वच्छन्दतावादी काव्य पर अनैतिकता का आरोप भी लगाया गया है ।

स्वच्छन्दतावादी काव्य की दूसरी विशेषता यह है कि उसमें शृंगार-रस चित्रण में आनेवाले नख - शिख वर्णन, षट्ऋतुवर्णन, बारह मासा, नायिका-भेद आदि परंपरागत विधानों का पूर्ण अभाव मिलता है । स्वच्छन्दतावादियों ने अपनी प्रतिभा के बल पर मौलिकता का परिचय दिया । हिन्दी के ऐसे कवियों में प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी तथा मलयालम के कवियों में आशान, वल्लत्तोल, उल्लूर, चंगंपुषा और जी॰ शंकरकुरुप विशेष महत्त्व रखते हैं । आलम्बन, उद्दीपन, अनुभाव, संचारीभाव आदि रस-सामग्री के आधार पर काव्य निर्माण करना नवीन कवियों केलिए एक प्रकार का बन्धन प्रतीत होने लगा । अभिव्यक्ति पर अधिक महत्त्व देने लगा । दीर्घ कविताओं की उपेक्षा होने लगी । मुक्तक तथा लघु कविता या छोटे-छोटे गीतों का प्रचार होने लगा ।

वर्णन की अपेक्षा भावाभिव्यक्ति की ओर अधिक ध्यान देने लगा । नैतिकबन्धनों की उपेक्षा होने लगी और स्वच्छन्दता के प्रति अधिक मोह होने लगा । इस कारण हीन वासनाओं के उद्गारों को भी इस परिस्थिति से लाभ उठाकर उच्च प्रेम की कोटि में आने का अच्छा हीला - बहाना मिल गया । प्रेम के इस विकृत स्वरूप का उद्गम स्वच्छंद प्रेम या मुक्त प्रेम की सीमातीत प्रवृत्ति है । यों स्वच्छन्द प्रेम, प्राकृतिक चुनाव के नियम के रूप में और उसके अनुसार जीवन की एक स्वस्थ सुन्दर परम्परा है, किन्तु अमर्यादित, उच्छृंखल तथा विवेकहीन होकर अधोमुखी होने का खतरा भी उसके सामने रहता है । युवक - युवतियों के पारस्परिक सम्पर्कों के अधिक अवसर तथा चलचित्र व उपन्यासों में अंकित अतिकल्पनापूर्ण आदर्शात्मक प्रेम कहानियों से प्राप्त मनोरंजन आदि स्वच्छंद प्रेम की प्रवृत्ति का पोषण करते हैं" [1] अवश्य ही भावनाओं के क्रमिक उदात्तीकरण से ऐन्द्रिक प्रेम भी शनैःशनैः बहुत कुछ निर्मल हो जाता है [2] । किन्तु कुछ विचारकों के अनुसार इस प्रेम में भी आपत्ति विद्यमान है [3] । स्वच्छन्दतावाद के प्रमुख कवियों के काव्य में गम्भीर और पावन प्रेम के दर्शन मिलते हैं । किन्तु कुछ कवि वासना की ओर अधिक अग्रसर हुए ।

स्वच्छन्दतावादी प्रेम की और एक विशेषता यह है कि इस में मिलन में वेदना की अनुभूति होती है और वेदना में सुख-संतोष की विरह में व्यथा होना तो स्वाभाविक है, किन्तु मिलन में भी जलन का अनुभव करना एक अनोखी प्रवृत्ति है ।

यद्यपि स्वच्छन्दतावादी कविता में अतिकाल्पनिक या वायवीयता विद्यमान है, तो भी प्रेम को सूक्ष्म और उदात्त बनाने में स्वच्छन्दतावादी कवियों का महान योगदान रहा है ।

---

1. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल - आधुनिक हिन्दी काव्य में प्रेम और सौन्दर्य - पृ.329
2. वही
3. Aurobindo Ghose - 'The Bases of Yoga' p.98

हम ने देखा कि स्वच्छन्दतावादियों ने लौकिक अलौकिक सूक्ष्म-स्थूल आदि भेदों की ओर ध्यान नहीं दिया । कविता में सत्य, शिव और सुन्दर का समुचित समावेश है तो वह स्वीकार्य व आदरणीय बन जाता है । यही विचार युग की प्रेम-भावना का आधार है । प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी आदि सभी प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियों में यह धारणा विद्यमान है । कवि केलिए प्रेम की यह स्थिति अत्यंत पवित्र एवं प्रकाशपूर्ण है -

"जिसके प्रकाश में सकल कर्म, बनते कोमल उज्ज्वल उदार"[1] ।

किन्तु यह प्रेम कभी मिलता नहीं यह केवल दिया ही जाता है -

"पागल रे, वह मिलता है कब, उसको तो देते ही हैं सब"[2] ।

प्रेम की अनुभूति भी अत्यंत निराली है । जब प्रेम की पवित्र अनुभूति हो जाती है तो मानों सब कहीं आनन्द छा जाता है -

वर्षा होने लगी कुसुम मकरंद की,
प्राण पपीहा बोल उठा आनंद में ।
कैसी छवि ने बाल अरुण सी प्रकट हो,
शून्य हृदय को नवल राग रंजित किया ।
सद्यः स्नात हुआ मैं प्रेम सुतीर्थ में,
मन पवित्र उत्साहपूर्ण सा हो गया ।
विश्व विमल आनन्द भवन सा हो गया,
मेरे जीवन का वह प्रथम प्रभात सा[3] ।

---

1. प्रसाद-लहर - पृ.36
2. लहर - पृ.37
3. झरना - पृ. 6

प्रेम भक्ति को एक दिव्य अनुभूति प्रदान करता है । यह प्रेम सृष्टि लीला की प्रेरणा भी है । सारी सृष्टि के मूल में हम प्रेम का विकास देखते हैं -

यह लीला जिसकी विकस चली,
वह मूल शक्ति थी प्रेम कला,
उसका संदेश सुनाने को,
संसृति में आई वह अमला[1] ।

कामायनी में हम देखते हैं कि नायिका श्रद्धा नायक मनु को इसी परिष्कृत प्रेम का पाठ पढ़ाती है -

काम मंगल से मंडित श्रेय, सर्ग, इच्छा का है परिणाम,
तिरस्कृत कर उस को तुम भूल, बनाते हो असफल भवधाम[2] ।

प्रेम की पवित्रता तथा महत्व का चित्रण कामायनी में संघर्ष सर्ग में भी मिलता है । यहाँ कवि ने इडा तथा मनु के संघर्ष के प्रसंग में क्रुद्ध काम की पराजय दिखा दिया है ।

प्रेम में यह शक्ति निहित है कि उसके द्वारा संसार का सारा पाप पुण्य में परिणत हो जाता है -

हे जन्म-जन्म के जीवन, साथी संसृति के दुख में,
पावन प्रभात हो जावे, जागो आलस के सुख में ।

---

1. कामायनी - कामसर्ग
2. कामायनी - श्रद्धासर्ग ।

जगती का कलुष अपावन, तेरी विदग्धता पावे,
फिर निखर उठे निर्मलता यह पाप पुण्य हो जावे ।[1]

भारतीय प्रेम व सौन्दर्य का महान गुण है पवित्रता । कविवर पंत की इन पंक्तियों में हृदय की पावनता, माधुर्य एवं गंभीरता का सुन्दर समावेश मिलता है -

एक वीणा की मृदु झंकार, कहाँ है सुन्दरता का पार ।
तुम्हें किस दर्पण में सुकुमारि, दिखाऊँ मैं साकार ।
तुम्हारे छूने में था प्राण, संग में पावन गंगास्नान ।
तुम्हारी वाणी में कल्याणि, त्रिवेणी की लहरों का गान ।[2]

पंत जी की प्रेम-संबन्धी धारणा अत्यंत व्यापक है । वह जीवन के विभिन्न संबन्धों के बीच में उसी की व्याप्ति दिखाकर प्रेम के महत्व की घोषणा कर रहा है -

कहाँ नहीं है स्नेह साँस सा सब के उर में ।
रुदन, क्रीड़न, आलिंगन, मरण सेवन, आराधन,
शशि की सी ये कलित कलाएं किलक रही हैं पुर पुर में ।[3]

वस्तुतः प्रेम के नाते ही सारा संसार एक सूत्र में बंधा है -

---

1. आँसू - पृ.74
2. पल्लव पृ.18
3. वही {उच्छ्वास नामक कविता}

एक ही तो असीम उल्लास विश्व में पाता विविधाभास,
तरल जलनिधि में हरित विलास शांत अम्बर में नील विकास,
वही उर उर में प्रेमोच्छ्वास काव्य में रस, कुसुमों में वास,
अचल तारक पलकों में हास, लोल लहरों में लास ।[1]

बचपन से लेकर मरण तक मनुष्य प्रेम से ही परिचालित रहता है -

यही तो है बचपन का हास खिले यौवन का मधुप विलास,
प्रौढ़ता का वह बुद्धि-विलास, जरा का अन्तर्नयन-प्रकाश,[2]
जन्म दिन का है यही हुलास, मृत्यु का यही दीर्घ निश्वास ।

केवल शारीरिक भोग को ही प्रेम मानना ठीकनहीं । उसका स्थान इससे भी ऊँचा है । प्रेम में एक दिव्य शक्ति निहित है और उस से ही हृदय की मुक्ति होती है -

देह नहीं है परिधि प्रणय की प्रणय दिव्य है, मुक्ति हृदय की[3] ।

इसी कारण प्रेम कवि की साधना का लक्ष्य बन जाता है । इस पर ही संसार का जीवन निर्भर रहता है -

हर कोमल शब्दों को चुन चुन, मैं लिखता जन-जन के मन पर,
मानव-आत्मा का खाद्य प्रेम, जिस पर है जगजीवन निर्भर[4] ।

---

1. पल्लव - पृ.87
2. वही (उच्छ्वास)
3. स्वर्ण किरण - पृ.38
4. युगवाणी - पृ.26

उपर्युक्त उद्‌गारों से युग के प्रेम-सम्बन्धी दृष्टि का परिचय मिल जाता है । मलयालम के रोमान्टिक कवियों ने भी प्रेम के महत्व का स्पष्ट परिचय दिया है । इस दृष्टि से आशान का महत्व पूर्ण स्थान है । आशान को प्रेम का गायक कहना ही उचित होगा । उनकी सभी कविताओं का केन्द्र-बिन्दु प्रेम है । आशान के अनुसार प्रेम ही संसार के अस्तित्व का आधार है । देखिए -

स्नेहत्तिल निन्नुदिक्कुन्नु लोकम्
स्नेहत्ताल वृद्धि तेटुन्नु
स्नेहम् तान शक्ति जगत्तिल स्वयम्
स्नेहम् तानानन्दमार्क्कुम् र
स्नेहम् तान जीवितम् श्रीमन्, स्नेह -
व्याहति तन्ने मरणम् ।[1]

अर्थात् प्रेम से विश्व का उदय होता है, प्रेम से उसकी वृद्धि होती है, प्रेम ही जग में शक्ति है । प्रेम से सब को आनन्द मिलता है । प्रेम ही जीवन है और प्रेम की व्याहति ही मृत्यु है ।

यहाँ कवि ने अत्यंत सशक्त वाणी में प्रेम की महत्ता की घोषणा की है । और एक जगह उन्होंने कहा है -

स्नेहमाणखिल सारमूषियिल
स्नेहसारमिह सत्यमेकमाम् ।[2]

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.254
2. वही प्रथम भाग - पृ.126

अर्थात् पृथ्वी के समस्त तत्वों का सार प्रेम है, प्रेम का एकमात्र सार है सत्य ।

कवि के अनुसार इस विश्व का जीवन ही प्रेम है । यथा -

स्नेहम् जगत्तिन् जीवितमाम् निसम्शयम् ।[1]

अर्थात् इस संसार के जीवन का नाम ही प्रेम है । आशान के विचार में प्रेम शृंखला से बंधे हुए प्राणियों की आवश्यकता एवं उनका कर्तव्य प्रेम की वृद्धि करना है । प्रेम स्वार्थ-त्याग एवं परार्थ कर्मों में अधिष्ठित रहता है । यह त्याग तो व्यक्ति के सुख को कम नहीं करता, अपितु बढाता ही है । आत्म-सुख का पर्याय है प्रेम । मानव के बीच के सभी संबन्धों में - प्रेमी-प्रेमिका के प्रणय से लेकर विश्व प्रेम तक - प्रेम व्याप्त रहता है । प्रेम की उपेक्षा होने पर जीवन निरर्थक बन जाता है । विश्व जीवन की मनोहारिता तथा चैतन्य प्रेम पर निर्भर रहता है ।

वस्तुत: प्रेम-संबन्धी आशान के विचार अत्यंत महत्वपूर्ण हैं । हिन्दी और मलयालम के और किसी भी कवि ने प्रेम पर इतने विचारात्मक तथा मूल्यवान अभिप्राय प्रकट नहीं किये हैं ।

महाकवि उल्लूर ने भी प्रेम के विषय में महत्वपूर्ण विचार व्यक्त किया है । "प्रेमसंगीत" के कवि उल्लूर मलयालम का प्रमुख प्रेम गायक है । स्वार्थहीन आपसी प्रेम, एकता, परोपकार, विश्वबन्धुत्व आदि महान आदर्शों पर इतने मनोयोग के साथ दुहरा कर गानेवाले कवि मलयालम में विरले ही मिलेंगे । उनका विश्वास था कि मानव समूह एक ही परिवार है, और आपसी प्रेम तथा आपसी सेवा में ही

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.357

उसका अस्तित्व है । "सुखम् सुखम्" नामक कविता में कवि प्रेम की प्रशंसा करते हैं । यथा -

यातोन्नु देवत्तिन्नु मूर्तिपोलुम
यातोन्नु विश्वत्तिनु तूणुपोलुम
यातोन्नु मोक्षत्तिनु कोणि पोलुम
आ स्नेहम् - आ स्नेहम् - अहो जयिप्पू ।[1]

अर्थात् जो भगवान केलिए मूर्ति के समान है, जो विश्व केलिए मीनार के समान है और जो स्वर्ग केलिए सीढी के समान है, उस प्रेम की जीत हो जाय ।

"मृणालिनी" नामक कविता में भी कवि प्रेम की महिमा का वर्णन करते हैं। देखिए -

प्रेममे ! विशुद्धमाम्
हेममे ! मोक्षापर -
नाममे ! योगक्षेम -
धाममे ! जयिच्चलुम् ।[2]

अर्थात् हे प्रेम ! निर्मल सुवर्ण, मोक्ष का पर्याय, योगक्षेमका आधार, तेरी जीत हो जाय ।

---

1. उल्लूरिन्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ. 692
2. वही द्वितीय भाग पृ. 172

इस विश्व के अस्तित्व के मूल में कवि प्रेम की शक्ति ही देखते हैं। यथा -

प्रेमम् तान प्रपञ्जत्तिल
प्रेष्ठमाम् जीवाधारम्
प्रेमत्तिन्नभावत्तिल
ब्रह्माण्डम निश्चेतनम् ।[1]

अर्थात् इस संसार के जीवन का आधार ही प्रेम है। प्रेम के अभाव में सारा ब्रह्माण्ड ही निश्चेष्ट बन जाता है।

इस प्रकार चराचर जगत में प्रेम-रूपी विशिष्ट भाव को देखनेवाले कवि एक महत्वपूर्ण दर्शन ही हमारे सम्मुख प्रस्तुत करते हैं। उल्लूर की "प्रेमसंगीत" शीर्षक कविता प्रेम-विज्ञान का उपनिषद है। प्रेम की महिमा पर इतनी हृदय स्पर्शी कविता अन्यत्र नहीं मिलती। प्रेम के अपार महत्व पर प्रकाश डालते हुए कवि कहते हैं -

ओरोट्टमतमुण्टुलकिन्नुयिराम्
प्रेममतोन्नल्लो
परक्केनम्मेष्पालमृतुट्टुम्
पार्वणशशिबिम्बम् ।[2]

अर्थात् विश्व के प्राण-स्वरूप एक ही धर्म है और वह है प्रेम। वह हमें दुग्धरूपी अमृत पिलानेवाला चन्द्रमा है।

---

1. उल्लूरिन्टे पद्यकृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.231
2. वही पृ.147

जी॰ शंकर कुरुप ने भी प्रेम पर अपने विचार प्रकट करते हुए उसकी महत्ता दिखाने का प्रयत्न किया है । यथा -

प्रेम ही परम सुख है
प्रेम भी ही है परम दुःख
मेरा प्रेम दिक्काल से परे
सदा ज्वलित रहे[1] ।

"जी" ने इस प्रकार जीवन को सुन्दर और सुखमय बनानेवाली महान शक्ति के रूप में प्रेम को देखा है ।

चंगपुष़ा केलिए प्रेम में जीवन को निर्वाण प्रदान करने की क्षमता निहित है । यथा,

निर्व्याज स्नेहमे ! जीवितत्तिन्नोरु
निर्वाणदायिकयल्लयो नी[2] ?

अर्थात् हे निष्कलंक प्रेम ! तू जीवन को निर्वाण प्रदान करनेवाला है । कवि के मत में प्रेम अनश्वर है । यथा,

स्नेहमनर्घ, मनश्वर, मत्यन्त -
मोहनम्, जीवित शान्तिसुमम्[3] ।

अर्थात् प्रेम अनर्घ है, अनश्वर है, अत्यधिक सुन्दर है । वह जीवन को शान्ति प्रदान करनेवाला सुमन है ।

---

1. जी॰ शंकर कुरुप - ओटक्कुष़ल - अनुवाद - पृ॰137
2. चंगपुष़ा कृतिकल - द्वितीय भाग - पृ॰150
3. वही पृ॰152

वस्तुत: स्वच्छन्दतावादी कवियों की प्रेम-संबन्धी धारणा भावात्मक और आदर्शवादी प्रतीत होती है । प्रेम की भूमि अत्यंत विस्तृत है । वह व्यक्ति से लेकर विश्व तक व्याप्त है । उस भव्य प्रेम का मंगल प्रकाश व्यक्ति की संकुचित सीमा से लेकर राष्ट्र और विश्व के क्षितिज तक परिव्याप्त हो जाता है । इस दृष्टि से प्रेम के मुख्य पांच रूप दृष्टिगोचर होते हैं -
§1§ स्त्री-पुरुष का प्रेम §2§ प्रकृति-प्रेम §3§ देश-प्रेम §4§ विश्वप्रेम
§5§ ईश्वरीय-प्रेम ।

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रेम के इन विभिन्न रूपों का मर्मस्पर्शी प्रतिपादन किया है ।

1. स्त्री-पुरुष प्रेम

प्रेम के विभिन्न रूपों में स्त्री-पुरुष प्रेम का सर्वाधिक महत्व है । सभी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रेम के इस रूप का विशद प्रतिपादन किया है । इन कवियों ने प्रेम के संयोग और वियोग इन दोनों ही अनुभूतियों का बड़ा ही मनोयोगपूर्ण प्रतिपादन किया है ।

क. संयोग-पक्ष

दो हृदयों का स्वाभाविक मिलन एक विशेष अनुभूति है । इसे एक दिव्य अनुभूति मानना उचित होगा । कभी-कभी हमें भी इसका अनुभव होता है ।

मिलन के रोमांच, पुलक-कम्प आदि से हम थोड़ा बहुत परिचित भी होंगे, किन्तु हम इस अनुभव का उपयुक्त वर्णन नहीं कर पाते । मिलन केवल एक ऐन्द्रिक-स्पर्श संयोग नहीं है । उसे एक आध्यात्मिक अनुभव मानना चाहिए ।

स्वच्छन्दतावादी कवियों ने संयोग की अनुभूति का स्वाभाविक तथा सुन्दर वर्णन किया है । यद्यपि इन कवियों ने वियोग की अनुभूति का ही अधिक वर्णन किया है, तथापि मिलन भावना की प्रौढ एवं सशक्त अभिव्यक्ति भी इन कविताओं में प्राप्त होती है । कुछ कवियों के संबन्ध में यह मिलन-वर्णन आत्म-व्यंजक भी है ।

हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रेम का सांगोपांग वर्णन किया है । इस दृष्टि से "प्रसाद" का स्थान सर्वप्रथम है । वस्तुत: प्रसाद प्रेम का ही कवि है । प्रसाद साहित्य की मूल प्रेरणा प्रेम है । वही उन्हें साहित्य के इतने बहुरूपी संसार में भटकाती रहा है । उसकी विविध भंगिमाओं को पकड़ने और तलाशने केलिए उन्होंने जीवन, साहित्य इतिहास और दर्शन लोक की यात्राएं की हैं । वे उसके समग्र आभ्यंतरिक रूप और एक आदर्श प्रतिमा के निर्माण केलिए आजीवन व्याकुल रहे हैं । अधूरे "प्रेम पथिक" से लेकर अधूरी "इरावती" तक की उनकी साहित्यिक-यात्रा प्रेम-यात्रा ही है । हिन्दी में ऐसा कोई साहित्यकार नहीं हुआ - न प्रेम की ऐहिकता को सर्वस्व माननेवाले रीति-वादियों में और स्वच्छन्द प्रेम का उद्घोष करनेवाले छायावादियों में जिसने प्रेम को खोजने, पाने और स्थापित करने केलिए इतनी व्यापक, बहुमुखी और सूक्ष्म साधना की हो । "प्रसाद" ने मिलन और विरह दोनों पक्षों का हृदयस्पर्शी चित्रण किया है । "प्रसाद" के अलावा पंत, "निराला" और महादेवी ने भी मिलन भावना की सुन्दर एवं विशद अभिव्यक्ति की है ।

---

1. प्रभाकर श्रोत्रिय : प्रसाद का साहित्य : प्रेम तात्त्विक दृष्टि - प्रस्तावना

मिलन की अनुभूति बड़ी प्राणवान होती है । उसके ज्वार में जीवन के सब कृत्रिम बन्धन नष्ट हो जाते हैं । आत्मा का प्रकाश प्रेम-पात्र को अपनी सुवर्ण रश्मियों से रंजित कर सृष्टि को आनंद पूर्ण बना देता है । प्रिय के नाते इस पृथ्वी का कण-कण और समस्त विश्व एकदम चमक उठता है ।[1] इस मिलन की एक प्रमुख विशेषता है जीवन की परिपूर्णता की अनुभूति । प्रेमी को ऐसा मालूम होने लगता है कि आज जीवन में सब कुछ प्राप्त हो गया । उसका मन पवित्र हो गया-सा लगता है । यथा,

सद्यः स्नात हुआ मैं प्रेम सुतीर्थ में मन पवित्र
उत्साहपूर्ण सा हो गया ।[2]

आलम्बन ही मिलन-भावना का प्रमुख आधार है । आलम्बन के प्रति उत्पन्न भावों की व्यंजना में भी स्वच्छन्दतावादियों की अपनी विशेषताएं हैं । वे तो स्वच्छन्दता के अति आग्रह के कारण शास्त्रीय ढाँचे का अधिक ध्यान नहीं रखते । भाव की स्वतंत्र व्यंजना में ही वे रुचि रखते हैं ।

"कामायनी" में संयोग का बड़ा सुन्दर चित्र मिलता है । श्रद्धा और मनु के मिलन की अनुभूति प्रसाद ने कितनी तन्मयता के साथ चित्रित किया है -

सुना यह मनु ने मधु गुंजार, मधुकरी का सा जब सानन्द,
किए मुख नीचा कमल समान, प्रथम कवि का ज्यों सुन्दर छन्द ।
एक झिटका सा लगा सहर्ष, निरखने लगे लुटे से कौन ?
गा रहा यह सुन्दर संगीत, कुतूहल रह न सका फिर मौन ।
कौन हो तुम वसन्त के दूत, विरस पतझड़ में अतिसुकुमार ?
घन तिमिर में चपला की रेख, तपन में शीतल मन्द बयार ।

---

1. All the world comesto partake of the fair one splendor' - Will Durant - The Mansious of philosophy, p.290

नखत की आशा किरण समान, हृदय के कोमल कवि की कांत,
कल्पना की लघु लहरी दिव्य, कर रही मानस हलचल शान्त ।[1]

मिलन की यह अनुभूति अत्यंत उल्लासपूर्ण है । "वीणा", "ग्रंथि", "गुंजन" आदि पंत की सभी आरंभिक कृतियों में मिलन-भावना का गम्भीर चित्रण मिलता है । आत्मा के मिलन सुख की दृष्टि से "गुंजन" के कुछ गीतियों का विशेष महत्त्व है । यथा,

अरे वह प्रथम मिलन अज्ञात ।
विकंपित मृदु-उर पुलकित-गात
सशंकित ज्योत्स्ना-सी- चुपचाप,
जड़ित पद, नमित-पलक-दृग-पात,
पास जब आ न सकोगी प्राण !
मधुरता में सी मरी अजान
लाज की छुईमुई सी म्लान
प्रिये, प्राणों की प्राण ![2]

इसी प्रकार "गुंजन" की मधुवन नामक कविता की निम्नलिखित पंक्तियों में भी मिलन का अभिराम रूप द्रष्टव्य है -

मिले अधरों से अधर समान,
नयन से नयन, गात से गात,
पुलक से पुलक, प्राण से प्राण,
भुजों से भुज, कटि से कटि शान !

---

1. कामायनी - श्रद्धा सर्ग
2. गुंजन - पृ.43

आज तन-तन मन -मन हों लीन,
प्राण ! सुख-सुख स्मृति स्मृति चिरसाद्,
एक क्षण, अखिल दिशावधि - हीन,
एक रस, नाम-रूप-अज्ञात ।[1]

"निराला" की कविता में भी मिलन-सुख की मधुर स्मृति द्रष्टव्य है -

आज वह याद है वसन्त, जब प्रथम दिगन्त भी
सुरभि धरा के आकांक्षित हृदय की
दान प्रथम हृदय को या ग्रहण किया हृदय ने,
अज्ञात भावना, सुख चिर मिलन का,
हल किया प्रश्न जब सहज एकत्व का प्राथमिक प्रकृति ने,
उसी दिन कल्पना ने पाई सजीवता ।[2]

कवि कामना करता है कि वह और उसकी प्रिया परस्पर हाथ पकड़े हुए संसार सागर की लहरों में मज़े में बहते रहें - जैसे हम हैं वैसे ही रहें

जैसे हम हैं वैसे ही रहें
लिए हाथ एक दूसरे का अतिशय सुख के सागर में बहें ।[3]

"जागो फिर एक बार" नामक निराला की कविता की इन पंक्तियों में भी संयोग की सुन्दर अभिव्यक्ति मिलती है -

---

1. गुंजन - पृ.61
2. अनामिका - पृ.77
3. अनामिका का आरंभ

सहृदय समीर जैसे
पोंछो प्रिय नयन नीर
शयन-शिथिल बाहें
भर स्वप्निल आवेश में,
आतुर उर वसन-मुक्त कर दो,
सब सुप्ति सुखोन्माद हो ।
छूट छूट अलस
फैल जाने दो पीठ पर
कल्पना से कोमल
ऋजु कुटिल प्रसार कामी केश गुच्छ ।
तन मन थक जायें,
मृदु सुरभि-सी समीर में
बुद्धि बुद्धि में हो लीन
मन में मन जी जी में,
एक अनुभव बहता रहे
उभय आत्माओं में ।[1]

महादेवी ने भी संयोग का सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया है । महादेवी को क्षणिक सुख में संतोष नहीं । वह तो शाश्वत सुख ही चाहती है । किन्तु ऐसे सुख की प्राप्ति किसी अलौकिक प्रियतम से ही होती है । अत: वह कहती है -

तमके पर्दे में छिप कर भाता प्रियतम को आना ,
ऐ नभ की तारावलियो, तुम पल भर को छिप जाना ।[2]

---

1. अपरा पृ. 17
2. महादेवी - यामा

यद्यपि कवयित्री का अभी अपने अनश्वर प्रियतम से साक्षात्कार नहीं हुआ, तो भी उसे ज्ञात हो रहा है कि प्रियतम उसके पास आता है -

सजनि कौन तुम में परिचित सा सुधि सा, छाया सा, आता ?
सूने में सस्मित चितवन से जीवन दीप जला जाता ।
छू स्मृतियों के बाल जगाता, मूक वेदनाएं दुलराता,
हृत्तन्त्री में स्वर भर जाता,
बन्द दृगों में चुम सजल सपनों के चित्र बना जाता ।[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि महादेवी जी की मिलन भावना में अलौकिकता का संचार है ।

---

1. महादेवी - यामा - पृ॰98

मलयालम के रोमान्टिक कवियों ने भी स्त्री-पुरुष प्रेम का विशद प्रतिपादन किया है । उन्होंने भी मिलन और विरह की अनुभूतियों का मार्मिक वर्णन किया है । मिलन-भावना तथा विरह की अनुभूतियों के चित्रण में कुमारन आशान ही सब से आगे हैं । आशान ने ही सर्वप्रथम प्रेम का स्वस्थ रूप दर्शाया । मलयालम के "भक्तियुग" के पश्चात् रचित आट्टकथाओं में श्रृंगार का अश्लीलकारी रूप ही मुख्य था । बाद में "मणिप्रवाल" कवियों ने काव्य क्षेत्र को स्थूल तथा अस्वस्थ श्रृंगारिक रचनाओं से भर दिया । केरलवर्मा के युग में भी श्रृंगार की यही पुरानी अवांछनीय धारा प्रवाह मान थी । आशान के आगमन के बाद ही मलयालम का काव्य-क्षेत्र भव्य प्रेम की पीयूष धारा से अभिसिंचित हुआ ।

आशान के अनुसार प्रेम से ही जगत् की उत्पत्ति और विकास होता है । इसी प्रेम के संबन्ध में "लीला काव्य" में आशान ने लिखा है कि प्रेम मरुभूमि को भी फुलवारी बना देता है[1] ।

अपने "लीला" काव्य में आशान ने प्रेम के विषय में लिखा है कि उसका संबन्ध देह से नहीं है । प्रेम अत्यंत पवित्र है । वह पाने की वस्तु नहीं, देने की वस्तु है ।

आशान ने प्रेम की विफलता का भी मार्मिक चित्रण किया है । "लीला" में कवि ने कहा है कि जगत् में प्रेम को ठीक तरह समझनेवाले और उसे पूर्ण करनेवाले विरले हैं । ऐसे भाग्यवान कम हैं जो प्रेम में सफल होते हैं । नीचे के अवतरण का यही भाव है ।

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ.54।

अरिकिल्लनुरागमेरेया -
लरिवोरतेट्टिटट्, मोक्केयोक्कुकिल
निरवेक्कयिल्ल काम्मितम्
कुरयुम हा ! सखि, भाग्यशालिकल ।[1]

"प्रसाद"के समान आशान भी प्रेम को अमर मानते हैं । मनुष्य का शरीर मिट जाता है किन्तु मानव मन में विकसित प्रेम कुसुम मिटना तो दूर कभी कुम्हलाता भी नहीं । वह जन्म-जन्म तक व्याप्त रहेनेवाला है, चिरन्तन और शाश्वत है । आशान के सीता काव्य में यह भाव व्यक्त होता है ।

मृतियुम स्वयमिल्ल रागमे !
क्षतियेकिल्ल निनक्कु वाङ्मु नी ।[2]

अर्थात् - प्रेम ! मृत्यु भी तुम्हारा यश नहीं करती । तुम सदेव जीवित हो ।

प्रेम की मिलन भावना का मलयालम के कवियों ने भी विशद चित्रण प्रस्तुत किया है । सहज प्राकृतिक आकर्षणों से लिये हुए दो हृदयों का मिलन जीवन की मधुरतम अनुभूति है । आशान ने प्रेम की मिलनानुभूति का मनोरम चित्रण किया है । उदाहरणार्थ नलिनी का यह अवतरण प्रस्तुत है ।

अप्पोषाशु तन्निये विटर्न्नवल -
वकुलमलकलोटिटऽऽन कण्णुकल

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ.160
2. वही पृ.542

उल्प्रमोदमथ वेल्लियेद्दमा -
र्न्दक्ताक्ष्यूटे चन्द्रनोयति ॥[1]

x x x x x

औद्दियोन्मथ कुण्डिठनिम्नु पि -
न्नोद्दु सुप्रमिमयन्नुमाऽऽवल
तिद्दमायु यतिये नोक्कि, यापिथे
मुद्दिनिन्नणमुरिऽऽवारिपोल ।

भावार्थ है, उस समय उसके कमल नयन प्रफुल्लित हुए । आनन्द का ज्वार उमड पडा । क्या, यह मुनि उसका चन्द्रमा है ? वह कंपित हुई, विवश हुई । घबराई, सेतु का बंधन तोडकर समुद्र से मिलनेवाली नदी के समान आगे बढी और उसे देखती रह गयी ।

उपर्युक्त पंक्तियों में आशान ने मिलनोन्मुख प्रेमानुभूति की तीव्रता से आन्दोलित नारी हृदय का चित्रण किया है ।

अपने अन्य काव्यों में भी आशान ने प्रसंगानुसार मिलन की अनुभूति का चित्रण किया है । निम्नलिखित पंक्तियों में मिलन का चित्र देखिए -

उटलविनिलणञ्ञु शुष्कमाकुम्
विटपियिल मोहनवल्लियोले निन्नाल,
तटविविवशमविमोमने, ये-
न्निटरिविलिच्चवलक्कण्णीरयोरिऽऽाल ।[2]

1• कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - 101
2• वही पृ• 186

भावार्थ है, सूखे वृक्ष पर लगी सुन्दर लता के समान उसका प्रिय: आलिंगन कर वह खड़ी हुई । कंपित स्वर में वह उसके अंगों को सहलाने लगी । उसकी आंखों से आंसु टपकने लगे । महाकवि वल्लत्तोल ने भी संयोग की भावना का विशद प्रतिपादन किया है । मिलन में जो सुख है वह अन्यत्र नहीं । मिलन की दशा में अंधकारपूर्ण कारागृह भी अत्यंत सुखद है । "बन्धनस्थनाय अनिरुद्धन" [बन्दी अनिरुद्ध] नामक कविता में नायिका उषा का उद्गार देखिए-

वल्लात्तिरुद्टरयितेन्न सुखाद्ययमडकु -
म्मिल्लात्त मामक महामणिमेटयेक्काल ।[1]

अर्थात्, तेरे बिना मेरे विशाल वैभवशाली महल में रहने से भी तेरे साथ इस भयानक कारागृह में रहने में ही मैं सुख का अनुभव करती हूं ।

इस प्रकार संयोग की दशा में नायिका को सारी तकलीफें तुच्छ प्रतीत होती हैं । प्रेमिका से मिलने में जो सुख है, उसके समक्ष स्वर्गीय सुख भी तुच्छ है । यथा,

कल्याणी, नीयरिकिलीविधमुल्लसिक्के -
प्पुल्लाणेनिक्कु सुरलोक सुखानुभोगम्
उल्लासदे, कयनुन्निन्नु पुण्याद्रिचित्त -
मल्लाते वेण्टुलकिल मट्टोरुभागधेयम् ।[2]

भावार्थ है, हे कल्याणि ! तू मेरे निकट इस प्रकार उल्लास करती रहेगी तो सुरलोक सुखानुभाव भी मेरे लिये तुच्छ है । हे आनन्द दायिनी ! इस

---

1. वल्लत्तोलिन्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ.194
2. कोंपुष्पाकृतिकल - प्रथम भाग - पृ.276

दुनिया में तेरे प्रणयार्द्र चित्त के सिवा मुझे और कुछ नहीं चाहिए ।

इस प्रकार प्रेमिका के मिलन में प्रेमी सुख का चरमोत्कर्ष देखता है ।

प्रेमिका से मिलन में प्रेमी को जिस आनन्द की प्राप्ति होती है वह हजारों जन्मों से ही मिल सकता है । यथा,

चन्द्रिके, मन्मानस वीणयिलेतुम् प्रेम -
तन्तुके नीयिन्नेन्ने मट्टोरालाक्किल्लीर्त्तु ।
आयिरम् जन्मम् कोण्टु नेटुवानकिष्याव् -
न्नानन्ममार्तिष्यु ञानोक्षमात्रम्मुल्लिल ।[1]

अर्थात्, हे चन्द्रिके, मेरे मन रूपी वीणा के तार, आज तूने मुझे और एक व्यक्ति बनाया । तेरे मिलन के पल-भर की बेला में मुझे हजारों जन्मों से मिलने वाले आनन्द की अनुभूति होती है ।

जी॰ शंकर कुरुप भी संयोग सुख में सुर-लोक के सुख को तुच्छ मानता है । यथा,

और, गोद में प्रिया मेरी चिर संचित पुण्य प्रतीक
मधुर तारुण्यमयी
जिसके रागपूर्ण नेत्रों से भरता हो रस -
यही बहुत है मेरे लिए
आ गया मेरी मुट्ठी में सब कुछ,
नगण्य है फिर सुर-लोक भी ।[2]

1• चंगम्पुषा कृतिकल - प्रथम भाग - पृ॰142

2• "जी" ओटक्कुषल - अनुवाद - पृ॰167

ङ. वियोग-पक्ष

वियोग या विरह वर्णन कवि-हृदय की सरसता का परिचायक है। वस्तुतः वियोग वर्णन को हम कवि-प्रतिभा की कसौटी कह सकते हैं। विरह की दशा में हृदय में भाव-तरंगें लहराती हैं जिनका चित्रण अत्यंत कुशल भाव-चित्रकार कवि ही कर सकते हैं। वियोग में प्रेम की गति विद्यमान है। वियोग ही प्रेम का सच्चा जीवन है। इसी कारण संयोग की अपेक्षा वियोग का महत्वपूर्ण स्थान है। विरह में आत्मा तरलित होकर बह जाती है। दया, ममता सहानुभूति आदि विशेष गुणों का उदय विरह में ही हो पाता है। यही कारण है कि साहित्य में संयोग की अपेक्षा वियोग का अधिक महत्व माना जाता है। महाकवि कालिदास विरह में ही सच्चे प्रेम का दर्शन करते हैं[1]। हिन्दी तथा मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने भी प्रेम के वियोग-पक्ष को अधिक महत्व प्रदान किया है। पंतजी तो वियोग से ही कविता की उत्पत्ति मानते हैं। उनके अनुसार विश्व का पहला कवि सचमुच वियोगी होगा। यथा, वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान।

उमड़कर आँखों से चुपचाप, बही होगी कविता अनजान[2]।।

विरह में दुःख अवश्य है, किन्तु कवि के लिए
वह वरदान-सा लगता है -

विरह है अथवा यह वरदान।
कल्पना में है कसकती वेदना, अश्रु में जीता,
सिसकता गान है,
शून्य आहों में सुरीले छन्द हैं, मधुर लय का
क्या कहीं अवसान है[3]।

---

1. एतस्मान्मां कुशलिनमभिज्ञानदानाद्विदित्वा
मा कौलीनाच्चकितनयने मय्यविश्वासिनी भूः।
स्नेहानाहुः किमपि विरहे ध्वंसिनस्ते त्वभोगा
दिष्टे वस्तुन्युपचितरसाः प्रेमराशी भवन्ति। - मेघदूत-उत्तरमेघ, पृ.55
2. पल्लव - पृ.92
3. वही

महादेवी केलिए विरह मिलन से भी प्रिय है। उनके अनुसार विरह में आत्मा को अमरत्व प्रदान करने की शक्ति निहित है। इसी कारण वे मिलन का नाम तक नहीं लेना चाहतीं -

मिलन का मत नाम ले, मैं विरह में चिर हूं।[1]

मीरा की भांति विरह - व्यथा में तड़पना ही वे अपने जीवन का लक्ष्य मानती हैं। विरह की ज्वाला उन्हें इतना जीवनमयी लगती है कि वे उसके बिना जीवन को राख समझती हैं -

एक ज्वाला के बिना मैं राख का घर हूं।[2]

<u>स्वच्छन्दतावादी विरह का स्वरूप</u>

स्वच्छन्दतावादियों ने संयोग की अपेक्षा वियोग या विरह का ही अधिक चित्रण किया है। इस दृष्टि से स्वच्छन्दतावादी प्रेम - काव्य को वियोग प्रधान प्रेम-काव्य कहना अधिक समीचीन होगा। प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी आदि कवियों ने अपनी विरहानुभूति का हृदयस्पर्शी चित्रण किया है। प्राचीन हिन्दी कवियों से इस विरहवर्णन की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें उच्च कोटि की मौलिकता तथा गम्भीरता का समावेश हुआ है। स्वच्छन्दतावादियों की विरह-वेदना लौकिक या व्यक्तिगत है। कभी-कभी कवि लौकिक विरह भावना को अलौकिक बनाने का प्रयत्न भी करते हैं किन्तु मूल में वह लौकिक ही होती है। इन कवियों ने अपनी विरह भावना को कल्पना के सौन्दर्य के द्वारा जगमगाकर इतना कलात्मक बनाया है कि वह अलौकिक सी प्रतीत होने लगती है।

---

1. यामा - पृ. 218
2. वही पृ. 218

स्वच्छन्दतावादी कवियों की एक प्रमुख विशेषता यह है कि वे जलन व वेदना में भी सुख-संतोष का अनुभव करते हैं । यथा,

क. इस विकल वेदना को ले किसने सुख को ललकारा,
वह एक अबोध अकिंचन, बेसुध चैतन्य हमारा[1] ।

ख. आज मैं सब भाँति सम्पन्न हूँ, वेदना के इस मनोरम विपिन में[2] ।

"प्रसाद" ने अपने प्रेम को विरह की ज्वाला में तपा कर अत्यधिक उज्ज्वल बनाया । इस का सम्मोहक चित्रण उनकी "आँसू" में पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं । "आँसू" का प्रारम्भिक छन्द ही देखिए -

इस करुणा कलित हृदय में
क्यों विरह रागिनी बजती,
क्यों हाहाकार स्वरों में
वेदना असीम गरजती[3] ।

यहाँ कवि की तीव्र विरह-व्यथा का परिचय मिल जाता है । प्रेम का सच्चा आनन्द तो वही समझ सकता है जिसने कभी प्रेम किया है -

मादक थी मोहमयी थी, मन बहलाने की क्रीडा,
अब हृदय हिला देती है, वह मधुर प्रेम की पीडा[4] ।

---

1. प्रसाद - आँसू - पृ. 11
2. पंत - ग्रन्थि - पृ. 43
3. प्रसाद - आँसू - पृ. 7
4. वही पृ. 32

परन्तु यह पीड़ा कितनी मीठी, कितनी वांछनीय है। किन्तु अब तो विरह की दशा में कवि के समस्त स्वप्न तथा कल्पनाएं चूर-चूर हो चुकी हैं। कवि अपने को निराधार पाता है। यथा,

आकाश शून्य फैला है है शक्ति न और सहारा,
अपदार्थ तिरूँगा मैं क्या हो भी कुछ कूल किनारा।[1]

कवि अपनी विरह-वेदना के समुद्र पार करने में अपने को असमर्थ पाता है।

अपनी विरहाकुल दशा का अत्यंत मार्मिक शब्दों में कवि वर्णन करता है -

मादकता से आये तुम संज्ञा से चले गये थे,
हम व्याकुल पड़े बिलखते थे उतरे हुए नशे से।[2]

विरही कवि अपनी प्रेमिका को निमंत्रण देता है ताकि उसके जीवन में मधुर भावनाओं का कलरव हो -

वह मेरे प्रेम विहंसते जागो मेरे मधुबन में
फिर मधुर भावनाओं का कलरव हो इस जीवन में।
इस स्वप्नमयी संसृति के सच्चे जीवन तुम जागो
मंगल किरणों से रञ्जित मेरे सुन्दर तम जागो।
मंगल किरणों अभिलाषा के मानस में, सरसिज सी आँखें खोलो
मधुपों से मधु गुञ्जारो कलरव से फिर कुछ बोलो।[3]

---

1. आँसू - पृ. 41
2. वही पृ. 33
3. वही पृ. 64,65

कविवर पंत की विरह भावना भी अत्यंत मार्मिक है । यह विरह कवि के हृदय को दिव्य बनाकर उसे जड़ चेतन व्यापी कर देता है । विरह के क्षणों में प्रिया का स्मरण कवि को अत्यधिक आनन्द प्रदान करता है । यथा,

एक वीणा की मृदु झंकार, कहाँ है सुन्दरता का पार,
तुम्हें किस दर्पण में सुकुमारि दिखाऊँ मैं साकार ।
तुम्हारे छूने में था प्राण, संग में पावन गंगा स्नान,
तुम्हारी वाणी में कल्याणि, त्रिवेणी की लहरों का गान ।[1]

विरह की दशा में उदार हृदयवाला कवि प्रकृति के प्रत्येक पदार्थ में अपनी प्रिया का दर्शन करके संतुष्ट हो जाता है । विरह की पराकाष्ठा में कवि प्रकृति के पदार्थों से कहता है -

शैवलिनि, जाओ, मिलो तुम सिन्धु से,
अनिल आलिंगन करो तुम गगन को ।
चन्द्रिके, चूमो तरंगों के अधर,
उडुगणों, गाओ, पवन, वीणा बजा ।
पर, हृदय सब भाँति तू कंगाल है,
उठ, किसी निर्जन विपिन में बैठकर
अश्रुओं की बाढ़ में अपनी बिकी
भग्न भावी को डुबा दे आँख सी ।[2]

"निराला" की विरहानुभूति का अभिनव रूप "स्मरण करते" नामक गीत में भी मिलता है । यथा,

---

1. पंत - पल्लव - पृ.18
2. ग्रंथि - पृ.31

प्राण-धन को स्मरण करते
नयन झरते - नयन झरते ।
स्नेह ओत प्रोत,
सिन्धु दूर, शशि प्रभा - दृग
अश्रु ज्योत्स्ना - स्रोत ।
मेघ-माला सजल-नयना
सुहृद-उपवन पर उतरते ।
दुःख-योग, धरा
विकल होती जब दिवस-वन
क्षीण, तापकरा
गगन नयनों से शिशिर कर
प्रेयसी के अधर भरते[1] ।

फिर विरहिणी महादेवी तो विरह में मधुर भावना का अनुभव करती है । यथा,

रोम रोम में नन्दन पुलकित, साँस-साँस में जीवन शत शत,
स्वप्न स्वप्न में विश्व अपरिचित मुझ में नित बनते मिटते प्रिय,
स्वर्ग मुझे क्या, निष्क्रिय लय क्या[2] ।

इसी प्रकार निम्न लिखित पंक्तियों में भी कवयित्री की विरहानुभूति की तीव्रता स्पष्ट झलकती है । यथा,

---

1. अपरा - पृ. 72
2. यामा

मैं नीर भरी दुख की बदली ।
स्पन्दन में चिर निस्पंद बसा, क्रन्दन में आहत विश्व हंसा,
नयनों में दीपक से जलते, पलकों में निर्झरिणी मचली ।
मेरा पग पग संगीत भरा, श्वासों से स्वप्न पराग झरा,
नभ के नव रंग बुनते दुकूल, छाया में मलय बयार पली[1] ।

मिलन भावना के वर्णन के साथ ही साथ विरह की अनुभूति के वर्णन में भी मलयालम के रोमान्टिक कवियों ने अपनी दक्षता का परिचय दिया है । काव्य में मिलन की अपेक्षा विरह का अधिक महत्व है । क्योंकि विरह में आत्मा आर्द्र हो जाती है । विरह ही प्रेम की सच्ची कसौटी है ।

आशान के काव्य में विरह भावना का विशेष महत्व है । मिलनानुभूति की अपेक्षा विरहानुभूति के चित्रण में आशान ने अधिक सफलता पायी है । "लीला"के निम्नलिखित अवतरण में नायिका लीला की विरह भावना अंकित है । यथा,

प्रेमाग्नियिल वेन्दुरुकुन्नात्मा -
वन्युक, तेन्नलणञ्ञु पामकलिल;
कुम्पटकुक, येन्टेयोमने, नी -
न्नणयुक, मिन प्रिय, "लीला" ञान वन्ञु[2] ।

भावार्थ है, प्रेम की आग में मेरी आत्मा जल रही है देखो, वायु चन्दन वन से मिली है । मेरे प्रिय ! दयाकरो, मैं आपकी लीला, बहुत विकल हो गयी हूँ, कृपया शीघ्र दर्शन दो ।

---

1. यामा
2. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ॰183

विरह की अग्नि में जलनेवाली नारी का करुण क्रन्दन इन पंक्तियों में मुखरित है ।

'कण्ठाभिकुरी' से उद्धृत नीचे की पंक्तियों में प्रेम-विह्वल नारी की विरह-पीडा चित्रित है ।

अवल पिन्ने पल्यन्तिष्ठन्नायी
अवशयाय प्रत्यक्ष हेतुवेन्ये ।
x x x
नेटुवीर्प नीट्टुन्नु निर्वेदत्ताल
पिटयुम तन शय्ययिल वेलवागी ।
इटिटियेणुन्नेट्टवीलिरक्कुम
उटनेयोर् वातिल तुरन्नुनोक्कुम ।
इरविने निन्नु शपिक्कुम तन्वी
तिरियेविकटक्कयिल पोयिवीणुम ।

भावार्थ है, वह बहुत दुखी हुई, प्रत्यक्ष हेतु के बिना वह विवश हुई । रात के न बीतने के कारण वह और भी पीडित हुई और विरह से शय्या पर तडपती रही । कभी वह बैठ जाती है और कभी द्वार खोलकर बाहर देखने लगती है । वह रात को शाप देती है और महाकवि वल्लत्तोल ने भी विरह का सुन्दर चित्रण किया है । अपने प्रेमी से मिलने का अवसर न मिले तो प्रेमिका मृत्यु का वरण तक करने केलिए तैयार होती है । 'बंधी अनिरुद्ध' नामक कविता में उषा अपने प्रियतम अनिरुद्ध से मिलने की अनुमति मांगती हुई जो शब्द कहती है, वह कितने

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.232-233

मार्मिक है । देखिए -

शोकाब्धि यान्डोरुष्तनत्त जीवितत्ति-
लाकांक्षिक्कुन्नु मम बन्धु जनित्तमेंगिल,
एकाकियाय प्रियानीरवसतिदट्टिलोन्नु
पोकान, अनुवादिक्कणमिप्पोळेन्ने ।[1]

भावार्थ है, मेरे रिश्तेदार शोक-सागर में निमग्न इस उषा के जीवन की भलाई चाहते हैं तो मेरे प्रिय के निवास-स्थान तक अकेले जाने की आप मुझे अनुमति दीजिए । कोंपूषा की विरह व्यथा का चित्रण अत्यंत मर्मस्पर्शी है । विरही नामक कविता की ये पंक्तियाँ विरही के अन्तरात्मा की वेदना का सजीव चित्रण है -

एतोलोकत्तिल वेच्चेप्पोळो ञा-
नारेयो पिरिञ्ञिरुन्नु ।
मामक जीवन तेरञ्ञुकोण्डु -
मा मनोमोहिनियेविडेयाणु
आराणेन्नारोमलेन्नारिञ्ञु
ञानेन्नालिन्नुम विरहियल्ले ।[2]

भावार्थ है, किसी लोक में मैं कभी किसी से बिछुड़ गया था । मेरे जीवन की खोज करके फिरनेवाली वह मन-मोहिनी कहाँ है ? मेरी वह प्रिया कौन है, यह कोई नहीं जानता । फिर भी मैं आज विरही ही हूँ । विरही फिर कहता है -

---

1. वल्लत्तोलिन्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ.189
2. कोंपूषाकृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.27

विरही फिर कहता है -

एकसीतशीतलासराग -
मुत्तमे, निर्म्मैतिलश्रुपोय, ञान,
रात्रिले तोट्टु ञानन्वियोक्म
पूवन्म तोक्कमश्रुपोयि ।
x x x
आरोमले, हा नीयेङ्ङुपो,येन -[1]
तीरा विरहमितेन्नु तीरुम ?

भावार्थ है, हे प्रिये, तीव्र राग के साथ मैं ने कहाँ-कहाँ तेरा अन्वेषण किया । सवेरे से साँझ तक सारी फुलवारियों में भटकता रहा । हे भामिनी तू कहाँ चली गयी, मेरा यह दीर्घ विरह कब दूर होगा ?

विरह से पीड़ित आत्मा का इतना मार्मिक उद्गार अन्यत्र मिलना कठिन है । 'प्रतीक्षा' नामक कविता में अपनी प्रिया के विरह में पीड़ित व्यक्ति की दशा देखिए -

करिमुकिलमालमूटिय वानि, तेन -
कनक तारयेकाणातिरिक्कुन्नु ञान ।
प्रणयगानम मरन्न मुरलियेन -
मटियिलव्यो किटक्कुन्नु मूकमाय ।
अणिञ्ञानित्त पोन्निङ्ङु पोन्निङ्ङा तेन -[2]
मणि निलविळक्के स्वर्ण दीपांगुरम ।

---

1. चंगम्पुषा कृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.27
2. वही पृ.59

भावार्थ है, कानी घटा छायी गगन में, मैं अपने कनक तारे की प्रतीक्षा कर रहा हूँ । प्रणय गीत का विस्मरण करके यह मुरली मेरी गोद में झुक पड़ी है । क्षणिक कान्ति फैला कर मेरे मणि दीप की स्वर्ण दीप शिखा बुझ गयी है ।

विरह की तीव्रता का यह शिशु चित्रण भी कितना हृदयस्पर्शी है -

अरले, कण्टमेन्निरिकिल काणातेन -
हृदयम नोन्दु ञान करयुन्नु ।
ओर क्षणाविले क्षणिक सल्लाप -
स्मरणमात्रमवशिष्टमियेन्निल -
परिधियिल्लात्त परमशून्यता -
यिकटविमुत्तोरो चुषिकिल,
इन्नुम ञानुमाय तट्टियन्योन्य -
मिनियुमेन्नाल कषियुमो १

भावार्थ है, उसे अपने पास देखे बिना हृदय-व्यथा से मैं रो रहा हूँ । अब एक क्षणिक सल्लाप की स्मृति मात्र शेष रह गयी है । इसी सीमा हीन परम शून्यता के भँवर में पड कर अब कितनी लम्बी अवधि दूरी करनी है ?

निष्कर्ष

स्त्री-पुरुष प्रेम के चित्रण करने में हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवि अत्यधिक सफल हुए हैं । प्रेम की संयोग तथा वियोग दोनों दशाओं का इन कवियों ने अत्यंत मर्मस्पर्शी प्रतिपादन किया है । मिलन की सुखानुभूति एवं विरह की मर्म-व्यथा का जितना यथार्थ और मनोमुग्धकारी चित्रण इनकी तूलिका से अभिव्यक्त हुआ, ऐसा अन्यत्र मिलना कठिन है । वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी कवियों की यह मनोरम प्रेमानुभूति उनकी महान उपलब्धि है । स्त्री-पुरुष प्रेम के चित्रण में दोनों भाषाओं के कवियों ने समान सफलता प्राप्त की है ।

---

1. दीपावलिकम - द्वितीय भाग - पृ.84

2. प्रकृति-प्रेम

मानव और प्रकृति में घनिष्ठ संबन्ध है । सर्वप्रथम जब मानवता की आँखें खुलीं अथवा मानव ने जब अस्तित्व ग्रहण किया तो उसने अपने सामने प्रकृति की रमणीयता देखी । उस से वह आकृष्ट हुआ, मुग्ध हुआ । उसने प्रकृति के सहारे जीना सीखा । प्रकृति का वर्णन कविता में पुरातन काल से ही द्रष्टव्य है । कवि प्रकृति को पास से देखता है । उसका सौन्दर्य उसे एकदम मुग्ध करता है । वह इस मनोहारिता का वर्णन किये बिना नहीं रह सकता । वह प्रकृति से प्रेरणा भी ग्रहण करता है । अनंत के सम्मिलन की आकांक्षा और अंतिम संयोग के पहले कवि को प्रकृति के गूढ रहस्यों का अन्वेषण करना पड़ता है । उसे पहले प्रकृति का मर्म जानना पड़ता है और प्रकृति का ज्ञान आत्मा के ज्ञान के पहले होना चाहिए ।[1] व्यक्ति अपने जीवन में प्रकृति से घिरा रहने के कारण उससे अलग रह कर सोच ही नहीं सकता । उसके विचारों तथा उद्गारों पर प्रकृति का प्रभाव वांछनीय है ।

प्रकृति की ओर तीव्र आकर्षण स्वच्छन्दतावाद की एक मुख्य विशेषता है । सभी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रकृति के विविध रूपों, भावों, उपादानों, उपकरणों पर सुन्दर कविताएं लिखी हैं । प्रकृति का एक तुच्छ पुष्प तक कवियों केलिए आकर्षण एवं प्रेरणा का विषय रहा है ।[2] प्रकृति-प्रेम का रूप स्वच्छंद युग की कविताओं में विशिष्ट महत्व रखता है । लगभग सभी कवियों के काव्य में किसी न किसी रूप में प्रकृति-सुषमा के प्रति प्रेम अथवा प्रकृति रूपों से आकर्षण उभरा हुआ दिखलाई पड़ता है । किसी न किसी रूप में प्रकृति इस युग में इतनी

---

1. डा॰ रामकुमार वर्मा - अंजलि की भूमिका - पृ॰ 17
2. To me the meanest flower that blows can give
Thoughts that do often lie too deep for tears.
- Wordsworth - Immortality Ode.

प्रमुख हो उठी है कि बहुत से विज्ञ आलोचकों का यह विश्वास हो गया कि प्रकृति-प्रेम ही स्वच्छन्द-युगीन काव्य का मुख्य विभेदक लक्षण है[1]। वेडस्वर्थ-शैली आदि अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावादी कवियों की भांति हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने भी प्रकृति को अपनी कविताओं में विशेष महत्त्व प्रदान किया। उन्होंने प्रकृति को एक नयी दृष्टि से देखने का प्रयत्न किया। हिन्दी साहित्य की स्वच्छन्दवादी विचार धारा ने जिस प्रकार साहित्य की अनेक रूढ़ियों पर प्रहार किया उसी प्रकार उसने प्रकृति को भी शास्त्रीय शृंखलाओं से मुक्त किया[2]। वस्तुत: स्वच्छंदतावादियों ने ही काव्य में प्रकृति को इतना महत्त्व प्रदान किया। प्रकृति को देखने की दृष्टि में जो महान परिवर्तन स्वच्छन्दतावादी दृष्टिकोण ने उपस्थित किया उसके द्वारा ही हम यह जान सके कि प्रकृति का काव्य केलिए अपना अलग अस्तित्व है तथा वह स्वतंत्र रूप से भी काव्य की विषय-वस्तु बन सकती है[3]। हिन्दी की स्वच्छन्दतावादी कविताओं में प्रकृति के विपुल एवं सुन्दर चित्र मिलते हैं। यह तो स्पष्ट है कि संस्कृत, अंग्रेज़ी आदि समृद्ध साहित्यों की तुलना में प्रकृति-प्रेम की दृष्टि से हिन्दी कविता कदाचित् उतनी प्राण प्रवेगमय नहीं[4]। किन्तु स्वच्छन्दतावादी कविता एक हद तक इस कमी को पूर्ण कर सकी।

हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों में "प्रसाद" में हम प्रकृति के प्रति तीव्र अनुराग देखते हैं। उनमें हम प्रकृति - चेतना का चरमोत्कर्ष देखते हैं। वस्तुत: "प्रसाद" केलिए "प्रकृति विश्वात्मा की छाया या प्रतिबिंब है"[5]।

---

1. डा॰ त्रिभुवन सिंह - आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्दधारा-पृ॰106
2. वही
3. वही
4. डॉ॰ देवराज : छायावाद का पतन - पृ॰ 121
5. प्रसाद - काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध पृ॰189

"प्रसाद"ने इन्द्रियों के धरातल पर प्रकृति के सभी मृदु-परुष प्रभावों या संवेदनाओं का सहज ग्रहण कर उसके पुलक-रोमांच का मानवीय स्वर में व क्रांतदर्शी या रहस्यवादी की दृष्टि से गान किया । उन्होंने प्रकृति को उसकी परम्परागत जड़ता से मुक्त कर एक स्वतंत्र व मांसल व्यक्तित्व प्रदान किया, एक धड़कता मानवी हृदय दिया और उसके साथ विविध मानवीय-संबन्धों की स्थापना की।[1] वस्तुत: सृष्टि का रहस्य ही उसने जाना है जिसने प्रकृति से प्रेम किया है"[2] । "प्रसाद"का प्रकृति-प्रेम ही निम्नलिखित उद्‌गार के लिए प्रेरणा प्रदान करता है -

ले चल मुझे भुलावा देकर मेरे नाविक धीरे धीरे ।
जिस निर्जन में सागर लहरी, अम्बर के कानों में गहरी,
निश्छल प्रेम कथा कहती हो, तज कोलाहल की अवनी रे[3] ।

प्रकृति के प्रति कवि का मूल आकर्षण ही यहाँ अभिव्यक्त होता है । वस्तुत: हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रकृति के प्रति जो प्रेम प्रकट किया है ऐसा शुद्ध, स्वतंत्र व गम्भीर प्रेम हिन्दी काव्य में इसके पहले कभी देखने को नहीं मिला । "प्रसाद"की निम्न लिखित पंक्तियाँ भी कवि के प्रकृति-प्रेम को सूचित करती हैं -

उषा सुनहले तीर बरसाती, जय लक्ष्मी सी उदित हुई,
उधर पराजित काल रात्रि भी जल में अंतर्निहित हुई ।
वह विवर्णमुख त्रस्त प्रकृति का, आज लगा हँसने फिर से,
वर्षा बीती हुआ सृष्टि में शरद विकास नये सिर से ।

---

1. डॉ॰ रामेश्वरलाल खण्डेलवाल : जयशंकर प्रसाद-वस्तु और कला पृ॰278-79

2. ... he who, falling in love with nature, sees the landscape 'touched with light divine'... all these (lover of a woman lover of nature, lover of the Holy) have truly known for an instant something of the secret of the world'.
   - Evelyn underhill - 'Mysticism' - p.73

3. प्रसाद - "लहर" - पृ॰14

नव कोमल आलोक बिखरता हिम-संसृति पर भर अनुराग,
सित सरोज पर क्रीडा करता जैसे मधुमय पिंग पराग ।[1]

"प्रसाद" में ही प्रकृति के कोमल और कठोर रूपों पर अनुराग का प्रथम स्फुरण लक्षित हुआ । "प्रकृति के प्रति" प्रसाद"की परिष्कृत मानवीय या रोमान्टिक दृष्टि उन्हें कालिदास व अंग्रेज़ कवियों के निकट लाती है, प्रकृति के माध्यम से रहस्य अध्यात्म साधना की अभिव्यक्ति में वे जायसी, रवीन्द्र, शैली व ब्राउनिंग के, शुद्ध सौन्दर्य-चेतना की अभिव्यक्ति में वे कीट्स के, पावन व प्रचण्ड प्रकृति के प्रेम में वे भवभूति व बायरन के तथा सांस्कृतिक व्याख्या में वे वर्डसवर्थ के निकट हैं"[2] । कविवर पंत में भी प्रकृति-प्रेम के चारु चित्र मिलते हैं । पंत तो मानव से भी अधिक प्रकृति से प्रेम करने-से लगते हैं । यथा,

छोड द्रुमों की मृदु छाया, तोड प्रकृति से भी माया,
बाले तेरे बाल जाल में कैसे उलझा दूं लोचन,
भूल अभी से इस जग को ।
तजकर तरल तरंगों को इन्द्रधनुष के रंगों को,
तेरे भ्रू भंगों से कैसे बिंधवा दूं निज मृग सा मन ।
भूल अभी से इस जग को ।[3]

प्रकृति के प्रति तीव्र अनुराग के कारण कवि को प्रकृति की छोटी-बडी सभी वस्तुएं अत्यंत सुन्दर प्रतीत होती हैं ।

---

1. कामायनी - दर्शन सर्ग
2. डॉ॰ रामेश्वरलाल खण्डेलवाल - जयशंकर प्रसाद : वस्तु और कला,पृ॰179
3. पल्लव - पृ॰3।

यथा,

> सुन्दर मधुऋतु, सुंदर है गुंजित दिगंत का हरित प्रसार,
> ताम्र, रजत, मरकत, विद्रुम के विविध किसलयों का मृदु भार,
> सुन्दर सलिल समीर आज, सुन्दर लगता नभ का विस्तार,
> सुन्दर निश्चल धरित्री, सुन्दर खग-मृग युग्मों का अभिसार ![1]

हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों में सुमित्रानन्दन पंत विशेष प्रकृति - प्रेमी दृष्टिगत होते हैं । "वीणा"-"पल्लव"काल में पन्त जी प्रधानतः प्रकृति-प्रेमी कवि रहे हैं । प्रकृति उनकेलिए कहीं आलम्बन बन कर आयी है, कहीं उद्दीपन और कहीं कान्ता-सम्मित उपदेश का माध्यम । इसलिए पन्त के प्रकृति-काव्य में कहीं आत्म-प्रक्षेपण मिलता है कहीं रंगोज्वल चित्र-विधान और कहीं मानवीकरण । शायद मानवीकरण के मूल में दृश्य जगत् के भीतर कवि की आत्म प्रसार की कामना छिपी रहती है, जिसकी अधिकता काव्य में एक प्रकार के "पैन्थिइस्टिक नेचरलिज्म" की सृष्टि करती है[2] ।

कविवर "निराला" तो प्रकृति की वस्तुओं से ही नहीं, प्रत्येक ऋतु से भी प्रेम करने से लगते हैं, उनकी गीतिका में ऋतु-चित्रों का आधिक्य हैं । वर्षा और वसंत कवि केलिए अत्यंत प्रिय हैं । आधुनिक हिन्दी काव्य में "निराला" ने सर्वाधिक मात्रा में ऋतु गीतों की रचना की है । ये गीत "निराला" के प्रकृति-निरीक्षण और उसके प्रति उनकी रागात्मकता को व्यंजित करते हैं[3] । संध्या सुन्दरी नामक कविता की निम्न लिखित पंक्तियों से प्रकृति के प्रति कवि का तीव्र अनुराग व्यक्त होता है -

---

1. पंत - गन्धवीथी - पृ.153
2. डा. कुमार विमल - गन्धवीथी की भूमिका - पृ.31
3. डा. प्रेमशंकर - हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य - पृ.240

दिवसावसान का समय
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह सन्ध्या - सुन्दरी परी-सी
धीरे धीरे धीरे ।

"वसन्त आया" नामक कविता की इन पंक्तियों से भी कवि का प्रकृति प्रेम प्रकट होता है -

सखि, वसन्त आया ।
भरा हर्ष वन के मन,
नवोत्कर्ष छाया ।
किसलय-वसना नव-वय-लतिका
मिली मधुर प्रिय उर तरु पतिका,
मधुप वृन्द बन्दी -
पिक-स्वर नभ सरसाया ।
लता मुकुल हार गन्ध-भार भर
बही पवन बन्द मन्द मन्दतर,
जागी नयनों में वन -
यौवन की माया ।[2]

प्रकृति की प्रत्येक वस्तु के प्रति कवि के हृदय में प्रेम की भावना विद्यमान है । इस प्रसंग में "अर्चना" नामक कविता की निम्नलिखित पंक्तियां भी उल्लेखनीय हैं -

---

1. अपरा - पृ.22
2. वही पृ.25

आज प्रथम गाई पिक पंचम ।
गूँजा है मरु विपिन मनोरम ।
मरुत-प्रवाह कुसुम-तरु फूले,
बौर - बौर पर भौरे झूले,
पात-गात के प्रमुदित झूले,
छाई सुरभि चतुर्दिक उत्तम[1] ।

इसी प्रकार अन्य अनेक कविताओं में भी कवि का प्रकृति प्रेम द्रष्टव्य है । मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने भी प्रकृति के प्रति अगाध प्रेम का परिचय दिया है । प्रकृति के छोटे-बड़े सभी पदार्थों के प्रति इन कवियों के हृदय में अपार ममता द्रष्टव्य है । प्रकृति के गायक आशान का निम्नलिखित प्रकृति-वर्णन भी कवि के प्रकृति-प्रेम का परिचायक है -

एल्लाटवुम पुष्पगन्धंवरित्त
मेल्लेन्नु तेक्कुन्नु वीशुन्नु वायु,
उल्लासमीनीण्ट कूकूरवत्ता -
लेल्लार्क्कुमेकुन्निते कोकिलङ्ङल[2] ।

भावार्थ है, सब जगह पुष्प का सुगन्ध फैलाकर दक्षिण दिशा से वायु बह रही है । कोयल अपने दीर्घ कुहू कुहू शब्दों से सब को उल्लास प्रदान करता है ।

निम्नलिखित पंक्तियों में भी कवि का प्रकृति प्रेम झलकता है -

पाटङ्ङल पोन्निननिरम पूण्टु नीले -
प्पारिप्परन्नीत्तियित्तत्तयेल्लाम
केट्टुटनेल्लिनकतिरकापु कोत्ति -
क्कूटार्न्न दिक्कोर्त्तु पोकुन्नु वानिल[3] ।

---

1. अपरा - पृ. 184 2. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल-द्वितीय भाग-पृ. 100
3. वही

पाटङ्ङल पोन्निननिरम पूण्टु नीले -
प्पारिप्परन्नेित्तियित्ततयेल्लाम
केटट्ट निल्लिनकतिरकापु कोत्ति -
क्कूटान्नं दिक्कोर्त्तु पोकुन्नु वानिल ।

अर्थात् खेतों में सुवर्ण रंग के फैल जाने पर ये सारे तोते गीत गाते हुए उस पर आ पहुंचे । वे धान को चुगते हुए अपने नीडों की दिशा में आकाश में उड रहे हैं ।

और

उल्लोलमामकवि दूरे मुष्ड्ङ्ङदुन्नु,
फुल्लोलसत्सुमाणम मणमेकिटुन्नु
कल्लोलमान्नीक्कयङ्ङलिल निन्नु पांङ्ङि
नल्लोक्वार कुलिरकादटुमणञ्ञदुन्नु ।[2]

भावार्थ है तरंग संकुल सरिता दूर पर गूंजती है । प्रफुल्ल प्रसूनों से महक फैल रही है । चंचल लहरों से भरे सरोवर से शीतल पवन आ रहा है।

प्रकृति के उपर्युक्त सौन्दर्य - चित्रणों में कवि का प्रकृति प्रेम ही दृष्टि-गोचर होता है ।

महाकवि वल्लत्तोल प्रकृति से इतना प्रेम रखते हैं कि प्रकृति के दर्शन मात्र से कवि के मन की व्यथा और क्लेश दूर हो जाते हैं । यथा,

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - पृ. 100 [द्वितीय भाग]
2. वही पृ. 111

प्रपंजमे नी पलद्:खजालम
निर नार्णेगलुमिश्रमावहु
चेतोहरक्काष्ककल निगलुल्ल -
कालत्तु निन्नु पेरिलेवन वेरुक्कुम ?[1]

भावार्थ है, हे संसार, तू अनेक प्रकार के दुखों से भरा - पूरा होने पर भी तुझ में इतने मनोहर दृश्यों के रहते वक्त तक तुझ से कौन घृणा करेगा ?

प्रकृति के प्रति कवि की आत्मीयता ही इस उद्गार केलिए उन्हें प्रेरणा दी है, इसमें कोई संदेह नहीं ।

महाकवि उल्लूर की कविताओं में भी प्रकृति-प्रेम का मनोरम उदाहरण मिलते हैं । प्रकृति की मनोहारिता का आस्वादन करके उसे अपनी कविताओं में जगह देने में कवि अत्यंत तत्पर हैं । प्रकृति में सुषमापूर्ण दीखने वाली सभी वस्तुओं से तादात्म्य प्राप्त करने केलिए कवि - हृदय अधीर होता है । प्रकृति के जड और चेतन सभी पदार्थों से कवि - हृदय में गहरी अनुभूति विद्यमान है । उपवन कानन, झाडियाँ, झरली-झरना, पेडे-पौधे, कलकूजन करनेवाली चिडियाँ, चौकडी भरनेवाले जानवर इत्यादि प्रकृति की चराचर समस्त वस्तुओं को दुलारने-पुचकारनेवाला वह बालक कवि-हृदय में ही वास करता है । उसकी अभिलाषायें देखिए -

पारिप्परिन्नदुम्नु पैगिनियेक्कट -
न्नोटिप्पिटिच्चु आनुम्मक्यक्कुम,

---

1. वल्लत्तोलिन्टे पद्यकृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.51

मामरच्चोलयिलच्चाटिक्कलिक्कुम्न
मानिम्नु पच्चप्पुल सलक्करिक्कुम,
पीलिविरिच्चु निन्माटित्तकर्कुम्न
मेलिन्नणियुवान माल नलकुम,
वेल्लप्पळुंगोमित्तण्णीरलयिल -
त्तुल्लिप्पोटिच्चु तुटिच्चु नीन्दुम,
पूंगुलक्कोम्पुकल पूणुम मरङ्ङलतन
तेन किनिञ्ञीटुम पझंगल तिन्नुम,
पारमेलच्चारिक्किटन्नुकोण्डोरो
कारिननिरयुमाय सल्लपिक्कुम.... ।

भावार्थ है, गीत गा कर उडनेवाले पक्षी को पकड़कर मैं उसका चुंबन करूँगा, वृक्षों के नीचे चौकड़ी भरनेवाले हिरण को हरा घास देकर सत्कार करूँगा । पर फैलाकर नाचनेवाले मोर को पहनने केलिए माला दूँगा । स्फटिक के समान पानी भरे जलाशय में गोता लगाऊँगा । फूले वृक्षों में भरे हुए मधुपूर्ण फल खाऊँगा । चट्टान पर पीठ रखते हुए बादलों से सल्लाप करूँगा ।

यहाँ बालक के मुँह से स्वयं कवि ही बोल रहे हैं जिस से उसका प्रकृति-प्रेम स्पष्ट प्रकट होता है ।

चंगंपुषा की कविताओं में भी प्रकृति के प्रति कवि का अदम्य अनुराग परिलक्षित होता है । प्रकृति के प्रत्येक पदार्थ के प्रति कवि का आकर्षण कितना तीव्र है । यथा,

---

1. उल्लूरिन्टे पद्यकृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.25।

पच्चक्काटुपुतच्चोरी मलकलुम
पाटुन्न पूंचोलयुम
स्वच्छन्दम कलधार पेयूतु मसुखम
वाभुम विहगाङङलुम,
अच्छश्री कलरुन्न पोयुककलुम
आ पेरालुम आल्माविने -
न्दच्छिन्मोल्लदायकङङल !
अवयेल्लैहिच्चु ञानोमले ।

भावार्थ है, हरे कानन से ढंके हुए ये टीले, गाते हुए पेड-पौधे, स्वच्छंद कलकूजन करके सुखपूर्वक रहनेवाले विहग, मनोहर, कान्तिपूर्ण सरोवर, वह वटवृक्ष ये सब हृदय में आनंद भरनेवाले हैं ।
हे लाडली, मैं उन सब से प्रेम करता हूँ ।

यहाँ प्रकृति के प्रति कवि का अनुराग सराहनीय है ।
इसी प्रकार "वसन्तोत्सव" नामक कविता की निम्नलिखित पंक्तियों में भी कवि का प्रकृति-प्रेम कितना तीव्र है । यथा,

मोदिट्टदु मुल्लकल, पूत्तुकटम्बुकल
मट्टुमरंगलुम पूवणिञ्ञु ।
पुष्पंगल, पुष्पंगल पुंजिरिक्कोल्लुन्न
पुष्पङङलाणीनोक्कियालुम ।
पच्चयुम मञ्ञयुम चोप्पुमिटकलर-
न्निच्छन्न कान्ति तन कन्दलिक्कल
तम्मिल तल्लुकितल्लुकित्तलम्बुल -
ञ्ञोम्मदट्टुलावुन्निती वनत्तिल !

---

1. चंगपुष़्ष़कृतिकल - प्रथम भाग - पृ॰282

निस्तुल पुष्पसमृद्धिनीनोक्कुकी -
न्नेत्र मनोहरमीवसन्दम् ।

भावार्थ है, वृक्ष-लताओं में फूल खिलने लगे । जहाँ भी देखो, मुस्कुरानेवाले फूल ही दिखाई पड़ते हैं । हरे, पीले और लाल वर्णों से पूर्ण ये फूल अत्यंत मनोहर हैं । तू इस पुष्प की समृद्धि की ओर दृष्टि डाल, यह वसंत कितना मनोहर है ।

ऋतुराज वसंत की मनोहारिता के इस अभिराम चित्रांकन में भी कवि का प्रकृति प्रेम ही झलकता है । "जी" में भी प्रकृति के प्रति तीव्र प्रेम विद्यमान है । प्रकृति के प्रति कवि के हृदय में जो आत्मीयता है उसके कारण प्रकृति के प्रति एक विचित्र सौहार्द का अनुभव करने में वे समर्थ हुए । वास्तव में इस आत्मीयता ने ही उनकी कविताओं को जन्म दिया । वे स्वयं कहते हैं -"यह आत्मीयता का भाव ही मेरे अकिंचन तथा अपूर्ण कविता का उद्गम है"।[2] प्रकृति की अनेक सुन्दर वस्तुओं ने जैसे पुष्प, वसंत, सांध्यतारा, कोयल, जुही, प्रभात समीर, सूरजमुखी, भ्रमर, कमल, चन्द्र, नक्षत्र, समुद्र आदि कवि की कल्पना को प्रेरणा प्रदान की है । प्रकृति की इन वस्तुओं के प्रति कवि का अनुराग अत्यंत तीव्र है । "विलम्बरम" [घोषणा] नामक कविता में वसंत की मादकता प्रकट की गयी है । रंग-बिरंगी पुष्पों पर उड़नेवाली तितलियों के साथ वसंत आ रहा है -

आज तो उत्सव की बेला है ।
पधारे हैं

---

1. जीपिंयु कृतिकल - प्रथम भाग - पृ॰617
2. ओटक्कुषल [अनुवाद] मेरी कविता - पृ॰9

पराक्रमीवसंत
ऋतुओं के सम्राट ।
देखो न,
रंग - बिरंगी साड़ियाँ फहराती हुई तितलियाँ
उन्मत्त होकर मंडरा रही हैं[1]।

यहाँ कवि का प्रकृति-प्रेम झलकता है । प्रकृति के प्रति "जी" का आकर्षण केवल उसके सौन्दर्य-दर्शन तक सीमित नहीं है । इस समस्त सौन्दर्य के पीछे वे एक अज्ञेय-असीम चैतन्य का भी दर्शन करते हैं । अतः प्रकृति उनके लिए एक प्रकार की उपासना का पात्र बन जाता है । इस प्रसंग में मलयालम के प्रसिद्ध आलोचक प्रो॰ गुप्तन नायर के ये शब्द स्मरणीय है - "उन में जो हम देखते हैं वह केवल प्रकृति-प्रेम नहीं प्रकृति-उपासना है"[2]। यह प्रकृति-उपासना कवि को एक अवाच्य आनन्द की अनुभूति प्रदान करती है ।

"जी" की कविता में जो भी परिवर्तन ही क्यों न हुए हों, प्रकृति-सुषमा के प्रति अदम्य प्यास उसका एक मुख्य स्वभाव रह जाता है[3]। प्रकृति के पदार्थों में भी सन्ध्या के प्रति "जी" का विशेष अनुराग है । सांध्या-प्रकृति पर स्मरण करते वक्त उनकी कल्पना चरमोत्कर्ष को प्राप्त करती है । नक्षत्र-गीतम्, सागर गीतम, पङ्कजगीतम, पुष्पगीतम्, मेघगीतम्, सूर्यकान्ति आदि कविताओं में प्रकृति के प्रत्येक पदार्थ पर कवि का अदम्य प्रेम प्रकट होता है । पुष्प, बादल आदि "जी" के लिए केवल जड़पदार्थ नहीं । कवि उनमें चेतना का दर्शन करते हैं । इस प्रकार हम देखते हैं कि "जी" का प्रकृति प्रेम सहज है जो उनके काव्य की एक मुख्य विशेषता बन गयी है ।

---

1. ओटक्कुषल अनुवाद - पृ॰113
2. ओटक्कुषल की भूमिका - पृ॰6
3. गोविन्दनकुट्टि नायर - "जी" युटे काव्य साधना - पृ॰46-47

निष्कर्ष

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दवादी कवियों ने प्रकृति के प्रति तीव्र प्रेम का परिचयदिया है । प्रकृति की समस्त चराचर वस्तुओं के प्रति इन कवियों ने जो अदम्य अनुराग प्रकट किया वह वस्तुत: इन के काव्य की एक प्रमुख विशेषता बन गयी है । दोनों भाषाओं के कवियों ने प्रकृति से इतनी आत्मीयता स्थापित की कि प्रकृति में होनेवाला प्रत्येक स्पन्दन इन कवियों केलिए उदात्त एवं गरिमामय काव्य निर्माण में प्रेरणा प्रदान कर सका । यही कारण है कि प्रकृति इन के काव्य का प्रमुख प्रेरणास्रोत रही है । प्रकृति-प्रेम की दृष्टि से दोनों भाषाओं के कवियों ने समान उत्कर्ष का परिचय दिया है ।

3. देश-प्रेम

हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों में देश-प्रेम की भावना भी अच्छी मात्रा में उपलब्ध होती है । ऐसे कवियों में प्रसाद, पंत और निराला का प्रमुख स्थान है । इस प्रसंग में प्रसाद के नाटक के "अरुण यह मधुमय देश हमारा" जैसे गीत स्मरणीय हैं । इस में देश-प्रेम की मधुर भावना का दर्शन होता है । यथा,

अरुण यह मधुमय देश हमारा ।
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा । अरुण.
सरस तामरस गर्भविभा पर नाच रही तरुशिखा मनोहर ।
छिटका जीवन हरियाली पर, मंगल कुंकुम सारा । अरुण.
लघु सुरधनु से पंख पसारे, शीतल मलयसमीर सहारे
उड़ते खग जिस ओर मुँह किए समझ नीड़ निज प्यारा । अरुण.
हेम कुम्भ ले उषा सवेरे भरती ढुलकाती सुख मेरे
मदिर ऊँघते जब रहते जब कर रजनी भर तारा । अरुण.

स्वच्छन्दतावादी कवियों में आदर्शवादी तथा यथार्थवादी दोनों प्रकार के देश-प्रेम देखने को मिलते हैं । भारत के सांस्कृतिक गौरव तथा प्राकृतिक सौन्दर्य से मुग्ध होकर "प्रसाद" ने जो देश-प्रेम के गीत लिखे हैं, वे अत्यंत आदर्शपूर्ण हैं । प्रसाद की "शेरसिंह का शस्त्र समर्पण", "हिमालय के आँगन में उसे प्रथम किरणों का दे उपहार" आदि कविताएँ भी देश-प्रेम की भावना से ओत-प्रोत हैं ।

---

1. प्रसाद - चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य द्वितीय अंक

देश-प्रेम संबन्धी कविताओं में पंत की "भारत माता ग्राम वासिनी" नामक कविता अत्यंत मर्मस्पर्शी है । इस में भारत की माता के रूप में कवि ने जो यथार्थवादी कल्पना की है, वह एकदम मनोरम है । भारत के गांवों की दुर्दशा दिखाने के उद्देश्य से कवि "भारत-माता" का करुण चित्र प्रस्तुत कर रहे हैं -

भारत माता ग्राम वासिनी ।
खेतों में फैला है श्यामल धूल भरा मैला सा आंचल,
गंगा यमुना में आंसू जल मिट्टी की प्रतिमा उदासिनी ।
दैन्य जड़ित अपलक नत चितवन, अधरों में चिर नीरव रोदन,
युग-युग में तम से विषण्ण मन, वह अपने घर में प्रवासिनी ।
तीस कोटि संतान नग्न तन, अर्ध क्षुधित, शोषित निरस्त्रजन,
मूढ, असभ्य, अशिक्षित, निर्धन, नत मस्तक तरुतल निवासिनी ।[1]

यहाँ भारत की दशा का यथार्थ एवं सुन्दर चित्रण मिलता है । "निराला" की "भारती वन्दना" नामक कविता में देश-प्रेम का भव्य रूप मिलता है । यथा,

भारति, जय विजय करे
कनक शस्य कमलधरे ।
लंका पदतल - शतदल,
गर्जितोर्मि सागर - जल
धोता शुचि चरण - युगल
स्तव कर बहु - अर्थ भरे ।[2]

---

1. पंत - ग्राम्या
2. अपरा - पृ. 1 ।

यहाँ सांस्कृतिक गरिमा से युक्त कवि का देश-प्रेम स्पष्ट झलकता है । "छत्रपति शिवाजी के प्रति पत्र" "जागो फिर एक बार" आदि कविताओं में भी कवि का देश-प्रेम स्पष्ट परिलक्षित होता है ।

स्वच्छन्दतावादी कवियों के देश-प्रेम की भावना की विशेषता यह है कि वह अत्यंत उदात्त है । द्विवेदी युग में यह भावना सीमित व संकुचित थी । उसमें उदात्त गरिमा का अभाव दीखता है । व्यापक सांस्कृतिकता से संयुक्त होने के कारण स्वच्छन्दतावादियों की राष्ट्रीयता अधिक महत्त्वपूर्ण है ।

प्राचीन गौरव के गान के रूप में भी कवि देश-प्रेम व्यक्त करते हैं । अंग्रेजी कवि वेड्स्वर्थ की "वेनिशियन गणतंत्र की समाप्ति पर" नामक कविता इसका उदाहरण है । कवि इस में अत्यंत आवेश के साथ वेनिस के गत-गौरव का वर्णन करते हैं[1] । थॉमसन भी अपनी एक कविता में ब्रिटेन की महिमा का वर्णन करते हैं[2] । "प्रसाद" का "महाराणा प्रताप" भी इसी प्रकार की कविता है । इस दृष्टि से "निराला" की "यमुना के प्रति" कविता भी उल्लेखनीय है ।

---

1 1. On the Extinction of The Venetian Republic

Once did She hold the gorgeous East in fee,
And was the safe guard of the west; the worth
Of Venice did not fall below her birth;
Venice, the eldest child of liberty.
She was a maiden city, bright and free;
No guile seduced, no force could violate;
And when She took unto herself a mate;

(Cond...)

She must espouse the everlasting sea.
And what if she had seen those glories fade,
Those titles vanish, and that strength decay,
Yet shall some tribute of regret be paid
When her long life hath reached its final day:
Men are we, and must grieve when even the shade
Of that which once was great is pass'd away

- Wordsworth - Golden Treasury of English Verse
p.314

2. Rule, Britannia
......

When Britain first at Heaven's command
Arose from out the azure main,
This was the charter of the land,
And guardian angels sung this strain:
Rule, Britannia ! rule the waves !
Britons never will be slaves.

- Thomson

- Golden Treasury of English Verse, p.448

मलयालम के रोमान्टिक कवियों ने भी देश-प्रेम संबन्धी काव्य लिखे हैं। उनमें वल्लत्तोल और "जी" अधिक लोक प्रिय हुए हैं। कुमारन आशान ने देश-प्रेम पर अधिक नहीं लिखा। आशान के समय में केरल की राजनैतिक चेतना उतनी सजीव नहीं थी, जितनी उत्तर भारत की। आशान ने समाज-सुधार की ओर अधिक ध्यान दिया। केरल में उस समय की मांग भी वही थी। आशान का विश्वास था कि जाति - भेद, छुआछूत आदि बुराइयों को दूर किये बिना सामाजिक उन्नति नहीं हो सकेगी। स्वतंत्रता-प्राप्ति केलिए भी इन अनाचारों को दूर करना आवश्यक था। यही कारण है कि उनकी सभी रचनाओं में देश-प्रेम के उद्‌गारों की अपेक्षा सामाजिक क्रांति का स्वर अधिक मुखरित हुआ है। फिर भी उनकी कविताओं में यत्र-तत्र भारत के सौन्दर्य और उसकी श्रेष्ठता के गीत देखने को मिलते हैं। उनकी "भारत मयूरम" शीर्षक कविता की ये पंक्तियाँ देखिए -

पच्चप्पुल कान्ति चितकम मरतकम्
नीलम् चेम्पत्मरागम्
स्वच्छमाँ तु वैरम् सागर मौक्तिकम्
सौवर्ण गोमेदकम्
इच्चोन्न रत्नंडल पेट्टेषु मिन्नुयये -
न्नम्मयेन्नो मयिले -
पुच्चित्तल पाटियुदञ्जित कौतुकम्
ताण्डवम् चेय्युन्नु नी -
धन्यमयूरमे निन्मिल तेलियिच्चु
नित्यस्वराज्यमालुम्
अन्पुल भीयम्म भारत भूमिता -
नानन्दवासभूमि।[1]

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - दूसरा भाग - पृ. 350

आशय यह है कि हे मयूर, तू क्या यह गाता हुआ नाचता है कि भारत माता ही मेरी जननी है, जो मरकत, पद्मराग, हीरा, मोती, गोमेदक आदि मूल्यवान रत्न प्रदान करती है । मयूर, तू धन्य है, तेरी माता ने तुझ में अपने सौन्दर्य की झलक दिखायी है । अनुपम ऐश्वर्यमयी भारत भूमि ही आनंद की क्रीडास्थली है । यहाँ आशान भारत के ऐश्वर्य एवं सौन्दर्य की ओर संकेत करते हैं ।

नीचे की पंक्तियों में कवि भारत माता के रूप लावण्य का वर्णन करके उसके प्रति आदर प्रकट करते हैं :-

"उदित कुतुकमिप्पोल निम्नरत्नाकरकोमलम्भे
उदधिकलणियुन्नु लोलनीलोर्मिचेलम्
अति मृदुसुधाकुन्नाद्रिराजन हिमत्ताल
सितमणिसरलश्रीशीलमुकुटमृकिरीटम् ।

अर्थात्, माता ! समुद्र तुम्हें अत्यंत कौतूहल के साथ लोल नील लहरों की साड़ी पहना रहा है । पर्वतराज नितान्त मृदुल हिमराशि की श्वेत मणियों से मण्डित किरीट पहना रहा है ।

इसी प्रकार "एक उद्बोधन" शीर्षक अपनी कविता में आशान ने भ्रमर और मधु के प्रतीकों द्वारा भारत की स्वतंत्रता केलिए मर मिटने का आह्वान किया है[2] ।

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - दूसरा भाग - पृ.413
2. वही पृ.330

वल्लत्तोल की कविता में देश-प्रेम ने सर्वाधिक अभिव्यक्ति पायी है। भारत की महिमा का वर्णन करते हुए वे गाते हैं -

पोरा पोरा नाळिल नाळिल दूरादूराभ्युयरट्टे
भारतक्ष्मा देवियुटे तृप्पताक्क
आकाश प्पोय्कयिलप्पुतुताकुमलयिळक्कट्टे;
लोकबन्धुगतिक्कुट्ट मार्गम् काट्टट्टे।

अर्थात् भारत के तिरंगी झंडे बहुत ऊँचाई पर फहरा रहे। वह आकाश-रूपी सरोवर में नये लहर पैदा करे और वह विश्वमैत्री का मार्ग खुला रखे। देश की स्वतंत्रता की महिमा का वर्णन जी. शंकरकुरुप की कविताओं में भी मिलता है। "भारत संदेशम्" शीर्षक कविता की ये पंक्तियाँ देखिए -

चोरयिलकुलिक्काम् कण्णुनीर कुटिक्कामुम्
घोरमामेट्टाण्टेट्टु युगमाय अनुभविक्कालुम्,
सारमिल्लयोन्नुम् नम्मुटेयात्माविन्नु
पारतंत्र्यत्तिन्नबाधपोलिदाबुदमंत्रम्।

अर्थात् चाहे खून में नहाना पड़े, चाहे आँसू पीना पड़े और घोरतम अष्टवर्ष अष्टयुग प्रतीत हों। ये सब हमारे लिए कुछ भी नहीं है। किन्तु परतंत्रता की बाधा हमारी आत्मा के लिए नासूर के समान भयानक है।

यहाँ परतंत्रता को भीषण नासूर रोग से कवि की उपमा अत्यंत सुन्दर है महाकवि उल्लूर की कुछ कविताओं में कवि के देश-प्रेम का जीता - जागता चित्र मिलता है। उल्लूर जिस समय अपनी प्रौढ रचनाओं का प्रणयन कर रहे थे, तब

---

1. वल्लत्तोलिन्टे पद्यकृतिकल - दूसरा भाग - पृ.292

भारत अस्वतंत्र था । स्वाधीनता आन्दोलन ज़ोर पर था । मलयालम के अन्य रोमान्टिक कवियों की भाँति उळ्ळूर भी देश-भक्ति पूर्ण कविताएं लिखने लगे । देश-भक्ति विषयक कविताओं में भारत के कुछ महापुरुषों के कीर्तिगान भी उळ्ळूर ने किया है । एन्टे मतम (मेरा धर्म) नामक कविता में कवि लोगों को आह्वान करते हैं -

गांधी, बोस, ठाकुर ई मूर्तित्रयत्ते नाम
स्वांतत्तिल ध्यानिच्चु मोक्षमेटाम ।

अर्थात् गांधी, बोस और ठाकुर इस त्रिमूर्ति का हृदय में स्मरण करके हम मोक्ष की प्राप्ति कर सकते हैं ।

यहाँ इन महापुरुषों के प्रति कवि का आदर व्यक्त होता है । महात्मागान्धी पर कवि ने अनेक ओजस्विनी कविताओं की रचना की हैं जिन से कवि का देश-प्रेम प्रकट होता है ।

भारत की स्वतंत्रता केलिए भी कवि ने अनेक कवितायें रची । "पहुकिक्कनाव्" नामक कविता में कवि कहते हैं, स्वतंत्रता किसी एक व्यक्ति की संपत्ति नहीं है, उस पर सब का समान अधिकार है -

स्वातंत्र्यमां वायु चिलर्कुमात्रं
श्वसिक्कुवानुळ्ळोरु वस्तुवल्ला,

अर्थात् स्वतंत्रता की वायु केवल कुछ व्यक्तियों को सांस लेने की चीज़ नहीं है ।

भारत माता की आज़ादी केलिए प्राणत्याग करने का आह्वान तक कवि करते हैं -

ओरिक्कले वेण्टू मरिक्कल, विक्कुम
मरिक्कतम्मयुक्कायिरिक्कलन्ल्लो ?

अर्थात् मरण एक ही बार होता है, तो वह भारत माता केलिए क्यों न हो ? भारत माता की आज़ादी केलिए मरना ही भारतीयों का कर्तव्य है।

उल्लूर की देशप्रेम भरी कविताओं में कहीं कहीं अपना जन्म स्थल केरल के प्रति भी कवि का तीव्र प्रेम प्रकट होता है। और एक जन्म मिले तो वह भी केरल में होने की अभिलाषा कवि प्रकट करते हैं -

अडियनिनियुमुण्डां जन्म मेन्नालतेल्लां
अडिमलर मुटियोलं निन्निलाकट्टे ताये ।

अर्थात् हे माँ, दास को भविष्य में मिलनेवाले सभी जन्म तुम्हीं में संपन्न हो । [1]

'केरलगानम्' नामक कविता की निम्न पंक्तियाँ भी कवि के केरल प्रेम का परिचायक हैं -

ञंगलुटे शरीरं नी, ञंगलुटे मनस्सु नी;
ञंगलुटे चैतन्यं नी, सर्वस्ववुं नी,
जातियोन्नु, मतमोन्नु वर्णमोन्नु निन्न वयट्टिल
जातराय ञंगलक्केल्लां - केरलीयत्वम् ।

---

1. उमाकेरलम् - उल्लूर

भाव है, तू हमारा शरीर है, तू हमारा मन है, तू हमारा चैतन्य है, तू हमारा सर्वस्व है । तेरे पेट से जन्म पानेवाले हम सब केलिए एक ही जाति है, एक ही धर्म है, एक ही वर्ण है और वह है - केरलीयता ।

उल्लूर की भाँति केरल पर आदर और प्रेम प्रकट करनेवाले दूसरे कवि को मिलना कठिन है ।

कवि वैलोप्पिल्ली की "आसाम पणिक्कार" नामक कविता भी कवि के देश प्रेम का भव्य उदाहरण है । इसकीकुछ पंक्तियाँ देखिए -

निरऩ्ञरिक्कलुम् दरिद्रमीराज्यम्,
निरन्निरिक्कलुम् विकृतमेंगिलुम्
इविटे स्नेहिप्पानिविटेयाशिप्पा -
निविटे दु:खिप्पान कष्टुते सुखम् [1] ।

अर्थात् हमारा यह देश दरिद्र होते हुए भी, देखने में सुन्दर या कुरूप होते हुए भी सुख में या दु:ख में यहाँ जीवित रहने में ही आनन्द का अनुभव होता है ।

मातृभूमि के प्रति कवि का गहरा प्रेम इस में प्रकट होता है । "कवि के देश प्रेम का तीक्ष्ण गन्ध इसमें भरा रहता है" [2] ।

निष्कर्ष

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने देश-प्रेम संबन्धी अनेक कविताओं की रचना की हैं जिन से इन कवियों की स्वाधीनता की आकांक्षा और देश प्रेम की व्यंजना हुई है । दोनों भाषाओं के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने देश प्रेम को वाणी देने के साथ-साथ देश की सांस्कृतिक गरिमा की ओर भी संकेत किया है । देश-प्रेम की अभिव्यक्ति की दृष्टि से दोनों भाषाओं के कवि समान रूप से सफल हुए हैं ।

---

1. वैलोप्पिल्लि श्रीधरमेनोन - आसाम पणिक्कार
2. मेलत्तचन्द्रशेखरन - वैलोप्पिल्लि कविता - पृ.175

4. विश्वप्रेम

विश्व के समस्त प्राणियों के प्रति प्रेम स्वच्छन्दतावादी कवियों की एक विशेषता है । ब्लेक, वर्डस्वर्थ आदि अंग्रेज़ी स्वच्छन्दतावादी कवियों के काव्य में यह विशेषता बड़ी मात्रा में मिलती है । विश्व-प्रेम के अन्तर्गत कवियों का मानव-प्रेम भी देखा जा सकता है । स्वच्छन्दतावादी कवि सब से बड़े मानव-प्रेमी होते हैं । मनुष्य की पीडा, गरीबी, अस्वतंत्रता आदि की ओर स्वच्छन्दतावादी दृष्टि डालते हैं और उसके प्रति सहानुभूति प्रकट करते हैं ।

हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने विश्व-प्रेम की भावना का स्पष्ट परिचय दिया है । इन कवियों ने अपने देश की सीमा तोड कर निखिल जगत् की उन्नति के लिए प्रयत्न करते दिखायी देते हैं । सच्चे भारतीय कवि के यही लक्षण हैं ।

"प्रसाद" जी ने अपनी कविता में जीवनधन से प्रार्थना की है कि इस जगत को वृन्दावन बनावे । उनकी "कामायनी" में मानवता की विजय का रहस्य समझाया गया है । उन्होंने प्रार्थना की है कि मानवता विजयिनी हो जाय और विधाता की कल्याणी सृष्टि सफल हो जाये । निम्न लिखित अवतरण से विश्व-प्रेम तथा लोकमंगल की भावना स्पष्ट होती है -

चेतना का सुन्दर इतिहास, अखिल मानव भावों का सत्य
विश्व के हृदय पटल पर दिव्य, अक्षरों से अंकित हो नित्य ।

विधाता की कल्याणी सृष्टि, सफल हो इस भूतल पर पूर्ण,
पटें सागर, बिखरें ग्रह-पुंज, और ज्वालामुखियाँ हों चूर्ण ।
उन्हें चिनगारी-सदृश सदर्प, कुचलती रहे खड़ी सानन्द,
आज से मानवता की कीर्ति अनिल, भू, जल में रहे न बंद ।
विश्व की दुर्बलता बल बने, पराजय का बढ़ता व्यापार
हँसाता रहे उसे सविलास शक्ति का क्रीडामय संचार ।
शक्ति के विद्युत्कण जो व्यस्त विकल बिखरे हैं हो निरुपाय,
समन्वय उसका करे समस्त, विजयिनी मानवता हो जाय ।[1]

वस्तुतः श्रद्धा की इन पंक्तियों में "प्रसाद" जी की आत्मा ही बोलती है । "प्रसाद" जी ने राष्ट्रीयता के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीयता को अपनाया था । विश्व-मानवता के प्रति संवेदना और स्नेहभाव उनके नाटकों में दाण्ड्यायन व्यास आदि महात्माओं के श्रीमुख से बराबर प्रकट होता रहा है । वर्ण या देश के कारण वे मनुष्य और राष्ट्र का शोषण करने के विरुद्ध थे । उदार शील-भावना उनके व्यक्तित्व का अंग थी ।[2]

"प्रसाद" भावुक कवि है अतः उनके हृदय में प्राणि-मात्र के प्रति आत्मीयता एवं करुणा की भावना निहित है । उनके महान पात्र प्राणियों के प्रति जिस स्नेह से अभिभूत है उससे कवि के संवेदनशील हृदय का परिचय मिल जाता है ।

स्वच्छन्दतावादी कवि मानव-प्रेम से प्रेरित होकर मानव की दुर्दशा को दूर करने का प्रयत्न भी करते हैं । वे विद्रोह केलिए तैयार हो जाते हैं ।

---

1. कामायनी - श्रद्धा सर्ग - पृ. 68-69
2. प्रभाकर श्रोत्रिय - प्रसाद का साहित्य - प्रेम तात्विक दृष्टि - पृ. 89

समाज के पतितों पर वे सहानुभूति प्रकट करते हैं । "पंत" जी में इसका एक भव्य उदाहरण देखिए -

नंगे तन, गदबदे सांवले सहज छबीले,
मिट्टी के मटमैले पुतले, पर फुर्तीले ।
दौड़ पार आंगन के फिर हो जाते ओझल,
वे नाटे छः सात साल के लड़के मांसल ।
सुन्दर लगती नग्न देह, मोहती नयन मन,
मानव के नाते उर में भरता अपनापन ।[1]

कवि का मानव-प्रेम निम्नलिखित पंक्तियों में स्पष्ट झलकता है -

तुम मेरे मन के मानव
मेरे गानों के गाने,
मेरे मानस के स्पंदन,
प्राणों के चिर पहचाने ।[2]

मानव के प्रति कवि का अनुराग कितना तीव्र है । पंत जी के विश्व-प्रेम का अभिराम रूप "गुंजन" में मिलता है । यथा,

प्रिय मुझे विश्व यह सचराचर
तृण, तरु, पशु, पक्षी, नर, सुरवर,
सुंदर अनादि शुभ सृष्टि अमर,
x x x x

---

1. आधुनिक कवि - सुमित्रानंदन पंत - पृ॰78
2. गुंजन - पृ॰35

चाहिए विश्व को नव जीवन,
मैं आकुल रे उन्मन, उन्मन ।[1]

यहाँ विश्व के चेतन-अचेतन समस्त वस्तुओं के प्रति कवि का अदम्य अनुराग दर्शनीय है । कवि का यह विचार "वसुधैककुटुम्बकम्" की उदार भावना से अनुप्राणित है ।

कविवर "निराला" में भी विश्व-प्रेम का मंगलमय रूप मिलता है । निराला का मानव-प्रेम भी प्रशंसनीय है । "निराला" शायद सबसे बड़े मानव-प्रेमी है । उनका मानव-प्रेम अत्यंत मार्मिक है । "तोड़ती पत्थर" नामक कविता में श्रमिक के प्रीत अत्यधिक सहानुभूति अभिव्यक्त हुई है । इस प्रसंग में "भिक्षुक" शीर्षक कविता भी स्मरणीय है । भिक्षुक का कितना मर्मस्पर्शी चित्रण है इन पंक्तियों में, देखिए -

वह आता -
दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता ।
पेट-पीठ दोनों मिलकर हैं एक,
चल रहा लकुटियाटेक,
मुट्ठी भर दाने को - भूख मिटाने को
मुँह फटी पुरानी झोली का फैलाता -[2]

भारत की दलित विधवा के प्रति "निराला" के उद्‌गार भी अत्यंत हृदय-स्पर्शी हैं । यथा,

---

1. गुंजन - पृ. 25-26
2. निराला - भिक्षुक

वह इष्टदेव के मंदिर की पूजा सी,
वह दीप-शिखा सी शांत भाव में लीन,
वह क्रूर काल ताण्डव की स्मृति रेखा सी
वह टूटे तरु की छुटी लता सी दीन,
दलित भारत की विधवा है[1] ।

इसी प्रकार "दान" नामक कविता में भी कवि का मानव-प्रेम प्रकट होता है । प्रस्तुत कविता में कवि ने ~~भीख~~ मांगनेवाले मानव की उपेक्षा करते हुए कपियों को पुए देनेवाले भक्तों पर व्यंग्य करते हैं[2] ।

मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने भी मानव के प्रति अपना सहज प्रेम प्रदर्शित किया है । उनकी कविताओं में विश्व-प्रेम के विशद तथा अभिराम चित्र परिलक्षित होते हैं । मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों की लोकप्रियता का एक प्रमुख कारण यह भी हो सकता है । स्वच्छन्दतावादियों में सब से प्रमुख कवि कुमारन आशान की रचनाओं में मानव-प्रेम का मनोरम वर्णन मिलता है । भावों की गंभीरता केलिए आशान सब से आगे हैं । भारतीय संस्कृति में सांस लेने वाले आशान की कृतियों में विश्व-प्रेम तथा लोक-कल्याण का स्वर मुखरित होता है । उन्होंने अपने कई प्रार्थना गीतों में ईश्वर से प्रार्थना की है कि जगत् के प्रत्येक प्राणी से मेरा प्रेम हो, प्रत्येक प्राणी का कल्याण हो । एक उदाहरण लीजिये -

सत्यम् समत्वम् स्थिरभ्युश्रम्‌ कण्टुम स्नेह -
रस्तु नुकर्नुम् कृतार्थरायी

---

1. निराला - परिमल की विधवा नामक कविता
2. अपरा - दान - पृ. 131

सद्धर्मत्तुटे नटक्कट्टे मानव -
रिदरा स्वर्गमायुत्तीर्म्मिटट्टे ।[1]

अर्थात् मानव सत्य और समता के साथ प्रेम-रस चख कर धर्म के पथ पर चलें और यह जगत स्वर्ग हो जाय ।

आशान विश्वप्रेम को मानवता का अभिन्न अंग समझनेवाले कवि थे । उनके अनुसार विश्व-प्रेम से शून्य व्यक्ति मनुष्य कहे जाने की क्षमताओं से हीन है । यह अवतरण देखिए -

लोकानुराग मियलात्तवरे नरन्टे -
याकारमार्न्निविटे निङ्ङल जनिच्चिटायुविन् ।[2]

अर्थात् विश्वप्रेम से रहित लोगों ! तुम मनुष्य के रूप में पैदा न हो । कवि का अभिप्राय है कि विश्व-प्रेमी ही सच्चा मानव है ।

महाकवि वल्लत्तोल की कविताओं में मानव प्रेम के सुन्दर उदाहरण मिलते हैं । उन्होंने गरीब और दुखी किसानों की व्यथा का यथार्थवादी चित्रण करके उनके प्रति सहानुभूति दिखायी है । कवि किसानों की कठिनाइयों से सुपरिचित थे । कड़ी धूप और घोर वर्षा का सहन करते हुए खेत में पिसने वाले किसानों की दुर्दशा का जीता-जागता चित्र कवि ने धनी-मानी लोगों के सामने खुला रखा । कवि का यह वक्तव्य इसकी पुष्टि करता है -

---

1. कुमारनाशान्टे पद्यकृतिकल - दूसरा भाग - पृ.337
2. वही

"हे मित्र कृषक ! झूठी शान पर मोहित लोगों केलिए तुम मूर्ख ही हो । लेकिन तुम्हारी मूक साधना से ही उस यंत्र का नाद-घोष निकल रहा है । हे साहसी ! तुम्हारे श्रमजल की बूँदें अगर न टपकें तो हीरे क्या चमक सकेंगी ? खेती से तुम्हारे शरीरों पर पड़ती कीचड़ ही महलों के निवासी धनिकों का सच्चा मृगमद है ।

"पोन्नानी नदी" कविता में गरीबों के प्रति कवि की सहानुभूति व्यक्त होती है । नदी तट पर रेशा पीटनेवाले दरिद्रनारायण स्त्री-पुरुषों के दैनिक जीवन - निर्वाह का उदाहरण देते हुए कवि निर्दय धनिकों को समझाते हैं कि इन निर्धनों का उद्धार करना तुम्हारा परम कर्तव्य है । यथा,

काले पर्चकञ्ञाकुरेक्कुटिच्चु,
करियल पणिक्कोप्पुकलोटु कूटि,
दरिद्रवर्गम् चकिरिप्पणिक्कुम्
मट्टुम तुनिञ्ञोत्तुमिलिन तटत्तिल ।
साधुक्कलिक्कुट्टर लिशप्पटक्कान्
नट्टेल्लु पोट्टुम पटि वेल चेयवू,
अन्ति महत्ताम् फलमो, पणक्का -
र्क्क-हो नरन् तन् समसृष्ट मैत्रि !
धनाढ्यरे, धर्म वष्पिक्कु निंगल
काणिक्क वेय्क्कुम् तनि मुत्तिनेक्काल,
कूलिप्पणिक्कारवरतन् वियर्प्पु -
नीर्तुल्लियाणीश्वरनेरेयिष्टम् ।

---

1. वल्लत्तोल - साहित्यमंजरी - तृतीय भाग - पृ.4।

भावार्थ है तड़के बासी रोटी खाके, कर में सब औजार लिए रेशे-रस्सी पीटने ये निर्धन सर के तट पर आते हैं। अपने पेटकी भूख मिटाने केलिए ये रीढ तोड़कर श्रम करते हैं। किन्तु उसके फल का अनुभव तो धनी लोग करते हैं। हे धनी, तुम जो निर्मल मोती धर्म-पथों पर भेंट करते हो उनसे इन मज़दूरों के श्रम-जल की बूँदें ही भगवान केलिए प्रिय हैं।

जाति-पाँति का विरोध भी कवि ने किया है। "जाति प्रभावम्" कविता में कवि बड़े ज़ोर से कहते हैं, जाति ! हाय ! यह शब्द नारकीय है। इसके दो अक्षर संसार को खा जानेवाले पिशाच के ग्रंथि के अक्षर हैं। साम्प्रदायिकता से दूर रहकर सभी धर्मों पर समान आदर व श्रद्धा प्रकट करके कवि ने विश्व-मैत्री की भावना का परिचय दिया है। वल्लत्तोल ने "एन्टे गुरुनाथन" {मेरे गुरुजी} नामक कविता में महात्मागांधीजी के स्वभाव की महिमा का वर्णन करते हुए उन में विद्यमान विश्व-प्रेम की भव्य भावना का भी परिचय दिया है। यथा,

लोकमेत्तरवाट्
तनियुक्की व्वेहिकलुम
पुलकलुम पुषुक्कलुम
कूटित्तन कुटुम्बक्कार ।[1]

भावार्थ है, यह लोक ही उनका कुटुम्ब है और यहाँ के पौधे, तृण और कीडे भी उनके कुटुम्बी हैं।

---

1. साहित्य मंजरी - चतुर्थ भाग - पृ.103

महाकवि उल्लुर ने भी अपनी कविताओं में मानव की महिमा का वर्णन किया है । उनकी कई कविताओं में गरीब और पीड़ितों पर सहानुभूति का स्वर सुनायी पड़ता है । इन कविताओं में गरीबों की व्यथा का जो वर्णन मिलता है वह कल्पनाजन्य न होकर अनुभूतिजन्य हो गया है । स्वयं कवि ने अपने जीवन में गरीबी का अनुभव किया था । अतः कभी-कभी कवि निर्दय समाज को ललकारने तक उद्यत होते हैं । उनकी दो रोटियाँ [रण्डप्पम] इस श्रेणी की कविता है[1] । धनिकों की निर्दयता का स्वयं अनुभव कर लेने के कारण वे अमीरों की निंदा बार-बार करते थे । उनकी रचनाओं में जातिगत विषमता तथा अवर्णों व अछूतों की दुर्दशा दूर करने की पुकार भी देखने को मिलती हैं ।

उल्लुर की कविताओं में विश्व-प्रेम का उज्ज्वल उदाहरण मिलता है । यह सारा विश्व एक ही है, संसार के सभी लोगों को सहोदर समान माननेवाले "ब्रह्मविद्यावाद" [थियोसोफी] को उल्लुर ने अपने दर्शन का आधार माना था । "ऐक्यगाथा" [एकता का गीत] कविता में मानव समूह की एकता से भी बढ़कर समस्त चराचरों की एकता का महत्वपूर्ण आदर्श ही कवि ने प्रस्तुत किया है । "सौभ्रात्रगानम" [भाईचारे का गीत] नामक कविता तो विश्व भ्रातृभाव की अभिव्यक्ति करती है । विश्वबन्धुत्व की स्थापना करना ही इस कविता का एकमात्र लक्ष्य है ।

उल्लुर एक-लोक के आदर्श का स्वप्न देखने वाले कवि थे । आज के राष्ट्रों की सीमाओं का टुकड़े - टुकड़े करके संसार को एक राष्ट्र बनाना चाहिए, यही कवि का विचार था । "विजय प्रार्थना", "आदटम बोम्ब" [अणुबम]

---

1. अम्मयुं मकनुं [माँ और बेटा] पणक्कारन [धनी] एन्टेस्वप्नं [मेरा सपना] आदि कविताओं में भी विद्रोह का स्वर मुखरित होता है ।

आदि कविताओं में इस एकलोक का आदर्श मुखरित होता है । "विजयप्रार्थना" कविता की ये पंक्तियाँ देखिए -

ओरुमतममतियिनि - परस्नेहम,
ओरु वर्ग मति-मनुष्यसंज्ञकम्,
ओरु राष्ट्र मति - धरातलम, नमु -
क्कोरु देवं मति - हृदिस्थितं दीपम ।[1]

अर्थात् पर-स्नेह नामक एक ही धर्म आवश्यक है, मनुष्य नामक एक ही वर्ग होना चाहिए, यह संसार-रूपी एक ही राष्ट्र की आवश्यकता है और हृदयस्थदीप रूपी एक ही भगवान ही काफी है ।

"अणुबम" कविता की ये पंक्तियाँ कितनी मार्मिक हैं -

ओरु वशियुण्टु मनुष्यनु नन्नावान
ओरेयोरुवशि मत्तवशियिल्ला
ओरु कुटुम्बमायुण्णुरन्नाल जीविक्काम,
पिरिञ्ञु मारियाल मरिक्कु मण्णाकाम्[2]

अर्थात् मनुष्य की उन्नति का एक ही रास्ता है, एक परिवार होकर आगे बढे तो वे जी सकते हैं अलग होकर रहे तो सत्यानाश ही संभव है । संकुचित राष्ट्र की भावना के सिर पर अणु बम की वर्षा हो जाय, ऐसा सोचनेवाला दूसरा कोई मलयालम कवि को मिलना मुश्किल है ।

---

1. उल्लूरिन्टे पद्यकृतिकल - दूसरा भाग - पृ.608
2. वही पृ.619

चेरुश्शेरी ने भी मानव-प्रेम तथा विश्व-भ्रातृत्व का मार्मिक चित्रण किया है । दीन-दुःखी एवं धनिकों से पीड़ित कृषकों की समस्या पर कवि ने सहानुभूति पूर्ण विचार किया है । "वाषक्कुला" (केलों का गुच्छा) नामक कविता में कवि धनिकों, जमीन्दारों के विरुद्ध विद्रोह केलिए उद्यत हो जाता है । गरीब किसानों का शोषण करनेवाले जमीनदारों को चेतावनी देकर कवि कहता है -

इतिनोक्के प्रतिकारम चेय्यातडङुमो
पतितरे, निङडलतन पिनमुरक्कार [1]

अर्थात् हे पतित, आनेवाली पीढी तुम्हारे इन सब अत्याचारों का बदला लिये बिना न रहेगी ।

"जी" शंकरकुरुप में भी विश्व-प्रेम के मनोरम उदाहरण मिलते हैं । यथा,

ईमहालयत्तिल कोण्टु
विकस स्वयम विश्व -
प्रेमत्तिन मरन्दत्ताल
मधुराईमायत्तीरु [2] ।

भावार्थ है, इस महालय से विकास प्राप्त करो और स्वयं विश्व-प्रेम रूपी मकरन्द से मधुर और आर्द्र बन जाओ ।

---

1. चेरुश्शेरी कृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.339
2. "जी" - विश्वदर्शनम - पृ.21

निष्कर्ष

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने विश्व-प्रेम के भव्य गान का आलाप किया है। विश्व के समस्त चराचरों के प्रति इन्होंने जो अगाध आत्मीयता का भाव प्रदर्शित किया है, वह स्वच्छन्दतावादी साहित्य की महान उपलब्धि बन गयी है। मानव और उसकी विषम समस्याओं का दोनों भाषाओं के कवियों ने अत्यंत मनोयोगपूर्ण चित्रण किया है। दलितों, दुःखियों के प्रति दोनों भाषाओं के कवियों ने सहानुभूति प्रकट की है। विश्व-प्रेम की उदात्त तथा गरिमामयी भावना की अभिव्यक्ति में दोनों कवि समान रूप से सफल हुए हैं।

1. ईश्वरीय-प्रेम

ईश्वरीय-प्रेम या अलौकिक के प्रति प्रेम की भावना अत्यंत प्राचीन है। यह भारतीय दर्शन क्षेत्र की अत्यंत पुरानी भावना है[1]। स्वच्छन्दतावादी साहित्य में अलौकिक के प्रति प्रेम प्रचुर मात्रा में मिलता है। अंग्रेजी के प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवि वर्डस्वर्थ, कालरिज आदि की भांति हिन्दी तथा मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने भी सर्वव्यापी भगवान का महत्व माना है "प्रसाद", "पंत", "निराला", "महादेवी आदि हिन्दी के प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियों में इसके उदाहरण मिलते हैं।

"चित्राधार", "कानन-कुसुम" जैसी "प्रसाद" की प्रारम्भिक काव्य कृतियों में ईश्वर के सगुण और निर्गुण रूप पर अनेक कवितायें प्राप्त होती हैं। किन्तु बाद में वे दर्शन और चिंतन की ओर आकृष्ट हुए। "प्रसाद" शैव दर्शन के गंभीर चिंतक थे। उनके मन में शिव के प्रति उपासना की भावना भी विद्यमान थी। ईश्वर के प्रति, उनके महत्व व शक्ति के प्रति गहरी आस्था प्रसाद के साहित्य में सर्वत्र देखने को मिलती है। "कानन कुसुम" की भक्ति संबन्धी कविताओं में प्रेम का अलौकिक रूप मिलता है। कहीं-कहीं "प्रसाद" के लौकिक प्रेमाभिव्यंजन में भी इतनी पवित्रता और सूक्ष्मता आ जाती है कि कई बार उसे अलौकिक प्रेम से पृथक करना कठिन हो जाता है[2]। किन्तु प्रसाद की प्रारंभिक कविताओं में यह अलौकिक प्रेम पृथक दीख पड़ता है[3]। विश्व में अलौकिक सत्ता के दर्शन करने की प्रवृत्ति "प्रसाद" की निम्नलिखित पंक्तियों में द्रष्टव्य है -

---

1. ओम् ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
   तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥ ईशावास्योपनिषद् - 1
2. प्रभाकर श्रोत्रिय - प्रसाद का साहित्य : प्रेम तात्विक दृष्टि - पृ. 117
3. वंदना - नमस्कार - प्रभो - भक्तियोग - विनय आदि में भक्ति विषयक रचनायें देखने को मिलती हैं।

छूटे विश्व जनता में प्यारे,
हम तो तुम को पाते हैं
तुम ऐसे सर्वत्र सुलभ हो,
पाकर कौन क्या खोता ।

-"कानन कुसुम" [तुम्हारा स्मरण] पृ॰67

"कानन कुसुम" का भक्त ईश्वर को प्रेम का प्रतिरूप मान लेता है । यथा,

"प्रभो प्रेममय प्रकाश तुम हो"[1] ।

ईश्वर-प्रेम की प्रबल भावना "पंत" जी में भी मिलती है । निम्नलिखित पंक्तियाँ ईश्वर-प्रेम से कितना अनुप्राणित हैं, देखिए -

नीरव तार हृदय में,
गूँज रहे हैं मंजुल लय में,
अनिल पुलक-से अरुणोदय में ।
चरण कमल में अर्पण कर मन,
रज-रंजित कर तन
मधु-रस-मज्जित कर मम जीवन,
चरणाकुल आशय में[2] ।

"निराला" की "अर्चना" नामक काव्य में अनेक भक्ति रसपूर्ण गीत संग्रहीत हैं । इन गीतों में कवि एक सच्चे भक्त के रूप में ही प्रकट हुआ है । यथा,

---

1. कानन कुसुम - प्रभो नामक कविता - पृ॰8
2. आधुनिक कवि - सुमित्रानन्दन पंत - पृ॰6

तरणि तार दो
अपर पार को ।
खे - खे कर थके हाथ
कोई भी नहीं साथ
श्रम शीकर भरा माथ,
बीच-धार, ओ ।
पार किया तो कानन,
मुरझाया जो आनन
आओ हे निर्वारण,
विपत वार ओ,
पड़ी भँवर बीच नाव,
भूले हैं सभी दाँव,
रुकता है नहीं राव,
मंजिल-मार, ओ ।[1]

उपर्युक्त पंक्तियाँ सच्चे भक्त के उद्गार ही हैं । ईश्वरीय-प्रेम की दृष्टि से "निराला" के "दुरित दूर करो नाथ," "मानव का मन शान्त करो हे," "तरणि तार दो" आदि गीत भी स्मरणीय हैं ।

महादेवी की रचनाओं में भक्ति या ईश्वर-प्रेम का चरमोत्कर्ष देखा जा सकता है । उन्होंने अपने प्रेम को अलौकिक धरातल पर ही बनाये रखा । कल्पना-लोक में रहनेवाला मूक प्रियतम ही उनका आलम्बन है । महादेवी में भक्ति या ईश्वरीय-प्रेम के अनेक उदाहरण मिलते हैं । ईश्वरीय-प्रेम में लीन हो कर कवयित्री गा रही हैं -

---

1. अपरा - पृ.185-186

क्या पूजा क्या अर्चन रे !
उस असीम का सुन्दर मन्दिर मेरा लघुतम जीवन रे !
मेरी श्वासें करती रहतीं नित प्रिय का अभिनंदन रे !
पदरज को धोने उमड़े आते लोचन में जलकण रे !
अक्षत पुलकित रोम मधुर मेरी पीड़ा का चन्दन रे !
स्नेह भरा जलता है झिलमिल मेरा यह दीपक मन रे !
मेरे दृग में तारक में नव उत्पल का उन्मीलन रे !
धूम बने उड़ते रहते हैं, प्रतिपल मेरे स्पन्दन रे !
प्रिय प्रिय जपते अधर ताल देता पलकों का नर्तन रे ![1]

इस प्रकार ईश्वरीय-प्रेम की सुन्दर अभिव्यक्ति स्वच्छन्दतावादी काव्य में पर्याप्त मात्रा में मिलती है ।

---

1. आधुनिक कवि - महादेवी वर्मा - पृ० 73

मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने भी ईश्वर-प्रेम या भक्ति का सुन्दर परिचय दिया है। स्वयं आशान ने भक्ति विषयक अनेक स्तोत्रों की रचना की है। निम्नलिखित पंक्तियों में कवि भगवान से अपने जीवन-नैया को पार पहुँचाने की प्रार्थना करते हैं -

ओरु भीतियेन्याते कात्तु, दु-
ष्कर सांसारिक पोतयात्रयिल
करकाट्टुक निन्नु नी कृपा -
कर, ज्ञान दिक्करियात्त नाविकन् ।[1]

भावार्थ, हे कृपा पात्र, इस दुष्कर सांसारिक जलयात्रा में मुझे निर्भय रखो। हे भगवान, मुझे दिशा-निर्देश करो, क्योंकि मैं दिशा ज्ञान-हीन नाविक हूँ।

निम्न लिखित पंक्तियों में भी कवि भगवान की करुणा-दृष्टि की चाह करते हैं -

प्राणनायक कलपदाम्बुजम
काणुमारु कल्ताते कमलन
वीणनायिवलकन्नुवेगिलुम
काणि नी करुणं चेयुक देवमे ।[2]

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.93
2. वही तृतीय भाग - पृ.59

भावार्थ है, हे प्राणनायक मुझ जैसा दुष्ट तेरे चरण-कमल का विस्मरण करने पर भी मुझ पर तू अपनी कृपा दृष्टि डाल दे ।

"भक्तिविलासम्", "शांगेयशतकम्," "शिवस्तोत्रमाला", "देवीस्तोत्रशील" आदि रचनाओं में भी कवि के ईश्वर-प्रेम का परिचय मिलता है ।

महाकवि वल्लत्तोल भी सर्वव्यापी भगवान के सम्मुख अपना सिर झुका देते हैं । यथा,

इप्पटि नूल्नूरायिरम हम्र्यंग -
ळोप्पोळुम पुत्तनाय् वेच्चुपोट्टिट,
ओप्पमतु कल्लोक्के विलयाटु -
मप्पराशक्तिक्कुप्पुक नाम[1] ।

भावार्थ है, इस प्रकार सैकड़ों महलों का निर्माण करके उन सब में विराजमान रहनेवाली उस पराशक्ति की वन्दना करो ।

महाकवि उल्लूर की रचनाओं में ईश्वर-प्रेम के अनेक उदाहरण मिलते हैं । कवि आदि, मध्य और अन्त तीन भगवान की प्रशंसा करते हैं । यथा,

अहो ! जयिष्णु जगदाधार मोरलभुतदिव्यमह -
स्सखण्ड मध्यमचिन्त्यमेभव मनादिमध्यान्तम[2] ।

---

1. वल्लत्तोल - साहित्य मंजरी - चतुर्थ भाग - पृ.3
2. वही द्वितीय भाग-पृ.149

अर्थात् इस जगत् के आधार, अद्भुत, दिव्य, अखण्ड, अद्वय, अपार वैभव-शाली आदि, मध्य और अन्तहीन भगवान की जय हो जाय ।

यहाँ कवि सर्वशक्तिमान ईश्वर की स्तुति करके उनसे प्रेम प्रकट करते हैं । कवि समस्त चराचरों के स्रष्टा भगवान की वंदना करते हैं । यथा,

विश्व ब्रह्माण्डभाण्ड कर्त्तावाय् विलङ्ङुम्न
सच्चिदानन्द मूर्त्ते ! सत्य शान्त्यद्वैतात्मन !
सर्वस्थावर चरजन्मदातावाय स्वामिन ।
सर्वभूतान्तर्यामिन ! साष्टांगम नमस्कारम् ।[1]

अर्थात् सारे ब्रह्माण्ड के निर्माता के रूप में शोभित, सच्चिदानन्दमूर्त्ते ! सत्य, शान्ति और अद्वैतात्मा, सारे चराचरों का जन्मदाता, हे स्वामिन, सर्व भूतों का नियामक, मैं तेरा साष्टांग प्रणाम करता हूं ।

यहाँ भगवान की अपार महिमा के सम्मुख कवि अपना शीश झुकाते हैं, जिस से उनका ईश्वरीय-प्रेम अभिव्यक्त होता है । उल्लूर के ईश्वरीय-प्रेम पर प्रकाश डालते हुए मलयालम के एक प्रमुख आलोचक कहते हैं - लौकिक और साधारण प्रेम से बढ़कर अलौकिक और आध्यात्मिक प्रेम की परिकल्पना ही उस प्रतिभावान को अभीष्ट थी[2] ।

---

1. उल्लूरिन्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ.562
2. पी. करुणाकरन नायर - उल्लूर कविता - पृ.51

मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों में "जी" अधिक रहस्यवादी है। अतः उनकी रचनाओं में परम तत्व के प्रति प्रेम की भावना भी अधिक मात्रा में द्रष्टव्य है। भगवान की अपार महिमा पर कवि गाते हैं -

निन विकासत्तिन परि -
णाममे महाकाशम्
निन विकस्वरशीलम
मात्रमाणल्लोकालम ।

भावार्थ है, तेरे विकास का परिणाम ही यह महाकाश है। तेरे विकास का शील ही यह समय है।

स्वच्छन्दतावादी कवियों ने सौन्दर्य का वर्णन करते - करते उसके पीछे विराजमान उस अलौकिक सत्ता की परिकल्पना भी की है। शंकर कुरूप की कविताओं में भी अनेक स्थलों पर उस अज्ञेय दिव्य चेतना की चर्चा मिलती है। इस समस्त जगत् का संचालन करनेवाले एक विराट सत्य पर कवि का अटल विश्वास है। "अन्वेषण", "चन्द्रकला", "प्रभात समीर" आदि कविताओं में कवि का ईश्वरीय-प्रेम अभिव्यक्त होता है। "प्रभात समीर" में कवि स्पष्टतः कहते हैं कि समस्त चराचरों में उस परम तत्व की चेतना विद्यमान है। यथा,

जानता है चराचर जगत्
तुम्हारी चतुरसुकुमार भाषा,
अन्यथा,

---

1. "जी" विश्वदर्शनम - पृ. 20

आसेतु हिमाचल
ऐसा स्पन्दन कैसे आविर्भूत होता ?[1]

कवि के अनुसार वेणुओं में जो गूंज होती है, वह उस दिव्य शक्ति की ही गूंज है । यथा,

हे चैतन्यदायक महात्मन्
गूंज रही है तुम्हारी शक्ति ध्वनि वेणुवन[2] में ।

"पुष्प गीत" में भी कवि का ईश्वरीय प्रेम प्रकट हुआ है । पुष्प (कवि) कहता है कि मेरा प्रत्येक कंपन तुम्हारी इच्छा पर आधारित है । इसकी अभिलाषा है -

इस मिट्टी में मिट्टी बन जाने से पहले
अपने पराग से
कर सकूं तुम्हारा अंग लेपन,
यह मेरा अत्यल्प सौरभ यदि तुम्हें आमोदित कर सके
तो हो जाऊं मैं कृतार्थ
मैं फिर भी खिलूं किसी जंगल में
तुम्हारे ही परितोष केलिए[3] ।

इस प्रकार विश्व भर व्याप्त उस महा-चेतना के सम्मुख अपनी तुच्छता की स्वीकृति और उस परम शक्ति के प्रति आत्म-समर्पण का भाव यहाँ प्रकट हुआ है ।

---

1. ओटक्कुषल - अनुवाद - पृ.77
2. वही पृ.79
3. वही पृ.25

"अन्वेषण" नामक कविता में भी कवि का ईश्वरीय-प्रेम दर्शनीय है। इस कविता के विषय में मलयालम की प्रसिद्ध आलोचक डा॰ लीलावती का कथन अत्यधिक सार्थक है - "अमूर्त प्रतीकों के द्वारा आस्तिकता को केन्द्रीकृत करनेवाली विरह-व्यथा इतने तीव्र रूप से अभिव्यक्त करनेवाली एक मलयालम कविता पहले और बाद को नहीं लिखी गयी है[1]।

निष्कर्ष

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने ईश्वरीय-प्रेम का मार्मिक प्रतिपादन किया है। दोनों भाषाओं के कवियों ने भगवद्-प्रेम संबन्धी जो उद्गार प्रकट किये हैं, उनमें एक सच्चे भक्त की अन्तरात्मा की अभिव्यक्ति द्रष्टव्य है। विश्व तथा उसके समस्त चराचरों के रचयिता परम शक्तिमान भगवान के अस्तित्व पर दोनों कवियों ने अगाध विश्वास प्रकट किया है। उस अनादि और अनंत शक्ति की महिमा का गान भी दोनों कवियों ने अत्यंत आत्मीयता के साथ किया है। ईश्वरीय-प्रेम की अभिव्यक्ति में दोनों कवि सफल हुए हैं।

---

1. डॉ॰ एम॰ लीलावती - कर्णराजि - पृ॰26

पाँचवाँ अध्याय

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में सौन्दर्य

स्वच्छन्दतावादी कवियों का सौन्दर्य-दर्शन

स्वच्छन्दतावादी कवि भावुक और सौन्दर्य प्रेमी हैं। इसलिए उन्होंने सौन्दर्य का मनोयोग से वर्णन किया है। उनकी रचनाओं में अंकित सौन्दर्य-चित्रों के अध्ययन से लगता है कि सौन्दर्य मात्र वस्तुनिष्ठ नहीं, वह व्यक्तिनिष्ठ भी है। स्वच्छन्दतावादी कविता में वर्णित सौन्दर्य का अध्ययन करने के पहले प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियों की सौन्दर्य - संबन्धी मान्यता का परिचय पाना समीचीन होगा।

हिन्दी कविता में द्विवेदी युग में ही सौन्दर्य का स्थूल के साथ सूक्ष्म चित्रण की प्रवृत्ति दृष्टिगत हुई। किन्तु सौन्दर्य - चित्रण का सर्वाधिक उत्कर्ष स्वच्छन्दतावादी कवियों के द्वारा हुआ। स्वच्छन्दतावादी काव्य में सौन्दर्य के सूक्ष्म चित्रण की बलवती प्रेरणा परिलक्षित हुई।

सभी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने सौन्दर्य के स्थूल चित्रण से सूक्ष्म चित्रण की ओर अधिक रुचि दिखायी । स्वच्छन्दतावादी कवियों की सौन्दर्य-सृष्टि एवं सौन्दर्य संबन्धी विचार-धारा साहित्य की महान उपलब्धियाँ हैं । स्वच्छन्दतावादियों की अपनी एक विशेष सौन्दर्य-दृष्टि है । उनके सौन्दर्य संबन्धी विचार अत्यंत गंभीर व सूक्ष्म हैं ।

प्रेम के क्षेत्र में कवि "प्रसाद" का जितना ऊँचा स्थान है, उतना ही उन्नत स्थान सौन्दर्य-चित्रण के क्षेत्र में भी उन्हें उपलब्ध है । उनकी सौन्दर्य-संबन्धी धारणा विशेष महत्वपूर्ण है । उनके अनुसार सौन्दर्य, व्यक्ति या वस्तु का साधारण बाहरी गुण मात्र नहीं है, अपितु वह एक ईश्वरीय विभूति है । कवि सौन्दर्य का निर्वचन इस प्रकार करते हैं - उज्ज्वल वरदान चेतना का सौन्दर्य जिसे सब कहते हैं, जिस में अनंत अभिलाषा के सपने सब जगते रहते हैं[1] । कवि की सौन्दर्य-संबन्धी यह भावना अत्यंत प्रौढ़ एवं उदात्त है ।

सौन्दर्य में ब्रह्म का सत् स्वरूप निहित रहता है । यही कारण है कि सत्य और सौन्दर्य दोनों एक-सा प्रतीत होने लगता है[2] ।

सच्चा सौन्दर्य तो शाश्वत है, क्षणभंगुर नहीं ।. अतः कवि क्षणभंगुर सौन्दर्य की अपेक्षा शाश्वत सौन्दर्य की ओर दृष्टिपात करने की प्रेरणा देते हैं ।

---

1. कामायनी : लज्जा सर्ग
2. 'Beauty is truth, truth beauty, that is all
Ye know on earth and all ye need to know.'
-Keats : 'Ode on a Grecian Urn'

यथा -

क्षणकुर सौन्दर्य देख कर रीझो मत, देखो, देखो ।
उस सुंदरतम की सुंदरता विश्वमात्र में छाई है ।[1]

सौन्दर्य के आस्वादन केलिए हृदय के शांत व गंभीर होने की आवश्यकता है । उसके अभाव में सच्चे सौन्दर्य का आस्वादन असंभव है ।

यथा -

सृष्टि में सब कुछ है अभिराम, सर्गी में है उन्नति या ह्रास
बना लो अपना हृदय प्रशांत, तनिक तब देखो वह सौंदर्य ।[2]

यह है प्रसाद की सौन्दर्य संबन्धी विचार-धारा । यही उनके काव्य को महिमान्वित करती है । सौन्दर्य-संबन्धी इसी विचारा-धारा के फलस्वरूप प्रसाद की सौन्दर्यानुभूति में आदर्श और यथार्थ का मधुर समन्वय परिलक्षित होता है ।

कविवर पंत को सौन्दर्य-कवि कहना अधिक उचित होगा । सौन्दर्य के संबन्ध में उनकी अपनी धारणायें हैं जो अत्यंत महत्वपूर्ण हैं । उनकी सौन्दर्य-संबन्धी धारणा प्रौढ व उदात्त है । कवि सौन्दर्य दर्शन में इतना कुशल हो गया है कि संसार भर में वे सौन्दर्य का दर्शन करते हैं ।

---

1. प्रेमपथिक - पृ.24
2. झरना - पृ.42

रूप और सौन्दर्य देखकर कवि एकदम मुग्ध हो जाते हैं, क्योंकि सौन्दर्य से पूर्ण सभी पदार्थ कवि केलिए किसी गम्भीर सत्ता के सन्देशवाहक से लगते हैं । यथा -

राशि राशि सौंदर्य, प्रेम, आनन्द, गुणों का हार[1] ।
मुझे लुभाता रूप, रंग, रेखा का यह संसार ।

कवि स्वयं कहते हैं कि उनके मन में सुन्दरता का आलोक-स्रोत फूट पड़ा है -

सुन्दरता का आलोक स्रोत है फूट पड़ा मेरे मन में,
जिस से नव जीवन का प्रभात होगा फिर जग के आंगन में[2] ।

जिस कवि के हृदय में सौन्दर्य की अजस्रधारा प्रवाहित होती है वही संसार में सौन्दर्य का पूर्ण दर्शन कर सकते हैं । पंत तो समस्त प्रकृति में सौन्दर्य का हृदयहारी रूप देखते हैं प्रकृति की सभी वस्तुओं में सौन्दर्य का दर्शन करनेवाले कवि मानव में उसका चरमोत्कर्ष देखते हैं । यथा -

सुन्दर है विहग, सुमन सुन्दर, मानव, तुम सब से सुन्दरतम,
निर्मित सब की तिल सुषमा से, तुम निखिल सृष्टि में चिर निरुपम[3] ।

यहाँ कवि अन्य सृष्टि की तुलना में मानव की श्रेष्ठता मान लेते हैं ।

---

1. युगवाणी - पृ.76
2. युगान्त - पृ.27
3. वही पृ.46

कवि इस धरती के कण - कण में सौन्दर्य को देखते हैं -

इस धरती के रोम रोम में भरी सहज सुन्दरता ।
इसकी रज को छु प्रकाश बन मधुर विनम्र निखरता ।
पीले पत्ते, टूटी टहनी, छिलके, कंकट, पत्थर,
कूडा करकट सब कुछ भू पर लगता सार्थक सुन्दर ।[1]

कवि केलिए सुन्दरता जीवन की समस्त श्री और ऐश्वर्य का आधार है -

अकेली सुन्दरता कल्याणि सकल ऐश्वर्यों की सन्धान ।[2]

मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों में चंगंपुषा ने सौन्दर्य-संबन्धी अपने विचारों को कई प्रसंगों में व्यक्त किया है । वस्तुत: चंगंपुषा को सौन्दर्य का पुजारी कहना उचित होगा । सौन्दर्य की महिमा का वर्णन करके वे कहते हैं -

आरोरो दिवसवुमत्यनर्घमायीटुम्
चारुतयोन्मीलोक गोलत्तेप्पुतुक्कुन्नु ।
अल्लेंगिल प्रापञ्चिक जीवितत्तिने नम्म -
लेल्लारुमितिन मुनपे वेरुत्तु कष़िञ्ञेने ।[3]

आशय है, हर दिन अत्यधिक अनर्घ सौन्दर्य ही इस संसार में नवीनता भर देता है, नहीं तो इसके पहले ही सांसारिक जीवन से हम सब विमुख हो जाते ।

---

1. युगवाणी - पृ.26
2. पल्लव - पृ.54
3. चंगंपुषाकृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.94

सौन्दर्य में जीवन को मधुर बनाने की अद्भुत शक्ति निहित रहती है। यथा -

एन्दिनीप्रकृतियिल सौन्दर्य मयमायु -
ल्लेन्दुम, हा, जीवितत्ते मधुरिप्पिच्चीटुन्नु।[1]

अर्थात्, इस प्रकृति के सौन्दर्य-पूर्ण सभी चीजें जीवन को मधुर बनाती हैं। "सौन्दर्यपूजा" शीर्षक लघु कविता में कवि सौन्दर्य की उपासना करते हैं। यथा,

नियतिक्कधीनन ञान निस्सारनकाम पक्षे,
नियतम सौन्दर्यमे, निन्ने ञानाराधिप्पू।[2]

अर्थात्, मैं नियति का अधीन हूँ, तुच्छ हूँ, फिर भी हे शाश्वत सौन्दर्य, मैं तेरी पूजा करता हूँ"।

सौन्दर्य का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है - §1§ रूप-सौन्दर्य §2§ भाव-सौन्दर्य §3§ कर्म-सौन्दर्य। रूप-सौन्दर्य के निम्नलिखित भेद माने जा सकते हैं - §क§ मानवीय-सौन्दर्य §ख§ प्राकृतिक-सौन्दर्य।

मानवीय-सौन्दर्य के अन्तर्गत मुख्य दो भेद हैं - §अ§ नारी-सौन्दर्य §आ§ पुरुष-सौन्दर्य।

विवेचन की सुविधा केलिए नारी-सौन्दर्य वर्णन को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है -

§1§ रूप

§2§ सज्जा §वस्त्र, अलंकार, अनुलेपन आदि§

§3§ अनुभाव या शारीरिक चेष्टाएं

---

1. चंगपुष़ाकृतिकल - द्वितीय भाग - पृ. 94
2. वही - पृ. 192

(1) <u>रूप</u>

नारी के रूप-सौन्दर्य-वर्णन में स्वच्छन्दतावादियों ने विशेष रुचि दिखायी। स्वभावतः प्रेम और सौन्दर्य की ओर वे हठात् आकृष्ट भी हुए हैं। नारी-सौन्दर्य-वर्णन में स्वच्छन्दतावादी सिद्धहस्त निकले। वस्तुतः प्रबन्ध काव्य में ही रूप सौन्दर्य के विस्तृत वर्णन का अवसर मिलता है। रूप सौन्दर्य-वर्णन में कविवर प्रसाद ने अपनी कला कुशलता का सुन्दर परिचय प्रस्तुत किया है।

"कामायनी" में श्रद्धा का रूप-सौन्दर्य वर्णन रस का परिपाक है। देखिए -

और वह देखा सुन्दर दृश्य, नयन का इन्द्रजाल अभिराम,
कुसुम वैभव में लता समान, चन्द्रिका से लिपटा घनश्याम।
हृदय की अनुकृति बाह्य उदार, एक लम्बी काया उन्मुक्त,
मधु पवन, क्रीड़ित ज्यों शिशु-साल सुशोभित हो सौरभ संयुक्त।
मसृण गांधार देश के नील रोमवाले मेषों के चर्म,
ढँक रहे थे उसका वपु कांत, बन रहा था वह कोमल वर्म।
नील परिधान बीच सुकुमार खुल रहा मृदुल अधखुला अंग,
खिला हो ज्यों बिजली का फूल, मेघ वन बीच गुलाबी रंग।
आह, वह मुख, परिचय के व्योम बीच जब घिरते हों घनश्याम
अरुण रवि मंडल उनको भेद दिखाई देता हो छविधाम।
या कि, नव इंद्रनील मधु शृंग फोड़कर धधक रही हो कांत,
एक मधु ज्वालामुखी अचेत, माधवी रजनी में अश्रांत।

घिर रहे थे घुँघराले बाल, अंस अवलंबित मुख के पास,
नील घन शावक से सुकुमार, सुधा भरने को विधु के पास।
और उस मुख पर वह मुसक्यान, रक्त किसलय पर ले विश्राम,
अरुण की एक किरण अम्लान अधिक अलसाई हो अभिराम।[1]

यह एक रूप-वर्णन ही "प्रसाद" को रूप, यौवन एवं विलास के अद्वितीय कलाकार साबित करने में सक्षम है।

"प्रसाद"के "आँसू" की नायिका का रूप-सौन्दर्य वर्णन नख-शिख की रीतिकालीन परिपाटी के बहुत कुछ अनुकूल है[2]। स्थूल सौन्दर्य-वर्णन में भी कवि का अनुभूति-गाम्भीर्य ही प्रधान है। नायिका के मुख, नेत्र, केश, कपोल, बरौनी, दाँत, हँसी और बाहुओं का वर्णन केवल बाह्य रूप-रंग का परिचायक न होकर कवि की अंतः सौन्दर्य भाव से पुलकित है। *कई पंक्तियाँ भी*

[illegible]- इसी प्रकार का चित्ताकर्षक वर्णन पंत जी ने भी प्रस्तुत किया है। उनके द्वारा किया गया "अप्सरा" के काल्पनिक रूप-सौन्दर्य का वर्णन देखने योग्य है। यथा -

इन्द्रलोक में पुलक-नृत्य तुम करती लघु-पद-भार,
तड़ित-चकित चितवन से चंचल कर सुर-सभा अपार।
नग्न देह में नव-रंग सुर-धनु छाया-पट सुकुमार,
खोंस नील-नभ की वेणी में इन्दु कुन्द द्युति-स्फार।

---

1. कामायनी - श्रद्धा सर्ग
2. आँसू - पृ॰21 से 24

गौर-श्याम तन, बैठ पुष्प-तन भृंगिनी-श्रेणि सकाल,
बुनते मृदुल मधुर छायांचल तुममें स्निग्ध । हिम रात ।
स्वर्ण-सूत्र में रजत-हिलोरें कंचु काढ़ती प्रात,
सुरंग रेशमी पंख तितलियाँ झुला सिराती गात ।
मेंहदी - युत मृदु-करतल-छबि से कुसुमित सुभग सिंगार,
गौर-देह-द्युति हिम-शिखरों पर बरस रही साभार ।
पद लालिमा उषा, पुलकित पद शशि-स्मित-घन सोभार,
उडु-कम्पन मृदु-मृदु उर-स्पंदन, चपल-वीचि पद-चार[1] ।

यहाँ कवि का वर्णन इतना तन्मय हो गया है कि अप्सरा साक्षात् हमारी आँखों के सामने सम्मोहक नृत्य करती सी लगती है ।

अप्सरा के चित्रण में ही नहीं साधारण नारी के रूप-लावण्य के वर्णन में भी कवि रुचि रखते हैं । यथा -

उन्मद यौवन से उभर, घटा सी नव आषाढ़ की सुन्दर,
अति श्याम वरण श्लथ मंद चरण,
इठलाती आती ग्राम युवती, वह गजगति सर्प डगर पर ।
सरकाती पट, खिसकाती लट, शरमाती झट,
वह नमित दृष्टि से देख उरोजों के युग घट ।
हँसती खल खल अबला चंचल, ज्यों फूट[2] पड़ा हो स्रोत सरल,
भर फेनोज्ज्वल दशनों से अधरों के तट ।

---

1. गुंजन की अप्सरा नामक कविता
2. आधुनिक कवि : पंत (सम्मेलन संग्रह) - पृ. 87

यहाँ निम्न स्तर के ग्राम युवती का वर्णन कवि ने पूर्ण मनोयोग के साथ किया है । "बच्चन" की "मधुशाला" में भी, जो प्रेम और सौन्दर्य की एक प्रतीकात्मक काव्य-रचना है, नारी-सौन्दर्य का आकर्षक चित्रण मिलता है । देखिए -

मेंहदी रंजित मृदुल हथेली में माणिक मद का प्याला,
अंगूरी अवगुंठन डाले स्वर्ण वर्ण साकीबाला,
पाग बैंजनी जामा नीला डाट डटे पीनेवाले,
इन्द्रधनुष से होड रही ले आज रंगीली मधुशाला[1] ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वच्छन्दतावादी कवियों का नारी-रूप सौन्दर्य-वर्णन अत्यंत आकर्षक एवं सजीव है । इन वर्णनों में स्वच्छंदतावादियों का कल्पना-वैभव भी दर्शनीय है । काव्य में इतनी अभिराम कल्पना स्वच्छंदतावादियों की महान उपलब्धि है । उपर्युक्त कला-पूर्ण रूप चित्रों में कवियों की सूक्ष्म दर्शिता मौलिकता एवं स्वच्छंद कल्पना के दर्शन होते हैं ।

नारी सौन्दर्य वर्णन में शरीर के अंग - प्रत्यंग का मोहक तथा विशद वर्णन काव्यों में देखने को मिलता है । केश, मुख, भाल, कान, भौं, पलक, आँख, चितवन, पुतली, नासिका, दांत, वाणी, अधर, कपोल, ग्रीवा, स्कंध, कंठ, बाहु, भुजाएं, अंगुलियां, नख, वक्षस्थल, नाभि, त्रिवली, रोमावली, कटि, जघन, नितम्ब, उरु, चरण, अंगूठा, गुल्फ, अंगों का सौन्दर्य, सौकुमार्य, वर्ण, कद व गठन आदि का वर्णन भारतीय प्रेम काव्य में मिलता है[2] । किन्तु स्वच्छंदतावादी काव्यों में इनकी कुछ झलकें ही देखने को मिलती हैं । प्रबंध काव्य में ही इन सब का विशद वर्णन संभव है ।

---

1. मधुशाला - छंद 12
2. S.K. De : Treatment of Love in Sanskrit Literature, pp.38 to 43

स्वच्छंदतावादियों ने मुक्तकों की रचना अधिक की है । फिर भी इन लघु कविताओं में भी उन्होंने अपनी कला कुशलता का परिचय दिया है । सौन्दर्य-वर्णन केलिए स्वच्छंदतावादी कवियों ने भी परम्परागत उपमान को ग्रहण किए हैं । फिर भी "प्रसाद," पंत, "निराला" व महादेवी आदि कवियों ने अनेक नवीन उपमानों की योजना की है । इस प्रकार उन्होंने अपने सतीव निरीक्षण व कल्पना का परिचय दिया है । सौन्दर्य-वर्णन के उपर्युक्त उदाहरणों में यह स्पष्ट परिलक्षित है ।

§2§ सज्जा

रूप सौन्दर्य के साथ सज्जा का घनिष्ठ संबन्ध है । सज्जा, अर्थात् वस्त्र, अलंकार आदि एक हद तक रूप सौन्दर्य को बढ़ा देते हैं । सज्जा - विधान में कवियों की अपनी रुचि व सौन्दर्य-बोध का भी परिचय मिलता है । काल-परिवर्तन के साथ ही सज्जा विधान में भी परिवर्तन होता जाता है । भारतेन्दु-युग के सज्जा - विधान में रूढ़ि-प्रियता अधिक थी । द्विवेदी-युग में कुछ नवीन रुचि का परिचय मिला । स्वच्छंदतावादियों ने सज्जा को अत्यंत आधुनिक रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया ।

विवेचन की सुविधा केलिए हम सज्जा को तीन भागों में विभाजित करेंगे - §1§ वस्त्र §2§ अलंकार तथा §3§ अनुलेपन ।

(1) वस्त्र

वस्त्र-चयन में प्रत्येक कवि की अपनी विशेष रुचि या धारणा हो सकती है किन्तु उस से कवि के सौन्दर्य - बोध की मौलिकता का परिचय मिलता है । वस्त्र-चयन के कुछ सुन्दर उदाहरण देखिए -

(क) मसृण गांधार देश के नील रोमवाले मेषों के चर्म,
ढँक रहे थे उसका वपु कांत, बन रहा था वह कोमल वर्म ।
- कामायनी

(ख) गोरे अंगों पर सिहर-सिहर, लहराता तार तरल सुन्दर
चंचल अंचल सा नीलाम्बर
साड़ी की सिकुड़न सी जिस पर, शशि की रेशमी विभा से भर,
सिमटी हैं वर्तुल मृदुल लहर ।
- पंत

(ग) रजनी ओढ़े जाती थी झिल मिल तारों की जाली ।
- महादेवी

ऐसे और भी कई उदाहरण पेश किये जा सकते हैं ।

अलंकार

प्राचीन काल से ही स्त्रियों के सौन्दर्य-वर्णन में सहायक वस्तुओं के रूप में कविगण अलंकारों का वर्णन करते आये हैं । वस्तुतः सौन्दर्य को बढ़ाने में अलंकार सहायक होते हैं । महाकवि कालिदास ने अपनी नायिकाओं का सौन्दर्य बढ़ाने केलिए रत्न आदि अनेक मूल्यवान अलंकारों का प्रयोग किया है ।

भारतेन्दु एवं द्विवेदी काल में भी काव्य में क्रियोचित आभूषण विधान का पर्याप्त वर्णन मिलता है। किन्तु अब समय बदल गया साथ ही साथ अलंकारों का महत्व भी कम होता जा रहा है। फिर भी कंकण, किंकिणी आदि का वर्णन स्वच्छंदतावादियों ने भी किया है। यथा -

क. नूपुरों के स्वरों में सीस करता चरण चुम्बन।[1]

ख. मुखर चरण ध्वनित हुए झनन झनन।
सुवर्ण किंकिणी बजी छनन छनन।
खनक उठे कनक वलय खनन खनन।[2]

सौन्दर्य-प्रसाधन में पुष्पों का महत्वपूर्ण हाथ है। देखिए -

कानों में अड़हुल खोंस, धवल, या कुँई कनेर लोध पाटल,
वह हर सिंगार से कच संवार, मृदु मौलसिरी के गूँथ हार,
गउओं संग करती वन विहार, पिक चातक के संग दे पुकार,
वह कुंद काँस से, अमलतास से, आम्रमौर, सहजन, पलाश से,
निर्जन में सज ऋतु सिंगार।[3]

<u>अनुलेपन</u>

भारतीय साहित्य में स्त्रियों के शृंगार के प्रसाधनों का प्रयोग बड़ी मात्रा में मिलता है। इन प्रसाधनों में मुख्य हैं चन्दन, केसर, कस्तूरी, पुष्प-चूर्ण आदि। किन्तु वैज्ञानिक प्रगति के साथ ही अनेक कृत्रिम सौन्दर्यवर्धक वस्तुओं का निर्माण भी हुआ। यही कारण है कि परंपरागत प्रसाधनों की उपेक्षा सी

---

1. प्रेमसंगीत
2. बच्चन, मिलनयामिनी - पृ.213
3. ग्राम्या

हो गयी है । आधुनिक सौन्दर्यवर्धक वस्तुओं में पौडर, क्यूटेक्स, लिपस्टिक आदि मुख्य हैं, ऐसे आधुनिक अनुलेपनों से रंग में रंगी हुई सुंदरियों का वर्णन स्वच्छन्दतावादी कविता में भी सुलभ है । एक उदाहरण देखिए -

पशुओं से ले मृदुचर्म, पक्षियों से ले प्रिय रोमिल पर,
ऋतु कुसुमों से सुरंग सुरुचिमय चित्रवस्त्र ले सुन्दर,
मुक्ता रत्न, लिपस्टिक, बॉस्टिक, पौडर से कर मुख रंजित,
अंगराग, क्यूटेक्स अलक्त से अग नख शिख शोभित ।[1]

[3] अनुभाव या शारीरिक चेष्टाएं

नायिकाओं की शारीरिक चेष्टाओं में भी अत्यधिक आकर्षण है । ये चेष्टाएं वस्तुत: सौन्दर्य के प्रधान उपकरण भी हैं । ये उद्दीपन में सहायक होती हैं । साहित्याचार्यों ने इन शारीरिक चेष्टाओं का विशद व विदग्ध वर्णन किया है[2] । साहित्य-शास्त्र में ये सब चेष्टाएं अनुभाव कहलाती हैं । स्वच्छंदतावादी कविताओं में इन अनुभावों का सुन्दर वर्णन मिलते हैं । यथा =

क. रोकर तुम ने मुझ को बांधा, हँस कर मुझ को स्वाधीन करो ।
- प्रेमसंगीत

ख. तुम्हारे छूने में था प्राण, संग में पावन गंगास्नान,
तुम्हारी वाणी में कल्याणि, त्रिवेणी की लहरों का गान ।
- पल्लव

---

1. ग्राम्या
2. विश्वनाथ : साहित्य दर्पण ।

ग॰ तुम ने अधरों पर धरे अधर, मैंने कोमल वपु भरा गोद,
था आत्म समर्पण सरल, मधुर, मिल गये सहज मारुतामोद ।
- युगांत

घ॰ चौंक पड़ी युवती, चकित चितवन निज चारों ओर फेर
हेर प्यारे को सेज पास, नम्र मुखी हंसी खिली, खेल रंग, प्यारे संग ।
- निराला -"जुही की कली"

नारी-सौन्दर्य चित्रण में मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अत्यधिक उत्कर्ष दिखाया है । नारी के बाह्य तथा आन्तरिक सुषमा का अभिराम चित्रण करके ये कवि पाठकों के हृदय में लब्धप्रतिष्ठ हो गये ।

1॰ रूप

कुमारन आशान ने नारी-रूप सौन्दर्य चित्रण में अनुपम कौशल का परिचय दिया । आशान ने अपने पूर्व कवियों से भिन्न मार्ग पर चलते हुए नारी सौन्दर्य के उदात्त रूप का मनोमुग्धकारी चित्रण किया है । प्रियदर्शन केलिए उत्सुक आशान की एक नायिका का चित्र देखिए -

अनुपमणिमिन्नु उन्नतम्यम
तनु तेभिमाार्नु वेभिनकु भ्रिमिमवाल,
घन मनकूट घेटि‿‿कुलानुस
कनकशलाक कणके कोमलांगि ।
विरलमणि सुकांत पूण्टुकोसु
परिहितनील नवाम्बराभकोण्टुस

परिगतकुसुमकान्तमुत्तमाम्बोनि
स्फुरितपराग मनोहरी वरांगी[1] ।

भावार्थ है, शीघ्र ही वह अपनी सहज सुन्दर काया को सजाकर निकली । वह आग में तपी सोने की शलाका के समान शोभित थी । अमूल्य रत्नों, सुमनों और अभिनव नील परिधान से अलंकृत वह सुकुमारी परमाणु-पराग से भरे वसंत के चरम विकास के समान दृष्टिगत हुई ।

यद्यपि 'कामायनी' की श्रद्धा के समान "सीता" का यह रूप चित्रण भव्य तथा पूर्ण नहीं है तथापि ऐसा प्रतीत होता है कि नारी-सौन्दर्य की कल्पना में दोनों कवियों में समानता है । "प्रसाद" ने बिजली का फूल, रचित परमाणु पराग शरीर नील परिधान बीच सुकुमार इत्यादि शब्दों में नारी-सौन्दर्य का जैसा चित्रण किया है, बहुत कुछ वैसा चित्रण, "आग में तपी स्वर्ण शलाका, नील परिधान से अलंकृत, परमाणु पराग से भरे वसन्त का चरम विकास इत्यादि शब्दों में आशान ने भी किया है ।

प्राचीन नख-शिख वर्णन से प्रभावित होकर आशान ने नारी का जो रूपांकन किया है, वह इस प्रकार है -

स्वर्णाभयार्न्नुम् वेलुत्तुम तुटुत्तुम -
योन्नुमल्ल तन्मकेशम् पूरवाकुम
वर्णमकुलमङ्गलम् विग्रिहम
पूर्णेन्दु बिंबसमाने विलसुन्नु ।

---

1. कुमारनाशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ. 180

सीमन्तरेखयुडु कीरिडमारर्वयुम -
मोमक्कुलमिर चिन्तिय मैदिट्टयुम ।

:   :

चारुमिन्नीर मकर पोल चुवन्नुम -
न्नारोमलाममेयुम कपोलङ्ङलुम
नीण्टु पोडिड कमत्ताल्समोट्टटु -
काण्टु कृमिञ्ञ कृत्तुन्नोल्लासयुम
वेन्तमिट पोलेत्तुट्टुत्तु मिन्नुत्तलि -
चन्दित्तल वेत्वेट्टचुण्डम्पुटङ्ङलुम
कोर्त्तु कर्तुकवच्चुल्लोर मुत्तुकल -
क्कार्त्ते मलङ्ङुम वेर दन्तनिरकलुम
कोमोरोम्नुमीकणम्मुञ्ञिम -
मृग कलर्न्नु शोभिक्कुन्नु - - -[1]

भावार्थ है, उन स्त्रियों के शुभ, स्वर्णिम तथा अरुण सुन्दर मुख-कमल शीशे में प्रतिबिम्बित चन्द्रमा के समान शोभित हैं। माँग के नीचे दोनों ओर सुन्दर अलकों से सज्जित ललाट है। एक वंकिम लघु धनुष के समान शोभित होनेवाली भ्रु - रेखायें हैं। कपोल, गुलाब के फूल के समान अरुण और अभिराम है। सुन्दर और लम्बी नासिका है। पल्लवों की भाँति अरुण सुन्दर अधरपुट हैं। दान्त सुन्दर मोतियों को लजानेवाले हैं। इस प्रकार एक-एक अंग अकृत्रिम कान्ति से प्रशोभित है।

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ.337 - 338

आशान ने अपनी अंतिम काव्य कृति "करुणा" में वेश्या वासवदत्ता के अत्यंत मादक सौन्दर्य का मोहक वर्णन किया है । नारी का सौन्दर्य निम्नलिखित अवतरण में चित्रित है -

मसृण शिलासमासीनन वरिञ्जवाळर्पीत्तन पुष्प
विसृमरसुरभिव्यामुग्धामित्तन,
कमोलिनीगुम्म कर्पूरमार्न्नुम विटरात्त
मुल्लमालमिन्नुम कुन्तलकिरवार्मुकिल
वोट्टकोणुमाळमसिन्निटियलमप्रामद -
पोट्टियन्न मुखवन्धन स्फुरिक्कुमाळम
कञ्जबाणन तन्टे पट्टम केट्टिय राञ्जिमोलोळ
मंजुमाञ्जुळियिरिक्कुन्नु मतिमोहिनी ।

x x

इट्टुर्न्नमकरत्तुमिन्नुत्तुळ्ळल मदजलम
पोटियुम मोहननेत्रम, प्रकृतिलोलम,
चिट्ञ्ञु मण्डनिलक्कुन्नुचिटिक्कुनीर तिलङ्ङुम
स्फटिकक्कुण्डयिलिट्ट परममीन्पोले ।
स्फुटे स्फुरिक्कुमधरपल्लवकल्लाप
मट्वोलमेत्तुम ञात्तिल धवलरत्नव
विलङ्ङुन्नु माणिक्यमायवलवसिक्कुम रागमलान
वेनियिलङ्ङने धनीभावक्कमपोले ।

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकळ - दूसरा भाग - पृ.268-269

भावार्थ है, कोमल आसन पर सुमनों से भरे उपधान पर वह बैठी है। उसके कानों में रत्न खचित कर्णाभरण है। कलियों की माला से सजाये हुए बादल जैसे बालों के मध्य, कस्तूरी तिलक से युक्त उसका चन्द्रवदन शोभित है। कामदेव की पत्नी के समान वह सुन्दरी विराजमान है। काली पलकों के अन्दर, यौवन के मदजल से भरे सहज सुन्दर नयन जलभरी शीशे की बोतल में पड़े मीन के समान दिखाई पड़ते हैं। उसके नासाभरण-नथनी में जो शुभ्र रत्न अरुण अधरों की समीपता से अरुणाय माणिक्य सा शोभित है और ऐसा प्रतीत होता है कि वह - अरुणाय माणिक्य-सुन्दरी के उच्छ्वसित प्रेमानुभूति का घनीभूत रूप है।

वैभव और विलासिता की पृष्ठभूमि में नारी का जो रूप - चित्रण किया गया है वह उसके बाह्य सौन्दर्य के साथ आन्तरिक भावों को भी व्यक्त करता है। उल्लूर "पिंगला" नामक अपने खण्ड काव्य में नायिका पिंगला का चित्रण करके कहते हैं -

अम्पणियम्पेण कौटिक्केतुम् वेल्वानुम
कम्पुलक्कुरिम्बन पातियोक्कम[1]।

भाव है, उस ललना को किसी भी विश्व को जीतने के लिए अपने नेत्र-रूपी तीव्र अस्त्र का अर्द्ध भाग ही काफी है।

सामान्य रूप से इतना कह कर संसार को जीतने में समर्थ पिंगला के विभवों का परिचय कवि आगे दे रहे हैं। देखिए उस नायिका का रूप कितना मनोमुग्धकारी है।

---

1. उल्लूरिन्टे पद्यकृतिकल - पहला भाग - पृ.750

आमीलक्कारोमिप्पूवणिकन्दलक्के-
ट्टा मित्यवम्भुरमास्यबिम्बह,
आम्बान्तु पोट्टणित्तुमेट्टित्तंगलक्कीट,
आमास्यलोलमाम चिम्मिलवम्मि
आ मीम्टिमोट्टट मय्यीणक्कम्मिम्प
आक्कटक्कम्मुनक्कल्लमोट्टम,
आत्तुटुप्पेरिम मास्सिलरपूंक्कविल
आक्कम्मलवाित्तम कर्णभारम
आ पविष्प्पोलित्तेनवीरिवायमलर
आमुल्लमोट्टिलदन्तपंक्ति - - -

भावार्थ है, उसका केश-भार नीले बादल के समान है । उसका मुखकमल अत्यंत शोभापूर्ण है, उस का बिन्दी लगाया हुआ माथा चांद जैसा लगता है । उसकी आँखें लंबी हैं । वह टेढी दृष्टि से देखती है । उसके गाल अत्यंत आकर्षक हैं । उस के कर्णों पर कर्णाभूषण लगाया हुआ है । उसका मुँह पवल के समान मनोहर है । उसके दान्त सुशोभित हैं ।

यही नहीं कामिनी के बाह्य रूप में जो जो आकर्षण है वह सभी कवि अत्यधिक मनोयोग से वर्णन करके सुनाते हैं ।

---

1. उण्णुनिम्टे सन्देशम - पहला भाग - पृ.75।

नारी सौन्दर्य चित्रण में कौमुदा सिद्धहस्त हैं। यौवन के मादकत्व भरे एक युवती का चित्रण कितना रोमांचकारी है। देखिए -

मारस्तु सामरमोदिट्टट यौवन -
मायिक माहेन्द्रजालम्,
तलकक्मायुर्त्तिलम वैश्यम्मिलकोड
पोन्कसविद्टतुपोले
उल्लाहलौसदावल्लवायो -
ल्लसवदायिनियायी।

यह एक इन्द्रजाल सा लगता है कि यौवन पाकर "वत्सला" नामक उस बालिका के छाती पर कमल की कली सी दीख पड़ती है। यह उनके सौन्दर्य में चार चाँद लगा देती है। उन्मीमरी वह बाला लोगों केलिए उत्सव दायिनी सी हो गयी।

"रमणन" काव्य की नायिका "चन्द्रिका" के लावण्य का वर्णन कवि कितने मनोयोग से करते हैं। देखिए -

अनुपदमनुपदमतिमृदुवा -
मालोल शिंजितम वीचिवीचि
मदभरतरंगितमुलयिल
मान्तनिरपुष्पद्दुमारिवार्त्ति

---

1. कौमुदा कृतिकल - पहला भाग - पृ.297

मञ्जुकौशेतरोनिरञ्जुनिरकुचिकल,
मालती मालिक चेर्त्तु चुटि,
वलरोलिसरिवलयणिञ्ञकैयिल
वासन्तपूंगलिक्केन्दुमायि,
पविऴच्चे चोटित्तलिरकम्पोरोमल -
प्पुनिलाप्पुंचिरि वेल्लवीशि,
वन्नलमिलनञ्ञ्ञि कावसिक्कुम्
वासन्तदेवतयेन्नपोले ।

आराध्य है, अत्यधिक शोभा को फैलाती हुई चलनेवाली उस के मदभरे शरीर में सुन्दर रेशम की साड़ी शोभित है । उसके मनोहर केश में मालती की माला है । सुन्दर कंगन लगाये हुए उसके हाथों में फूलों का गुच्छा है । उसके पल्लव सदृश ओठों पर मन्द मुस्कान है । इस वनस्थली में रहनेवाली वह अपने सौन्दर्यातिरेक से वसन्त की देवता-सी लगती है ।

2. सज्जा -

मलयालम के रोमान्टिक कवियों ने सज्जा विधान का अत्यंत आकर्षक तथा आधुनिक चित्र प्रस्तुत किया है । यह सौन्दर्य दर्शन में उनकी अपार निपुणता का परिचायक है । वस्त्र, अलंकार, अनुलेपन इन सभी प्रसाधनों का भी मनोयोगपूर्ण तथा चित्ताकर्षक वर्णन इन कवियों ने प्रस्तुत किया है ।

---

1. चंपुषा कृतिकल - पहला भाग - पृ. 135

वस्त्र

प्राय: सभी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने वस्त्र चयन का वर्णन किया है जो उनके सौन्दर्य - बोध का परिचायक है । दो - एक उदाहरण देखिए -

अक्कटलप्पूम्पट्टरयक्कणिंवोल,
अवलवक्षोजभरम् वहिप्पवल ।[1]

यहाँ महाकवि उल्लूर इस धरती को एक नारी के रूप में चित्रण करते हुए उसके शरीर के वस्त्र की ओर संकेत करके कहते हैं कि समुद्र की लहरें ही उसके कमर में साड़ी बन कर शोभित है ।

अलंकार

नायिकाओं के सौन्दर्यवर्धन में सहायक अलंकारों का प्रयोग मलयालम कवियों ने भी पर्याप्त मात्रा में किया है । यथा -

बामरमाणिक्यमोरोरो हीरक -
माणिक्य भूषकल चार्तिक्कार्त्ति ।[2]

---

1. उल्लूरिन्टे पद्यकृतिकल - द्वितीय भाग - पृ॰156
2. वही प्रथम भाग - पृ॰258

महाकवि उण्णूर अपनी नायिका पिंगला का सौन्दर्यवर्णन करते हुए कहते हैं कि वह अपने शरीर में नखशिखान्त हीरों और मोतियों का आभूषण पहनती है।

ख. आस्तुटुप्पोरिन मांसलिरपूंकविल -
ताक्कम्मनवार्त्तिसनकर्णमारम् ।[1]

अर्थात् उसके (पिंगला) हृष्ट-पुष्ट गात्र अत्यंत मनोहर हैं। उसके कानों में कर्णावतंस लगाया हुआ है।

अनुलेपन

सौन्दर्यवर्धन में विविध प्रकार के सौन्दर्यवर्धक वस्तुओं की उपयोगिता व महत्त्व मलयालम के कवियों ने भलीभांति समझा है। अतः उन्होंने इनका खुलकर प्रयोग किया है। यथा -

क. आटयणि,पलरमाल, पद्मरागमिक्कोण्टु
मोटियेतिनोन्निनोन्नु मुद्दुम वलर्त्ति ।
वाक्लावुम तन्नुटय माणिक्यमल मक्कुन्नु,
मेकपोलिलम कल्पवल्लरिपोले ।[2]

---

1. उण्णूरिन्टे पद्यकृतिकल - ि प्रथम भाग पृ. 75।
2. वही द्वितीय भाग पृ. 176

वह सुन्दरी अपने शरीर में वस्त्र, माला और अंगराग आदि से अपने सौन्दर्य को और भी बढ़ाकर मेह में कल्पलता के समान अपने महल में निवास करती है ।

ख. मुखस्तुश्वेतपाउडर,
मुक्तिकस्येन चोन्नूकण्ठ,
चुकष्पुद्दान चुटिम[1]
पुरदटीटिमधायम् ।

अर्थात् – उसके मुख पर सफेद पौडर डाला है । वह सोने का चश्मा लगायी है । उसके ओठों पर लाल रंग का लिपस्टिक लगाया हुआ है ।

ग. कारवलरकुन्तलिलतारम्भृदुम्[2] –
प्पारकचन्द्रबिम्बाननयाल ।

भाव है, चन्द्र के समान मनोहर मुखवाली वह पिंगला ने अपने सुन्दर केशभार पर कमल लगायी है ।

3. <u>अनुभाव या शारीरिक चेष्टायें</u>

सुन्दर ललनाओं की शारीरिक चेष्टाओं में भी विशेष सौन्दर्य दर्शाया गया है । ये चेष्टायें भी वस्तुत: चित्ताकर्षक है । अत: कवियों ने इनका मनोयोगपूर्ण वर्णन प्रस्तुत किया है ।

---

1. उण्णुनिरिण्टे पद्मतिलकम – द्वितीय भाग – पृ. 63
2. वही प्रथम भाग – पृ. 745

क. मणवाळनवन्नुवेन्नाय् मल्लाटिक्कोण्टाळ,
भावभमारि हावमायि हार्वमारि[1] हेलयायि,
पूवळमेनि पुळकत्ताल भूषितयायि ।

अर्थात् - अपने प्रिय का आगमन सुनकर उस रमणी का हावभाव बदल गया । उसका मनोहर शरीर पुलकित हुआ ।

ख. कण्मुनज्जालम वीशि
काण्मोरे कुडुक्कयुम्
तन मणाळन तन मेय्युयल
मेय् चारि निन्नीटुन्नु[2] ।

अर्थात् - देखनेवालों पर वह अपनी आँखों से जाल बिछाकर उनमें आधि पैदा करके अपने दूल्हा के शरीर से शरीर मिलाकर खड़ी रहती है ।

निष्कर्ष

नारी के सौन्दर्यांकन में हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने समान सफलता प्राप्त की है । नारी के भव्य तथा मादक दोनों रूप इन कवियों द्वारा चित्रित है । दोनों भाषाओं के कवियों ने नारी के

---

1. उल्लूरिन्टे पद्यकृतिकल - द्वितीय भाग - पृ. 176
2. वही पृ. 632

बाह्य तथा आन्तरिक सौन्दर्य पर प्रकाश डाला है । नारी के भव्य शील रूप के अंकन में 'प्रसाद' सब से अधिक सफल है । उन्होंने कामायनी में श्रद्धा के चित्रण द्वारा विश्व की करुण कामना-मूर्ति नारी का अभिराम रूप प्रस्तुत किया है । सौन्दर्य और शील का संगम है श्रद्धा । नारी के शील रूप के चित्रण में 'प्रसादजी' की जैसी पूर्णता मलयालम के कवियों में नहीं है । नारी के शारीरिक सौन्दर्य चित्रण में हिन्दी और मलयालम के कवि समान रूप से सफल लगते हैं ।

पुरुष - सौन्दर्य

साहित्य में नारी - सौन्दर्य वर्णन की तुलना में पुरुष सौन्दर्य - वर्णन बहुत कम मिलता है किन्तु पुरुष सौन्दर्य वर्णन की उपेक्षा कभी नहीं हुई है । वाल्मीकि, कालिदास, तुलसी आदि महाकवियों ने पुरुष-सौन्दर्य का वर्णन भी पूर्ण मनोयोग के साथ किया है । स्वच्छंदतावादी काव्य में भी पुरुष- सौन्दर्य के वर्णन यत्र-तत्र मिलते हैं, जिनसे इन कवियों की सौन्दर्य भावना की व्यापकता का परिचय मिलता है । पुरुष सौन्दर्य का एक सुन्दर उदाहरण "कामायनी" में मिलता है । नायक मनु का सौन्दर्य वर्णन देखिए -

अवयव की दृढ़ मांस-पेशियाँ ऊर्जस्वित था वीर्य अपार,
स्फीतशिराएं, स्वस्थ रक्त का होता था जिनमें संचार,
चिंता का तट वहन हो रहा, पौरुष जिस में ओत-प्रोत,
उधर उपेक्षामय यौवन का बहता भीतर मधुमय स्रोत ।[1]

---

1. कामायनी - चिन्ता सर्ग ।

यहाँ मनु के शारीरिक सौन्दर्य का प्रभावपूर्ण चित्र मिलता है। कविवर पंत ने अपने काव्य विकास के द्वितीय चरण में मानव सौन्दर्य की ओर अधिक रुचि प्रदर्शित की। मानव सौन्दर्य के दोनों रूपों-स्त्री और पुरुष सौन्दर्य-ने कवि को अत्यधिक आकृष्ट किया। कवि की सौन्दर्य दृष्टि अत्यंत व्यापक है। मानव सौन्दर्य का यह आदर्श रूप कवि ने कितनी गंभीरता के साथ प्रस्तुत किया है -

धावित कृश नील शिराओं में मदिरा से मादक रुधिर धार,
आँखें हैं दो लावण्यलोक स्वर में निर्झर संगीत सार।
पृथु उर उरोज ज्यों सर, सरोज, दृढ बाहु प्रलम्ब प्रेम बंधन,
पीनोरु स्कन्ध जीवन तरु के कर, पद अँगुलि नख शिख शोभन।[1]

पुरुष सौन्दर्य-चित्रण में 'निराला' भी अत्यंत कुशल है। उन्होंने श्रीराम का मनोरम रूपांकन किया है। यथा -

रघुनायक आगे अवनी पर नवनीत चरण,
श्लथ धनु-गुण है, कटि-बन्ध स्रस्त-तूणीर-धरण,
दृढ जटा-मुकुट हो विपर्यस्त प्रतिलट से खुल
फैला पृष्ठ पर, बाहुओं पर, वक्ष पर विपुल
उतरा ज्यों दुर्गम पर्वत पर नैशान्धकार
चमकती दूर ताराएं ज्यों हो कहीं पार।[2]

---

1. युगान्त - मानव नामक कविता
2. निराला- अपरा - पृ.44

उपर्युक्त पंक्तियों में "निराला" ने अद्भुत कुशलता के साथ दीर्घकाय रामचन्द्र के रूप के साथ-साथ उनकी मनोवृत्तियों की ओर भी संकेत किया है ।

हिन्दी की भाँति मलयालम में भी नारी सौन्दर्यचित्रण की तुलना में पुरुष सौन्दर्य चित्रण कम मिलता है । उसकी उपेक्षा कहीं नहीं हुई । मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों में कुमारन आशान ही पुरुष सौन्दर्य का सविस्तार चित्रण किया है । उनका पुरुष सौन्दर्य-चित्रण अत्यन्त मार्मिक हुआ है। आशान के "नलिनी", "चण्डाल भिक्षुकी", "दुरवस्था", "करुणा" जैसे काव्यों में पुरुष सौन्दर्य का मर्मस्पर्शी चित्रण दृष्टिगत होते हैं । "नलिनी" में नायक तरुण सन्यासी का चित्र देखिए -

उल्लसिच्चु युवयोगियेकनुल -
फुल्ल बालरविपोले कान्तिमान्
ओति, नीण्ट जटयुम्‌ मरवुरियुम्‌
भूतियुम्‌ चिर तपस्वियेन्नतुम्‌
द्योतमानमुटल नग्नमोट्टु शी-
तातपादिकलवन् जयिच्चतुम्‌
पारिलिल्ल भयमेन्नु, मैत्रियु -
ण्टारिलुम्‌ करुणयेन्नु, मैतिनुम्‌ -
पोरुमेन्नुमरुली प्रसन्नमाय
धीरमाय मुखकान्तियालवन्[1] ।

1\. कुमारनाशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ.११

अर्थात् प्रातःकाल में युवा सन्यासी प्रफुल्ल बाल रवि के समान शोभित था । उस की लम्बी जटा, मद, भस्म लिपटी अर्धनग्न और दीप्ति पूर्ण काया यह व्यक्त कर देती थी कि वह चिरकाल से तापस है । अपने मुख की तेजस्वी मुद्रा से वह यह कहता था कि मैं किसी से नहीं डरता, प्रत्युत सब पर करुणा करता हूँ । यहाँ तरुण सन्यासी का चित्र अत्यधिक सजीव हो उठा है । इस रूप-चित्रण में आशान ने बड़ी दक्षता का परिचय दिया है ।

उस तरुण सन्यासी के प्रशान्त सुन्दर चित्र के साथ एक निष्कलंक स्वस्थ चमार तरुण का अकृत्रिम रूप-चित्रण देखिए -

मारटित्तम्पुट्टत्तु वन्निला कैरिय
करोडक्कारत्तिनिलुम्मकायम्
मैयु तिरिञ्ञु दृढावयवङ्ङला
र्न्नजटियोल मेकरमायी,
अंजनमाय मिथि - कलिपन्नोमल
कृजित वार चिकुर कलम्बु
स्वच्छमल्लेंगिलुं शालिनमां चेल
कच्चमुडोम्पाबरमरच्चु
कम्निन्टे कौपिल कटञ्ञुतीर्ण्णाडु
लोम्पायिण्णिक्क मिन्नुडिड निरतुप्
ओमनप्पाव कणक्कनु मन्नोड
कोमल विग्रहमायिडन्नु ।

---

1. कुमारनाशान्टे पद्यकृतिकल - दूसरा भाग - पृ.191-92

भावार्थ है, लो । कुटी के प्रांगण में घनश्याम के रंग का एक रूप-व्यक्ति-आ पहुँचा । विशाल वक्षस्थल, सुदृढ अवयव, पाँच फीट ऊँचा कद, सुन्दर आँखें, घुंघराले बाल अत्यन्त शुभ्र न होने पर भी प्रक्षालित कछनी से आवृत कमर, भैंसे के सींग से गढे हुए अंगों से युक्त वह एक सुन्दर मूर्ति के समान भासित होता है । यहाँ भी आशान की वर्णन कुशलता व्यक्त होती है ।

आशान की भाँति महाकवि वल्लत्तोल ने भी पुरुष सौन्दर्य का अभिराम चित्रण किया है । "ओरु युवाविन्टे आत्मसंयमम्" {एक युवा का आत्मसंयम} नामक कविता में पुरुष सौन्दर्य का यह वर्णन देखिए -

आरहो गात्रत्तिल निन्नोल्ला' सौन्दर्य
पूर' पोऴिक्कुमीप्पुरुषेन्द्रन्
धीरप्रशान्तमायरम्यमा' तन्मुख
सारसत्तिंगले त्तेजस्सिनाल
भारत्तु पूणु नूलिल्लेंगिलक्कुट्टियु -
मारण्माणिक्कुन्नाकुं तोन्नुम् ।[1]

अर्थात् अपने शरीर से सौन्दर्य को प्रसारित करनेवाला यह पुरुष-श्रेष्ठ कौन है ? अपने छाती पर जनेऊ के न होने पर भी धीर प्रशान्त एवं मनोहर मुख कमल के तेज से देखने में वह ब्राह्मण-सा लगता है । कविवर कोंगुषा ने भी पुरुष सौन्दर्य वर्णन में दक्षता का परिचय दिया है । "रमणन्" नामक अपनी प्रसिद्ध कविता में नायक रमणन् का यह चित्रण देखिए -

---

1. वल्लत्तोलिन्टे पद्यकृतिकल - दूसरा भाग - पृ.53

ओरु पूत्त मरत्तिन्टे तणलत्तुविरिट्टल
कोमलत्तणुप्पल विरिच्चिट्टल
कमनीयमायोरु कवितपोले[1] ।

अर्थात् एक फूले हुए पेड़ की छाया में बिछी हुई रेशम पर सोनेवाला रमणन् देखने में एक सुन्दर कविता सी लगती है ।

एक मनोहर कविता के समान रमणन् का रूप भी अत्यंत चित्ताकर्षक था ।

निष्कर्ष

नारी-सौन्दर्य वर्णन की तुलना में पुरुष सौन्दर्य वर्णन परिमाण में कम होने पर भी हिन्दी और मलयालम के कवियों ने इसका जीता-जागता चित्र प्रस्तुत किया है । पुरुष सौन्दर्य वर्णन में भी इन कवियों ने अत्यंत मनोयोग प्रदर्शित किया है । किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि हिन्दी कवियों की अपेक्षा मलयालम के कवियों ने इस क्षेत्र में अधिक उत्कर्ष दिखाया । विशेषत: आशान की कविता में ही इसका स्पष्ट प्रमाण मिलता है । पुरुष - सौन्दर्य चित्रण में आशान की विशेष रुचि और कुशलता उल्लेखनीय है । हिन्दी में 'प्रसाद' ने पुरुष-सौन्दर्य का चित्ताकर्षक वर्णन प्रस्तुत किया है । किन्तु आशान के पुरुष सौन्दर्य चित्रों में 'प्रसाद' की अपेक्षा अधिक वैविध्य है ।

---

1. संपूर्ण कृतिकल - पहला भाग -

ख· प्रकृतिक सौन्दर्य

स्वच्छन्दतावादी कवि और प्रकृति

स्वच्छन्दतावादी कवियों की यह विशेषता है कि वे प्रकृति के साथ आत्मीयता का अनुभव कर सके। यही कारण है कि प्रकृति का सम्पूर्ण तथा सम्मोहक चित्रण करने में वे अत्यंत सफल निकले। स्वच्छन्दतावादी कवियों का विश्वास है कि प्रकृति मनुष्य की भावनाओं को परिष्कृत और संवर्द्धित करती है। यह उसके प्राणों को उदात्त बनाती है। अतः इन कवियों में आनन्दोल्लास से संचालित सप्राण प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित करने की आवेग मुखर आकांक्षा स्पष्ट परिलक्षित है। वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी काव्य का एक महत्वपूर्ण उपादान है प्रकृति। स्वच्छन्दतावादी कवि यह भली - भांति जानते हैं कि जीवन केलिए उपयोगी स्थूल सामग्रियों से लेकर सौन्दर्य-तृष्णा की सूक्ष्मतम तृप्ति केलिए आवश्यक उपकरणों का सनातन स्रोत प्रकृति ही है। ऐसी महत्वशालिनी प्रकृति की उपेक्षा करके चलनेवाला काव्य जीवन-रस की लालिमा स्पन्दन व चहक से शून्य होकर पद्य, सूक्ति, सुभाषित, नीति कथन मात्र ही कहलाकर रह जायेगा।[1] वर्ड्सवर्थ ने अपने प्रसिद्ध कविता संग्रह (Lyrical Ballads) की भूमिका में दृश्य चित्रण की क्षमता को काव्य-सृजन की आवश्यक शक्तियों में परिगणित किया है।[2] आलोचकों ने इस प्रकार की कविता को प्रकृति-विषयक कविता के वर्ग में उसके एक विभाग या प्रकार के रूप में स्वीकृत किया है।[3]

1· डॉ· रामेश्वरलाल खण्डेलवाल : जयशंकर प्रसाद : वस्तु और कला - पृ·248

2. The powers requisite for the production of poetry are: first, those of observation and description - i.e. the ability to observe with accuracy things as they are in themselves; and with fidelity to describe them, unmodified by any passion or feeling existing in the mind of the describer: whether the things depicted be actually present to the senses, or have a place only in memory - quoted from George Saintsburys
   - Loci Critici - p.301

3. The poetry of set description in which the poet undertaken to with his pen what the landscape painter does with his brush -
   - W.H. Hudson : An Introduction to the study of Literature p.327

रोमान्टिक कवि प्रकृति से अत्यधिक आकृष्ट हुए । वे प्राय: प्रकृति के साथ एक मैत्री का भाव रखते हैं । उनकी रचनाओं में प्रकृति जड नहीं, चेतना से संयुक्त है । कहा जा सकता है कि प्रकृति-प्रेमी रोमान्टिक कवियों की सांस में प्रकृति समासीन है ।

स्वच्छन्दतावादी कवियों ने ही प्रकृति विषयक रति के क्षेत्र को संभाला और इस प्रकार प्रकृति के नानाविध प्रयोग से एक विशेष उत्कर्ष का आरंभ हुआ । काव्य में प्रकृति प्राय: निम्न लिखित रूपों में वर्णित होती हैं -

1. आलम्बन रूप में
2. उद्दीपन रूप में
3. अलंकार और प्रतीक के रूप में
4. मानवीकरण के रूप में
5. उपदेश और नीति के माध्यम के रूप में
6. परम तत्व के आभास के रूप में ।

अब हम प्रकृति-चित्रण के इन प्रमुख रूपों के आधार पर हिन्दी में मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों के प्रकृति वर्णन में निहित सौन्दर्य की परख करेंगे ।

1. आलम्बन रूप में

आलम्बन रूप में प्रकृति कवि केलिए साधन न बनकर साध्य बन जाती है । कवि प्रकृति का निरीक्षण करता है, उसके सूक्ष्मतम तत्वों के प्रति आकर्षित होती है । उसका मन प्रकृति की प्रत्येक वस्तु में रमता है । उसके प्रकृति चित्रण की यह विशेषता होती है कि पाठक को प्रकृति के प्रत्यक्ष दर्शन का-सा आनंद

प्राप्त होता है ।

हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने आलम्बन के रूप में प्रकृति का सुन्दर वर्णन किया है । बाह्य प्रकृति का सांगोपांग वर्णन "प्रसाद" में बड़ा ही मनोरम है । विशुद्ध आलम्बन रूप में वर्णन इतना चित्रात्मक है कि वर्ण्य-विषय का रूप सामने खड़ा हो जाता है । यथा,

ये डाल-डाल में मधुमय
मृदु मुकुल बने झालर से,
रस-भार प्रफुल्लसुमन सब
धीरे-धीरे से बरसे ।
हिम-खंड रश्मि-मंडित हो
मणि-दीप प्रकाश दिखाता,
जिन से समीर टकराकर
अतिमधुर मृदंग बजाता ।[1]

अथवा

छूने को अम्बर मचली सी
बढ़ी जा रही सतत ऊंचाई,
विक्षत उसके अंग प्रगट थे
भीषण खड्ड भयकरी खाई ।
रविकर हिम-खंडों पर पड़कर
हिमकर कितने नये बनाता,
द्रुततर चक्कर काट पवन भी
फिर से वहीं लौट आ जाता ।[2]

---

1. कामायनी - आनन्द सर्ग
2. वही - रहस्य सर्ग

जिस प्रकार 'कुमारसंभव' का हिमालय वर्णन संस्कृत साहित्य में अत्यधिक महत्व रखता है, उसी प्रकार "कामायनी" का हिमालय वर्णन हिन्दी साहित्य की एक अमूल्य निधि बन गयी है। प्रकृति के सौन्दर्य चित्रांकन करते हुए हिन्दी के स्वच्छन्दतावादियों ने उसके कठोर व कोमल दोनों रूपों का आकर्षक वर्णन प्रस्तुत किया है। प्रसाद द्वारा चित्रित यह प्रयलकाल के समुद्र का वर्णन कितना रोमांचक है-

दिग्दाहों से धूम उठे, या जलधर उठे क्षितिज तट के।
सघन गगन में भीम प्रकंपन झंझा के चलते झटके।
उधर गरजती सिन्धुलहरियाँ कुटिलकाल के जालों सी,
चली आरहीं फेन उगलती फन फैलाये व्यालों सी।
सबल तरंगाघातों से उस क्रुद्ध सिन्धु के, विचलित सी
व्यस्तमहाकच्छप सीधरणी, ऊभ-चूभ थी विकलित सी।
बढ़ने लगा विलास वेगसा वह अति भैरव जल संघात,
तरल तिमिर से प्रलय पवन का होता आलिंगन प्रतिघात[1]।

प्रकृति का यह चित्र कितना भयावह है। प्रकृति के कोमल रूप चित्रण भी सुलभ हैं। यथा

फिर परियों के बच्चों से हम सुभग सीप के पंख पसार,
समुद्र पैरते शुचि - ज्योत्स्ना में पकड़ इन्दु के कर सुकुमार।
दमयन्ती सी कुमुद कला के रजत करों में फिर अभिराम
स्वर्ण-हंस से हम मृदु-ध्वनि कर, कहते प्रियसंदेश ललाम[2]।

---

1. प्रसाद - कामायनी - चिन्ता सर्ग
2. पंत - पल्लव पृ.62

यहाँ बादल के कोमल रूप का चित्रण अत्यंत सम्मोहक है ।

प्रकृति के वस्तु-व्यापारोंके चित्रण में स्वच्छन्दतावादी कवियों के प्रकृति प्रेम तथा सूक्ष्म निरीक्षण दृष्टि का पता चलता है । आलम्बन रूप के अन्तर्गत वर्णित प्रकृति के निम्न लिखित भेद उल्लेखनीय हैं -

1. गति - विधि
2. वर्ण - भावना
3. नाद - व्यंजना
4. गन्ध संवेदना
5. स्पर्श - संवेदना

1. गति-विधि

कवि प्रकृति की ओर देखता है । वह प्रकृति से प्रेरणा ग्रहण करता है । स्वच्छन्दतावादी तो प्रकृति के साथ तादात्म्य प्राप्त कर सके । कवि प्रकृति के साथ तादात्म्य प्राप्त कर सके । कवि प्रकृति के पदार्थों को इतनी सूक्ष्मता से देखता है कि वह उसकी गति-विधि तक समझ लेने में समर्थ हो जाता है । कवियों के गति-विधि निरीक्षण के कुछ उदाहरण देखिए -

क. तरु शिखरों से वह स्वर्ण विहग उड़ गया,
खोल निज पंख सुभग,
किस गुहा-नीड में रे किस मग ।

- पंत-गंधवीथी

ख. झूम झूम मृदु गरज गरज कर घन घाटे
राग अमर ! अम्बर में भर निज रोर ।
- निराला : बादल राग

ग. धारा बह जाती, बिम्ब अटल ।
- कामायनी : दर्शन सर्ग

2. वर्ण - भावना

रंग सौन्दर्य को बढाने में एक हद तक सहायक होता है । अतः रंग-योजना में कवि अधिक ध्यान देता है । रंग-योजना से कवि की सूक्ष्म दृष्टि का भी परिचय मिलता है । वर्ण भावना का कुछ उदाहरण देखिए -

क. रुपहले, सुनहले आम्र-बौर, नीले पीले औ' ताम्र भौंर
- पंत : गुंजन, पृ.2

ख. नील परिधान बीच सुकुमार खुल रहा मृदुल अधखुला अंग,
खिला हो ज्यों बिजली का फूल मेघ-बन बीच गुलाबी रंग ।
- ~~गुलाबी रंग~~ कामायनी : श्रद्धा सर्ग

ग. और उस मुख पर वह मुस्क्यान ! रक्त किसलय पर ले विश्राम,
अरुण की एक किरण अम्लान अधिक अलसाई हो अभिराम !
- कामायनी : श्रद्धा सर्ग

रेखांकित स्थलों से कवियों की वर्ण - भावना का परिचय मिलता है ।

3. नाद - व्यंजना

कभी कभी कवि अपने वर्णित चित्र की सजीवता केलिए ग्रहीत स्थलों के अन्तर्गत सुनाई पडनेवाली ध्वनियों का अनुकरण करते दिखाई देते हैं। इसकेलिए कवि ऐसे शब्दों का चयन करते हैं, जिनके उच्चरित होने पर उन ध्वनियों की पूर्ण संवेदना भी उत्पन्न हो जाती है। यथा -

क. दिग्दाहों से धूम उठे, या जलधर उठे क्षितिज तट के।
सघन गगन में भीम प्रकंपन झंझा के चलते झटके।
- प्रसाद : कामायनी

यहाँ टवर्ग, तवर्ग सोष्म वर्ण तथा संयुक्त वर्णों के प्रयोग से मेघों की उमड-घुमड तथा झंझा के भीषण आघातों की अत्यंत सुन्दर व्यंजना देखने को मिलती है।

ख. मृदु मन्द मन्द, मन्थर मन्थर, लघु तरणि, हंसिनी सी सुंदर
तिर रही, खोल पालों के पर।
- पंत : गुंजन

यहाँ न,ण तथा स आदि अनुनासिक तथा संगीतात्मक वर्णों के प्रयोग से स्निग्ध जल प्रसार पर नाव के मृदु मन्थर गति से चलने की मनोहर व्यंजना देखने को मिलती है।

ग. पपीहों की वह पीन पुकार,
निर्झरों की भारी झर-झर,
झींगुरों की झीनी झनकार
घनों की गुरु गम्भीर घहर,
बिन्दुओं की छनती छनकार
दादुरों के वे दुहरे स्वर ।
- पंत - गंधवीथी

सूक्ष्म पर्यवेक्षण और मसृण शिल्पन से निर्मित गिरि पावस का यह वृत्यानुप्रास - मुखर नाद चित्र अत्यंत आकर्षक है ।

4. गंध - संवेदना

कविता में गंध की संवेदना उत्पन्न करने में भी कवि अपनी कुशलता दिखाते हैं । यथा -

क. जब शिरीष के सुमन गंध की मानभरी मधु ऋतु रातें ।
- कामायनी : स्वप्न सर्ग

ख. उड़ती भीनी तैलाक्त गंध ।
- सुमित्रानंदन पंत आधुनिक कवि, सम्मेलन संग्रह

5. स्पर्श-संवेदना

कविता के द्वारा स्पर्श की अनुभूति की संवेदना भी उत्पन्न की जा सकती है । यथा -

क. हेस्पर्शमलय के झिलमिल सा संज्ञा को और सुलाता है ।

- कामायनी : काम सर्ग

ख. धीर समीर परस से पुलकित विकल हो चला श्रांत शरीर ।

- कामायनी : आशा सर्ग

प्राकृतिक सौन्दर्य वर्णन में मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने हिन्दी कवियों की अपेक्षा अत्यधिक उत्कर्ष का परिचय दिया है । प्रकृति से इन कवियों ने एक प्रकार का तादात्म्य प्राप्त किया है । प्रकृति का इतना सांगोपांग, सजीव व मनोरम वर्णन अन्यत्र मिलना कठिन है । मलयालम के कवियों ने प्रकृति के प्रधान व अप्रधान सभी पदार्थों पर मनमोहक कविता करके अपनी कल्पना-शक्ति एवं वर्णन कुशलता का परिचय दिया है । प्रकृति के कोमल व कठोर दोनों रूपों का वर्णन इन कवियों ने बड़े मनोयोग से किया है । आलंबन रूप में आशान से चित्रित प्रकृति का कान्त कोमल रूप देखिए -

उल्लोलमामलयिल दूरे मुषंडिट्टुन्नु,
फुल्लोल सत्सुमगणम् मणमेकिट्टुन्नु
कल्लोलमान्नोरु क्यंजलिल निन्नु पोंडी
नल्लोरु चारु कुलिरकाट्टु मणञ्ञिट्टुन्नु ।[1]

आशान की कविता में प्रकृति का रौद्र रूप वर्णन भी पर्याप्त मिलता है । एक उदाहरण देखिए -

---

1. कु. आ. पद्यकृतिकल - दूसरा भाग - पृ.111

हम्स । भूमियुमाद्रिमिरयुमटवियु
मन्तरीक्षुमंबुराशियुम् कीषमेलाकिक
अखण्डसितल निम्नु मेदिनी चक्रतम्मे
तलकम्पम् तट्टिकम्मीट्टुमारस्युग्रमाय
अटिच्चु कोटुं काट्टु .... ।

अर्थात् भूमि, पर्वत, झील, समुद्र सब को उलट-पलट कर और पृथ्वी को तल से नीचे गिराकर नष्ट-भ्रष्ट करने की शक्ति के साथ भयंकर आंधी चली ।

प्रसंगानुसार चयन शब्दों से वर्णित प्रक्षुब्ध प्रकृति का यह चित्र अत्यंत प्रभाव शाली है ।

वल्लत्तोल ने भी प्रकृति का सांगोपांग वर्णन किया है । प्रकृति के गोद में पलने वाले पशु-पक्षी तक कवि के वर्णन का विषय बन गया है । एक कपोत की सुन्दरता पर मुग्ध होकर कवि कल्पना करते हैं -

मणिवल्नु पिषिञ्ञेटुत्त सत्ता -
मधके, मन्मकम्मकम्पुपोय नी
अविलंक्लायक सौकुमार्य
प्पुष्षन कोच्चुतरंगमे, पिरावे[2] ।

अर्थात् धनुक से समायागया सार रूपी सौन्दर्य, तु धीरे-धीरे कहीं दूर जा रहा है । सौन्दर्य-रूपी छोटी नदी का लहर, हे कपोत, तु मुझे दुख न दे ।

---

1. कु० आ० पद्यकृतिकल - दूसरा भाग - पृ०339
2. वल्लत्तोलिन्टे पद्यकृतिकल - दूसरा भाग - पृ०30

कवि की यह कल्पना अत्यंत मधुर है । प्रकृति के सौन्दर्य वर्णन में चंगंपुषा सबसे आगे हैं । चंगंपुषा को यदि प्रकृति का गायक कहें तो अत्युक्ति न होगी । उनकी कविता वस्तुत: प्रकृति की कविता है । प्रकृति की सुन्दरता की ओर कवि एकदम आकृष्ट होता है । यों तो सारे कवि प्रकृति का निरीक्षण और वर्णन करते हैं । दार्शनिक कवि प्रकृति से शिक्षा लेते हैं । परन्तु प्रकृति की सुषमा का चित्रण करनेवाले कवियों की संख्या ही सब से बड़ी है । चंगंपुषा की भी दृष्टि मुख्य रूप से सौन्दर्य-प्रेमी थी । केरल की प्राकृतिक सुन्दरता ने उन्हें अत्यंत मोहित कर लिया । इस में पश्चिमी रोमान्टिक कवियों के प्रभाव का भी योग है । फूलों से भरे बाग, स्वच्छ जल से पूर्ण सरिताएं, हरी भरी पहाड़ियां और नील जल के सागर ने उन पर जादू सा डाला था । इन दृश्यों का वर्णन करते करते कवि बड़े मजे में आगे बढ़ते जाते हैं । उनकी काव्यधारा इस प्रसंग पर बड़ी स्वच्छंद गति से चलती है । प्रकृति का मंगलगान उनकी प्रारंभिक कृति से अंतिम रचना तक में गूंजता है । उनकी वर्णित प्रकृति केरल की ही प्रकृति है । वे उसकी सुन्दरता में मस्त है और बार-बार अपनी पंक्तियों को दुहराते हैं । एक ही पृष्ठभूमि की प्रकृति का वर्णन कई रचनाओं में मिलता है[1] । एक उदाहरण देखिए -

नीलविण्णेप्पोटिच्चु निलक्कुम्
चेल जुमोरोरो कुन्नुकलुम्
पारप्पटर्प्पिलुटोत्तमोध्म
पाटियोषुकुन्न चोलकलुम्
पादपच्छवित्तलायुगिमुम
पाटिप्परक्कुम परवकलुम्
आलोलवायुविल मन्दमन्द -
माटिक्कुणुन्न वल्लिकलुम्,
आनन्दमानन्दम् । नामिरिक्कुम
कामनरंगमिनेत्र रम्यम्[2] ।

1• डा•एन•ई• विश्वनाथ अय्यर - आधुनिक हिन्दी काल तथा मलयालम काव्य पृ•252

2• चंगंपुषा कृतिकल - द्वितीय भाग - पृ•730

अर्थात्, नीलाकाश का स्पर्श करनेवाले ये मनोहर टीले, चट्टानों से उछल कूद कर बहनेवाले झरने, पेड़ों से इधर उधर गा-गा कर उड़नेवाली चिड़ियां, मन्दवायु में धीरे-धीरे झूमनेवाली लताएं, ये सब कितना आनन्दप्रद है । यह वनस्थली जहां हम बैठे हैं, कितना रमणीक है । वसंत ऋतु की प्रकृति का चित्र देखिए -

एविटेत्तिरिञ्ञोन्नु नोक्कियाले -
न्नविटेल्लाम् पूत्तमरङ्ङल मात्रम्
ओट कोञ्चु काट्टॅत्तानवन्नुपोयाल -
तुञ्ञुरेप्पूमऴयायि पिन्ने ।[1]

अर्थात्, जहां भी देखिए वहां फूले वृक्ष ही दिखाई पड़ते हैं । एक लघु पवन के आते ही क्या पुष्प-वृष्टि होने लगती है !

1. गति-विधि

स्वच्छन्दतावादी कवि प्रकृति से इतना प्रेम करते हैं कि प्रकृति में होनेवाली सूक्ष्म से सूक्ष्म गति विधियों को भी वे अत्यधिक तत्परता से निहारते हैं और उनके मनोमुग्धकारी वर्णन करते हैं । मलयालम में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं । देखिए -

क. वहिविनिविटेयेन्निलिञ्ञु नम्मे -
त्तेत्तेरेयीयटविक्कु तेक्कु मारि,
उड किसलय चामराख्याट्टिट -
त्तकमिर माटिविलिप्पूकाण्क तोष्पी ।[2]

---

1. जी. की. कृतिकल - प्रथम भाग - पृ. 113
2. कुमारनआशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ. 175

अर्थात् हे सखि देखो इस वन के दक्षिण में पेड़ों का कतार अपने मनोहर शाखाओं को हिलाते हुए हमें पुकार रहे हैं ।

ख. मिन्नुं तलत्तिल निन्नोमनप्पीलिकल
पिन्निल परत्ति मयिलुकलाटुन्नु ।

अर्थात्, चमकते स्थल पर खड़े होकर मोर अपने प्यारे पंखों को फैलाते हुए नाच रहे हैं ।

ग. तन्निरन्निर मृदुतालमेकियेवम्
कलकलमायतिमोहनम् वनत्तिल ।

अर्थात्, लघु पौधों ने ताल लगाया और उस वन स्थली में कल कल नाद ~~चारों~~ ~~ओर~~ मुखरित हुआ ।

2. वर्ण - भावना

रंग या वर्ण सौन्दर्य के उत्कर्ष में अत्यधिक सहायक है । अतः कवि रंग विधान में हमेशा दत्तचित्त रहते हैं । रंग-विधान में मलयालम के कवियों की कुशलता के दो एक उदाहरण देखिए -

क. पञ्च च्चेटिकलुम् पुल्लुकलुम् पूण्टु
मेच्चेमेकम्नोक्कुन्नुविलंगुन्नु ।[2]

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ.267
2. वही पृ.261

हरे भरे पौधों और तृणों से भरा-पूरा वह टीला अत्यंत प्रशोभित होता है ।

ख•   उज्ज्वलचुवन्न सिरकलविलंगुम्म
 वेल्लक्कलिर शिल्यालतीर्त्तहर्म्यमाम्[1] ।

अर्थात्, यह महल भीतर लाल सिराओं से शोभित सफेद संगमरमर से बनाया गया है ।

ग•   माविन्तोट्टत्तिलोन्निलनिन्नु मट्टोन्निलमोदम्
 तावुन्न मञ्ञक्किलि परन्नु मिन्नलपोले[2] ।

अर्थात् एक अमराई से दूसरी की ओर पीले रंग की पक्षी आनन्द के साथ बिजली जैसे उड़ती है ।

3• नाद-व्यंजना

क•   पट पट मन्निलेविटेयुमसिन
 पटपटयेन्नुल्लोलि मुष्कुन्नु
 अटिपिटियुटे कोट्टम कोण्टुपि -
 पिटिपोटियायित्तकर्न्नोटुङ्ङुन्नु[3] ।

1• कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ•225

2•   वही   पृ•219

3• उल्लूरिन्टे पद्य कृतिकल - द्वितीय भाग - पृ•526

अर्थात् संसार में सब कहीं युद्ध का भीषण शब्द ही सुनाई पड़ता है । सब कहीं "पट प्रट" शब्द गूंज उठता है । भीषण मार पीट के कारण यह संसार चूर-चूर होकर नष्ट भ्रष्ट हो रहा है ।

यहां युद्ध से होने वाली क्षति का वर्णन पढ़ते ही युद्ध के भीषण नाद की व्यंजना का भी अनुभव होता है ।

ख· सुगन्धाद्यमायिन्धनो व्ययित्तन्मेल कत्ति
प्रकटज्वालनीट्टिट भुमु शब्द मोटात्तुम ।[1]

अर्थात् सुगन्धित इन्धन को जलाकर अग्नि ज्वाला भु भु शब्द के साथ भभक उठती है ।

ग· तलिरनिर मृदुतालमेकियेवम्
कल कलमायतिमोहनम् वनित्तल ।[2]

अर्थात् छोटे छोटे पौधों ने मृदु ताल किया और उस वन में मोहक कल कल शब्द फैल गया ।

4· गन्ध-संवेदना

गन्ध की अत्यधिक संवेदना उत्पन्न करने में मलयालम के कवियों ने अत्यधिक निपुणता का परिचय दिया है । यथा -

---

1· कुमारन आशान्टे पद्य कृतिकल - प्रथम भाग - पृ·423
2· वही पृ·181

क· ओळविन्तिरियुम्बोलोमलालक -
उळ्ळार चम्पक गन्धमोदुमुल्लम् ।
परिचिलथहरिन्चु मर्मदोर्मी -
परिचयशैत्यमिळन्नमन्दवायु ।[1]

अर्थात् रास्ते के मोड पर पहुंचने पर नायिका को चंपक फूल के सुगन्ध का अनुभव हुआ ।

ख· सुखदमयि ! वरुन्नितेङुनिन्नो
सखि, चिल चम्पक गन्धमेन्तुचित्रम् ।[2]

अर्थात् हे सखि कहीं से चम्पक फूल का सुगन्ध आ रहा है, जो अत्यंत सुखद है ।

ग· मेल्लेन्नु सौरभमुमोदटुपरन्नु लोक -
मेल्लाम् मयक्किमळवुम्मलतन्नुनिन्ने ।[3]

अर्थात्, हे फूल, तु ने अपने सुगन्ध से सारे संसार को आकृष्ट किया ।

5· स्पर्श- संवेदना

सचमुच स्पर्श की अनुभूति पेदा करने में मलयालम के कवि भी अत्यंत सफल हुए है । यथा -

---

1· कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ·174
2· वही पृ·175
3· वही पृ· 77

क. कण्टवन्, कुतुकमार्न्नुतेन्निल
नण्डलम्नु विटरुन्नताम्कल ।

अर्थात् हवा के झोंकों से उलझकर विकसित होनेवाले फूलों को उसने अत्यंत कुतूहल के साथ देखा ।

ख. वन्यभूमियिल वहिच्चु पूमणम्
धन्यनायवन ! वन्नणञ्ञु नी
तेन्नले, तपुकिन्नुशङ्कये-
न्नु पटेन्ने, ञान मलिनमेन्नियल्लेटो ।[2]

अर्थात् इस वनस्थली में पुष्पसौरभ को फैलाकर, धन्य होकर तू आया । हे हवा ! आज सन्देह के बिना मेरा थपकी दे दे, मेरा देह मलीन नहीं है ।

ग. ओक्कोच्चु कादटेक्कुन्न वन्नुपोयाल
तुरुतुरे पूमण्यायि पिन्ने ।[3]

अर्थात् एक लघु पवन के आगमन से वहाँ फिर क्या, फूलों की वर्षा होने लगती है ।

2. उद्दीपन रूप में

प्राचीन काव्यों में प्रकृति का उद्दीपक रूप सर्वाधिक चित्रित हुआ है । आधुनिक काव्यों में भी प्रकृति का यह रूप मिलता है । उद्दीपक-प्रकृति मानव की सुख-दुखमयी अनुभूतियों को प्रसंगानुसार तीव्र करती है ।

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ. 100
2. वही पृ. 107
3. चंगुपुळतिकल - पहला भाग पृ. 113

स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रकृति के इस उद्दीपक रूप का मनोरम चित्रण किया है ।

"प्रसाद"जी का एक सुखद प्रकृति चित्रण इस प्रकार है -

कालिमा धुलने लगी, घुलने लगा आलोक,
इसी निभृत अनंत में बसने लगा अब लोक ।

इसी निशामुख की मनोहर सुधामय मुसक्यान,
देख कर सब भूल जायें दुःख के अनुमान ।[1]

प्रकृति का सुखद चित्र "पंत" में भी मिलता है । यथा -

आज रहने दो यह गृह काज,
प्राण ! रहने दो यह गृह काज ।
आज जाने कैसी वातास
छोड़ती सौरभ श्लथ उच्छ्वास,
प्रिये, लालस - सालस वातास,
जगा रोओं में सौ अभिलाष ![2]

प्रकृति का दुःखद उद्दीपक रूप "आँसू" में इस प्रकार वर्णित है -

---

1. कामायनी = वासना सर्ग - पृ.97
2. गुंजन - पृ.51

चातक की चकित पुकारें
श्यामा - ध्वनि सरल रसीली
मेरी करुणार्द्र कथा की
टुकड़ी आंसु से गीली[1]।

महादेवी ने भी सुखद उद्दीपक प्रकृति का अभिराम चित्र खींचा है । यथा -

सकुच सलज खिलती शेफाली,
अलस मोलश्री डाली डाली,
बुनते नव प्रवाल कुंजों में,
रजत श्याम तारों से जाली,
शिथिल मधु-पवन गिन गिन मधु कण,
हरसिंगार झरते हैं झर झर ।[2]
आज नयन आते क्यों भर भर ?

"पंत" की निम्नलिखित पंक्तियों में भी दुःखद प्रकृति का रूप मिलता है । यथा -

वन फूलों की तरु डाली में
गाती अब, निर्दय गिरि कोयल
काले कौओं के बीच पली,
मुंहजली, प्राण करती विह्वल ।

---

1. प्रसाद - आंसु - पृ.93
2. महादेवी - सन्धिनी - पृ.43

कोकिल का ज्वाला का गायन,
गायन में मर्म व्यथा मादन,
उस मूक व्यथा में लिपटी स्मृति,[1]
स्मृति पट में प्रीति कथा पावन ।

वन में फूलों से भरी डालियों में कौओं के बीच बैठी गाती हुई कोयल का गान कवि को विषादात्मक दीखता है और उस में मादक व्यथा भरी रहती है, जो स्मृतियों को जगाता है । मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों में आशान ने उद्दीपन रूप में सुखद तथा दुखद प्रकृति का सुन्दर चित्रण किया है । उनकी कविता में चित्रित प्रकृति का सौम्य और सुन्दर रूप देखिए -

ओमनत्तुमुकिलत्तुंडकलडुल्लम्
व्यामोहिप्पिच्चु तिलडिडिन्नु ।
पूमरम् पोलेयुम् पोन्नुवल्लि पोलेयुम्
तामर पूत्त कुलम् पोलेयुम्
नेरिय मञ्ञिन तिरयक्कुळ्ळिलक्काणुव
पारम् मनोज्ञमायिरुन्नु ।
सन्नेहमिल्लिता साक्षम् चेय्युन्नु[2]
मन्दम् मुरलियोराण् कुयिलुम् ।

---

1. पंत - चिदम्बरा - पृ.291
2. कु. आ. पद्मकृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.186-187

भावार्थ है, हृदय को मुग्ध करनेवाले सुन्दर मेघखण्ड आकाश में शोभित है। वे पुष्पित वृक्ष स्वर्णिम लता और विकसित कमलों से भरे सरोवर के समान शोभित है। हल्के नीहार के आवरण में वह दृश्य अत्यंत मनोहर था। लो! निस्सन्देह, कोकिल स्वर-साधना कर रहा है।

यहाँ कवि ने मिलनोचित मुग्ध प्रकृतिका रम्य चित्रण किया है। वियोगिनी नायिका को पीडा पहुँचाने वाली दुःखद प्रकृति का चित्रण आशान ने इस प्रकार किया है -

कुयिलिणयिललिन्ञु पाटिटुन्नु
मयिलितासम पिटयोटुमाटिटुन्नु
प्रियये अनुनयिच्चिटुन्नु सिंहम्
प्रियतम नी अणयाञ्ञु ज्ञान वलञ्ञु।

भावार्थ है, कोकिल अपनी प्रेयसी पर मुग्ध होकर गा रहा है। मोर अपनी प्रेयसी के साथ नाच रहा है। शेर अपनी पत्नी से अनुनय-विनय कर रहा है। प्रिय! तुम्हारे न आने से मैं अत्यंत व्याकुल हूँ। कविवर जी·शंकरकुरुप ने प्रकृति का सुखद उद्दीपक रूप में मनोरम चित्रण किया है। यथा,

रुचिर शैल
जिस पर छितराये हैं मेघ अलक अभ्र-लक्ष्मी ने,
खड़ा है चुपचाप गाढ चुम्बनलीन,
प्यारे से झरने का मनहर कूल,
बिखर जाते हैं मोती जिस पर उसकी हँसी के

1· कुमारनाशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ·183

छोटा सा खेत, जहाँ लहरा रही हैं हरे धान की बालियाँ
ईषद् आरक्त सुन्दर उपवन
मनोरम सन्ध्या की द्युति से प्रोज्वल
चंचल किसलय राजि द्वारा निर्मित[1]।

चंपुषा की निम्नलिखित पंक्तियों में भी सुखद उद्दीपक प्रकृति का अभिराम चित्र मिलता है। यथा,

कुलिरकाट्टु वीशुन्नु पूत्तुनिन्नकुम्
कुम्मोट्टि मुल्लकलाटिडुन्नु,
कलितानुमोदम् वनम् मुकुवन
कलकलम पेय्युन्नु पैंकिलिकल,
मलरमणम वीशुन्नु, पीलि नीर्त्ति
मयिल मरक्कोम्पिल निन्नाडिडुन्नु[2]।

अर्थात्, ठंडी हवा बह रही है, फूले हुए चंपक झूम रहे हैं, सारे वन में आमोद के साथ चिड़ियाँ कल-कूजन कर रही हैं, फूल सुगन्ध फैला रहे हैं, पेड़ के डालों पर मोर पर फैलाये नाच रहे हैं।

---

1. जी. शंकरकुरुप - ओटक्कुषल [अनुवाद] पृ. 167
2. चंपुषा कृतिकल - प्रथम भाग - पृ. 172

3. अलंकार और प्रतीक-विधान के रूप में

सौन्दर्यमयी अभिव्यक्ति केलिए कवियों ने प्रकृति से सहायता ग्रहण की है। अपनी भावाभिव्यक्ति में स्पष्टता और मार्मिकता लाने केलिए कवियों ने प्रकृति के उपकरणों को अलंकार तथा प्रतीक के रूप में स्वीकार किया है। हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रकृति का ऐसा रूप द्रष्टव्य है।

"अलंकारों द्वारा भावोद्रेक में सहायता मिलती है और भावों की व्यंजना चित्र रूप में होने लगती है जो अत्यंत प्रभाव पूर्ण तथा आकर्षक होती है"[1]। अतः प्रकृति के अलंकार रूप-चित्रण में स्वच्छन्दतावादियों ने अधिक रुचि दिखाई है। "पंत" जी द्वारा चित्रित प्रकृति का एक अलंकार रूप देखिए -

आलोड़ित अम्बुधि फेनोन्नत कर शत-शत फन,
मुग्ध भुजंगम-सा, इंगित पर करता नर्तन।[2]

यहाँ कवि ने अम्बुधि के रूप में सैकड़ों फन उठाये हुए विशाल भुजंगम का चित्रांकन किया है।

"निराला" की निम्न लिखित पंक्तियों में भी प्रकृति का अलंकार रूप में भव्य चित्रण मिलता है -

---

1. डॉ. जगदीश नारायण त्रिपाठी - आधुनिक हिन्दी कविता में अलंकार विधान - पृ.24
2. पंत - आधुनिक कवि - पृ.38

मुक्त शैशव, मृदु-मधुर मलय,
स्नेह कम्पित किसलय नव गात
कुसुम अस्फुट नव नव संचय,
मृदुल वह जीवन कनक-प्रभात ।[1]

"मनुष्य की भाषा और अभिव्यक्ति के सामान्य स्वरूप के साथ प्रतीकों का घनिष्ठ सम्बन्ध है । काव्यात्मक अभिव्यक्ति में चमत्कार विधायक होने के कारण, प्रतीकों की विशेष महिमा है । इसी कारण सदा और सर्वदा काव्य में, किसी न किसी रूप में, प्रतीकों की सत्ता रही है"[2] । केवल मानस-प्रत्यक्ष तथा कल्पना के क्षेत्र में आनेवाले विचारों, भावों और अनुभूतियों के गोचर संकेत अथवा चिह्न ही प्रतीक कहलाते हैं[3] । हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रतीकों का सुन्दर विधान किया है । प्रतीकों के माध्यम से ही "प्रसाद" ने अपनी सूक्ष्म से सूक्ष्म अनुभूति को सफलता से अभिव्यक्त किया है । व्यक्तिगत अनुभूति के कारण "प्रसाद" के प्रतीकों में व्यक्तिगत प्रतीकों का आधिक्य है[4] । "प्रसाद" ने प्रकृति का प्रतीकरूप में मनोरम चित्रण किया है । यथा -

झंझा झकोर गर्जन था
बिजली थी, नीरदमाला ।
पाकर इस शून्य हृदय को,
सबने आ डेरा डाला ।[5]

---

1. निराला - अपरा - पृ.96
2. डॉ. नित्यानंद शर्मा - आधुनिक हिन्दी काव्य में प्रतीक विधान - प्रस्तावना ।
3. A symbol is a visible or audible sign or emblem of some thought emotion or experience, interpreting what can be really grasped only by the mind and imagination by something which enters into the field of observation. -Encyclopaedia of Religion & Ethics, p.139(Vol.XII)
4. The poet who writes of his private exaltations has to find his own symbles. - C.M. Bawra - Heritage of symbolism - p.2
5. प्रसाद - आँसू - पृ.15

मन की विभिन्न दशाओं का चित्रण करने केलिए यहाँ प्राकृतिक वातावरण से बड़े सशक्त प्रतीक जुटाये गये हैं -

झंझा झकोर - मानसिक हलचल, क्षोभ, आकुलता ।
बिजली - हृदय की टीस ।
नीरदमाला - अंधकार एवं निराशा ।
गर्जन - वेदना की तड़प ।

प्रिय के वियोग में कवि की दशा को स्पष्ट करने में यह प्राकृतिक प्रतीक-विधान अत्यधिक सफल हुआ है ।

अपनी वेदनानुभूति की अभिव्यक्ति केलिए महादेवी ने भी प्रतीकों का बड़ी मात्रा में प्रयोग किया है । ~~प्रायः प्रतीक~~ प्रकृति के विभिन्न उपकरणों का प्रतीक-विधान में उपयोग कर कवयित्री सहृदय हृदय को करुणाप्लावित कर देती है और वेदनानुभूति सहृदय हृदय की अपनी सी हो जाती है । उदाहरणार्थ रात्रि मिलन का सुन्दर प्रतीक है, किन्तु उसमें ओस-रूपी आंसुओं की कल्पना करके सारे वातावरण तक को वेदना की करुण अनुभूति से मिश्रित करके वेदनामय कर दिया है -

डाले नवघन का अवगुंठन
दृग-तारक में सकरुण चितवन
पदध्वनि से सपने जाग्रत कर
श्वासों से फैला मृदुतिमिर
निशि अभिसारों में आंसू से
मेरी मनुहारें धो जातीं ।

---

1. महादेवी - यामा

यहाँ प्राकृतिक प्रतीकों का भव्य चित्र द्रष्टव्य है । अलंकार और प्रतीक विधान के रूप में मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रकृति का सफल चित्रण किया है । प्रकृति का अलंकाररूप वर्णन निम्न लिखित अवतरण में देखा जा सकता है -

धीरनाथयति नोक्कि तन्वि तन् -
भूरिबाष्प परिपाटलम् मुखम -
पूरिताश्रयोद्विकसल मञ्जु तन् -
धारयार्न्न पनिनीर सुमोपमम् ।

भावार्थ है, वीर मुनि ने सुन्दरी के अश्रु भीगे अरुणाभ मुख की ओर देखा । वह मुख प्रातः काल में तुषार-कणों के अभिसिंचित गुलाब का फूल प्रतीत हुआ ।

यहाँ पर नायिका के करुणार्द्र सुन्दर मुख का वर्णन प्रातः काल में नव-विकसित तुषार मण्डित गुलाब के फूल के समान किया गया है । "वल्लत्तोल" के निम्नलिखित अवतरण में भी प्रकृति के अलंकार रूप में चित्रण का सुन्दर उदाहरण द्रष्टव्य है । यथा,

कण्णाटियिल कवोले नितान्तममन्द -
च्चोप्पार्न्न वानम निपतिक्कयाले,
वेन्तामरप्पूक्कल निरञ्ञपोलाय -
क्काणम् सरित्तिन नटुभागमिप्पोल[2] ।

1· कुमारन आशान - प्रकृतिकल - प्रथम भाग - पृ·111

2· वल्लत्तोल - साहित्यमंजरी - प्रथम भाग - पृ·46-47

अर्थात् शाम की अरुणिमा से पूर्ण गगन आइने के समान नदी में प्रति-बिम्बित हुआ । उसे देखने से ऐसा लगता है जैसे नदी के मध्य में लाल कमल खिले हुए हैं । निम्नलिखित अवतरण में प्रकृति के प्रतीकात्मक प्रयोग का सुन्दर चित्र मिलता है । यथा,

पण्टु निन्नेयोरिलम् कुरुन्नताय
कण्टु ञान, लतिद वल्लियायि नी ।[1]

भावार्थ है, मैं ने पहले तुम को एक अंकुर के रूप में देखा था, अब तुम एक लता बन गयी हो । यहाँ अंकुर तथा लता शिशुता एवं यौवन के प्रतीक के रूप में प्रयुक्त हैं ।

निम्नलिखित पंक्तियों में भी प्रकृति का प्रतीक रूप में चित्रण मिलता है -

करिमुकिल मालमूटिय वानिलेन -
कनकतारयेक्कात्तिरिक्कुन्नु ञान् ।
प्रणयगानम मरन्न मुरलियेन -
मटियिलय्यो, किटक्कुन्नु मूकमाय ।
मणिक्कान्ति पोक्कुन्नु पोलिञ्ञातेन -
मणिविलक्किले स्वर्ण दीपांकुरम ।[2]

भावार्थ है, काली घटा छायी हुई गगन में मैं अपने स्वर्ण-तारे का इन्तज़ार कर रहा हूँ । प्रेम-गान का विस्मरण करके यह मुरली मेरी गोद में मूक पड़ी है । मेरे मणिदीप का स्वर्ण दीपांकुर क्षण भर शोभा दिखाकर बुझ गया

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ. 112
2. चंगंपुषक्कृतिकल - द्वितीय भाग - पृ. 59

4· मानवीकरण के रूप में

प्रकृति में मानवीय व्यापारों का आरोपण ही उसका मानवीकरण है । कवि प्रकृति के जड़-पदार्थों को चेतन मानव के समान आचरण करते हुए दिखाता है । मानव की समस्त क्रियायें प्रकृति में ही दिखायी जाती हैं । सरल शब्दों में प्रकृति मनवमय बनती है अथवा यों कहिए कि प्रकृति मानव बनती है । मानवीकरण की प्रवृत्ति स्वच्छन्दतावादी काव्य की एक मुख्य विशेषता है ।

वास्तव में मानवीकरण उन्हीं पदार्थों का होता है जिनके प्रति कवि का रागात्मक संबन्ध हो । "कामायनी" में मानवीकरण का मनोरम चित्र मिलता है । यथा,

उच्चशैल शिखरों पर हँसती
प्रकृति चंचला बाला;
धवल हँसी बिखराती अपनी
फैला मधुर उजाला ।[1]

यहाँ प्रकृति का सजीव चित्रण अपनी रस-सिद्धि तक पहुँच गया है । "पंत" जी की निम्नलिखित पंक्तियों में मानवीकरण का सुन्दर निर्वाह हुआ है । यथा,

सोनजुही की बेल,
चौकड़ी भरती चंचल हिरनी ।
आकांक्षा सी उर से लिपटी,
प्राणों के रज तम से चिपटी

1· कामायनी कर्म सर्ग - पृ·129

मृ योजन की सी अंगड़ाई,
मधु स्वप्नों की सी परछाई,
रीढ स्तंभ जाने अवलंबन
धरा चेतना करती रोहण -
आः, विकास पथ पर मृ जीवन[1] ।

यहाँ सोनजुही की लता में कवि एक नव युवती का दर्शन करते हैं । उसमें यौवन का उल्लास है, छबीलापन है । रूप और भाव की दृष्टि से कवि ने उस लता को एक चंचल युवती के रूप में प्रस्तुत किया है । मानवीकरण का अभिराम चित्र "निराला" में भी मिलता है । यथा -

दिवसावसान का समय,
मेघमय आसमान से उतर रही है,
वह संध्या सुन्दरी परी सी, धीरे धीरे धीरे[2] ।

यहाँ कवि संध्या की सुषमा को देख कर उस के रूप के प्रति प्रेम का अनुभव कर रहा है । इस प्रकार मानवीकरण के अनेक उदाहरण हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी काव्य में उपलब्ध हैं ।

मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने मानवीकरण का सुन्दर विधान किया है । ये कवि अत्यधिक प्रकृति-प्रेमी होने के कारण प्रकृति के पदार्थों में भी मानवीय व्यापारों का दर्शन करने में ये सफल हुए हैं ।

---

1. पंत - चिदम्बरा - पृ.296
2. निराला - परिमल की संध्या नामक कविता ।

निम्नलिखित उद्धरण में सन्ध्या में मानवीय भावों का आरोप कितना रमणीक है । यथा,

"वयमन्तियिलुम वेलुप्पिनुम,
चियलम चित्र विरिप्पु नेय्तुटन
वियदालयवातिल मुटुमेन -
प्रिय सन्ध्ये ! भवतिक्कु वन्दनम् ।[1]

भावार्थ, सवेरे और शाम को स्वयं चित्र - विचित्र पर्दा बुनकर, गगन-महल के द्वार में डालनेवाली सन्ध्या ! तुम को नमस्कार है । यहाँ पर्दा बुनने वाली सुन्दरी के रूप में सन्ध्या की कल्पना की गयी है । यह सन्ध्या सायंकाल की सन्ध्या ही नहीं, उषाकाल की भी सन्ध्या है । इसीलिए सवेरे और शाम को पर्दा बुननेवाली सन्ध्या है । आशान् के "वीणपूवु" काव्य में भी मानवीकरण का सौन्दर्य दृष्टिगोचर होता है । उस में फूल का वर्णन नारी के रूप में किया गया है । फूल के मानवीकरण का एक उदाहरण देखिए -

"कण्णमनपोटु वलर्न्नथ निन्टेयंग -
माविष्करिच्चु चिल भंगिकल मोहनड्डल,
भावम पकर्न्नु वदनम, कविल कान्तियार्न्नु,
पूवे ! अतिल पुतिय पुंचिरि संचरिच्चु ।[2]

अर्थात्, इस प्रकार विकसित तेरे अंगों ने नूतन मोहक सौन्दर्य पाया । मुख का भाव बदला । गालों में नयी कांति छलकी । उस में नयी मुस्कान लहरायी ।

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ.552
2. " पृ. 76

यहाँ विकसित कुसुम की कल्पना युवती नारी के रूप में की गयी है। वल्लत्तोल की निम्नलिखित पंक्तियों में भी मानवीकरण का आभास द्रष्टव्य है। यथा -

काट्टेट्ट नानाविधमादपङ्क्ति -
लिट्यिक्कियुक्कण्णुल तुकि,
चलल पलाशावलि निश्वनस्ता -
लोरोन्मुलम्मिल प्रलपिप्पतेन्तो[1]।

भावार्थ है, हवा के लगने से नाना प्रकार के वृक्षों ने आँसु बहाये। पलाशों का समूह दीर्घनिश्वास के साथ आपस में क्या प्रलाप कर रहा है?

यहाँ कवि वृक्षों में मानवीय भावों का आरोप करते हैं। वल्लत्तोल की निम्नलिखित पंक्तियों में भी मानवीकरण का सुन्दर निर्वाह हुआ है। यथा,

ओक पुंचिरि तूकि पूक्कल गीति -
प्पोक्लाल स्वागतिमोतिपक्षिजालम्[2]।

अर्थात्, फूल मुस्कुराये, चिड़ियों के झुण्ड ने अपने मधुर गीतों से स्वागत किया।

यहाँ प्रभात के समय फूलों और पक्षियों के क्रियाकलापों में कवि मानवीय भावों का आरोप करते हैं।

---

1. वल्लत्तोल - साहित्य मंजरी - प्रथम भाग - पृ.80
2. वही द्वितीय भाग - पृ.88

5. उपदेश और नीति के माध्यम के रूप में

प्रकृति के द्वारा उपदेश देने की प्रवृत्ति भी स्वच्छन्दतावादी काव्य में मिलती है। प्रकृति के किसी दृश्य द्वारा व्यंजित किसी नैतिक या आध्यात्मिक तथ्य पर ही स्वच्छन्दतावादी कवि अधिक दृष्टि डालते हैं। यथा -

हंसमुख प्रसून सिखलाते पल भर हैं, जो हंस पाओ,
अपने उर की सौरभ से जग का आंगन भर जाओ।
उठ-उठ लहरें कहतीं यह हम कूल विलोक न पावें,
पर इस उमंग में बह-बह नित आगे बढ़ती जावें।[1]

प्रकृति के द्वारा जगत्-जीवन संबन्धी एक शाश्वत तथ्य इन पंक्तियों में भी प्रकट होता है -

ज्यों-ज्यों लगती है नाव पार
उर में आलोकित शत विचार।
इस धारा सा ही जग का क्रम, शाश्वत इस जीवन का उद्गम,
शाश्वत है गति, शाश्वत संगम।[2]

"कामायनी" में श्रद्धा मनु को कर्म का उपदेश देती हुई आदर्श रूप में प्रकृति को ही सामने रखती है। यथा,

---

1. पंत -गुंजन - पृ.23
2. पंत -गुंजन - पृ.96

प्रकृति के यौवन का श्रृंगार
करेंगे कभी न बासी फूल,
मिलेंगे वे जाकर अतिशीघ्र
आह, उत्सुक है उनकी धूल ।
पुरातनता का यह निर्मोक
सहन करती न प्रकृति पल एक,
नित्य नूतनता का आनंद
किये है परिवर्तन में टेक[1] ।

मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने उपदेश और नीति के माध्यम के रूप में प्रकृति का चित्रण विस्तारपूर्वक नहीं किया है । मलयालम के लब्ध-प्रतिष्ठ स्वच्छन्दतावादी कवि आशान ने भी प्रकृति का ऐसा चित्रण बहुत कम ही किया है । कहीं-कहीं उपदेशक प्रकृति का रूप चित्रित है । यथा -

समत्वमेकलक्ष्यमेवरूम् स्वतन्त्ररेन्नुमे
समस्तमितमस्सकट्टियोति लोकमाक्वे
क्रमप्पेटुत्तिटुम भवान्टे घोरमां कृपयकु ञान
नमस्करिप्पू देवा[2] -

भावार्थ है, समता ही: मेरा: लक्ष्य है, सब स्वतंत्र हों, यह कहता हुआ अन्धकार को दूर करके जगत् की व्यवस्था करनेवाला देव [:सूर्य:] तुम को प्रणाम है ।

---

1. कामायनी श्रद्धा सर्ग - पृ.65
2. कुमारन आशान्टे पद्य कृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.308

कवि यहाँ यह बताना चाहता है कि सूर्य छोटे - बडे का भेद नहीं मानता । उसकी दृष्टि में सब समान हैं, और स्वतंत्र हैं । कवि वह उपदेश देना चाहता है कि प्रकृति के सामने छोटे-बडे की भिन्नता नहीं है, अत: मनुष्य को भी इस प्रकार का भेद नहीं मानना चाहिए ।

"वीणपूवु" नामक अपनी कविता में आशान ने कहा है कि प्रयोजन-रहित जडवद् जीवन बितानेवाली शिला की अपेक्षा क्षणिक होने पर भी ज्योतिर्मय जीवन बितानेवाली बिजली ही काम्य है[1] ।

6• परमतत्व के आभास के रूप में

स्वच्छन्दतावादी कवियों के प्रकृति-प्रेम के मूल में एक दार्शनिक नियोजना भी विद्यमान है । अत: वे प्रकृति सौन्दर्य के प्रसार में छिपे अज्ञात शक्ति की कल्पना करते हैं । प्रकृति को वे परम तत्व के आभास के रूप में देखते हैं । इसी कारण उनके प्रकृति के कुछ चित्र रहस्यात्मकता लिए हुए हैं । रहस्य भावना की अभिव्यक्ति में अनुराग अलौकिक सत्ता के प्रति होता है । प्रकृति तो केवल माध्यम ही होती है । प्रकृति के माध्यम से रहस्य सत्ता की अभिव्यक्ति "कामायनी" में अत्यंत सुन्दर हुई है । यथा,

महानील इस परम व्योम में,
अंतरिक्ष में ज्योतिर्मान,
ग्रह नक्षत्र और विद्युत्कण
किसका करते से संधान ?

1• कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ•8।

छिप जाते हैं और निकलते
आकर्षण में खिंचे हुए,
तृण वीरुध लहलहे हो रहे,
किस के रस से सिंचे हुए ?[1]

यहाँ प्रकृति में परम तत्व के आभास की अनुभूति की तीव्रता स्पष्ट परिलक्षित है ।

"पंत" जी के निम्न लिखित अवतरण में भी परम तत्व का आभास द्रष्टव्य है । यथा,

सघन मेघों का भीमाकाश
गरजता है जब तमसाकार,
दीर्घ भरता समीर निःश्वास,
प्रखर झरती जब पावस धार;
न जाने तपक पडित में कौन
मुझे इंगित करता तब मौन ।[2]

मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवि भी प्रकृति में एक अलौकिक शक्ति का दर्शन करते है । इस अलौकिक शक्ति के प्रति प्रेम का उदाहरण उनकी कविताओं में देखने को मिलते हैं । यथा -

ओमल प्रभातरुचियेङ्कुमयर्न्न नील -
व्योमस्थलमुस्वयमेरि रेकुमर्कबिम्बमु ।

---

1. कामायनी - आशा सर्ग - पृ.36
2. तारापथ - पृ.64

अन्तिच्चुवप्पुमलयाळिप्पुमडिङ्ङरिदट -
तुन्तिस्फुरिक्कुमुडुराशियुमिन्दुतानुम
पन्तिक्कु तीर्त्त पोरुळिन्टे मनोविलासम
चिन्तिच्चेनिक्ककमलिञ्ञुटल चीर्त्तिडुन्नु ।[1]

भावार्थ है, सुन्दर प्रात: की शोभा से युक्त नील व्योम, स्वयं जलनेवाला सूर्यबिम्ब सन्ध्या की अरुणिमा, तुंग तरंगों से भरा समुद्र, अन्धकार में दीप्यमान नक्षत्र और चन्द्रमा, इन सब का उचित निर्माण करनेवाले उस परम तत्त्व की कल्पना कर मेरा मन विस्मय से भर जाता है ।

महाकवि वल्लत्तोल की निम्नलिखित पंक्तियों में भी प्रकृति में व्याप्त परमतत्त्व के प्रति कवि का आदर स्पष्ट होता है । यथा -

इप्पटि नूरायिरम् ब्रह्माण्ड -
मेप्पोळुम् पुलर्त्तनाय वेल्लुपोंदट,
ओप्पमतुकलिलोक्कैविलयाटु -
मप्पराशक्तिक्कु कूप्पुक नाम ।[2]

भावार्थ है, इस प्रकार एक ही समय सैकडों-हजारों ब्रह्माण्डों का पालन करनेवाली उस परम शक्ति के सम्मुख हम सिर झुकावें ।

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - द्वितीय भाग - पृ. 111
2. वल्लत्तोल - साहित्यमंजरी - चतुर्थ भाग - पृ. 3

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रकृति प्रमुख प्रतिपाद्य रही है। दोनों भाषाओं के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रकृति का सौन्दर्य-दोहन किया है। उनके काव्य प्रकृति सौन्दर्य के नानाविध चित्रों से सम्पन्न हैं। आलम्बन और मानवीकरण के रूप में प्रकृति का चित्रण हिन्दी काव्य में अधिक हुआ है। इसी प्रकार उपदेश और नीति के रूप में प्रकृति हिन्दी कवियों के द्वारा अधिक वर्णित हुई है। संक्षेप में, हिन्दी का स्वच्छन्दतावादी काव्य प्रकृति-सौन्दर्य चित्रण की दृष्टि से अधिक समृद्ध है।

2. भाव-सौन्दर्य

कविता में भाव-सौन्दर्य चित्रण का विशेष महत्व है। अतः महान कवियों की कृतियों में भाव सौन्दर्य का चारु चित्रण मिलता है। हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने भाव सौन्दर्य चित्रण में अपनी क्षमता का स्पष्ट परिचय दिया है।

हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों में "प्रसाद जी" भाव सौन्दर्य चित्रण में अत्यधिक सफल हुए हैं। उन्होंने जिस प्रकार रूप सौन्दर्य का चित्रण बड़ी निपुणता के साथ किया है, उसी प्रकार भाव सौन्दर्य का भी चित्रण पूर्ण कुशलता और कलात्मकता के साथ किया है। उनके सम्पूर्ण काव्य-जगत् में भाव-सौन्दर्य के अनेक जीवन्त चित्र मिलते हैं। जिस क्षमता के साथ "प्रसादजी" ने अमूर्त भावों को मूर्तिमत्ता प्रदान की है वैसी क्षमता विरले ही कवियों में दृष्टिगोचर होती है।

"प्रसादजी" ने चिन्ता, वासना, लज्जा आदि सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावों का चित्रण अत्यंत मनोयोग से किया है। चिन्ता, आशा, लज्जा, काम, ईर्ष्या आदि मनोविकारों का जैसा सूक्ष्म और सरस चित्रण उनके प्रसिद्ध काव्य कामायनी में हुआ है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है।

"प्रसादजी" ने अपनी कुशल लेखनी से लज्जा नामक मनोभाव का मनोमुग्धकारी चित्र प्रस्तुत किया है। निम्न अवतरण में लज्जा का चारुचित्र देखिए -

मैं रति की प्रतिकृति लज्जा हूँ
मैं शालीनता सिखाती हूँ,
मतवाली सुन्दरता पग में
नूपुर-सी लिपट मनाती हूँ।
लाली बन सरल कपोलों में
आँखों में अंजन-सी लगती;
कुंचित अलकों-सी घुंघराली
मन की मरोर बनकर जगती।
चंचल किशोर सुन्दरता की
मैं करती रहती रखवाली;
मैं वह हल्की-सी मसलन हूँ
जो बनती कानों की लाली।[1]

यहाँ "प्रसादजी" ने लज्जा को मूर्त्त रूप प्रदान कर उसके समस्त मानसिक एवं शारीरिक व्यापारों का चित्रण कर दिया है। कामायनी भाव-सौन्दर्य के ऐसे अनंत मोहक चित्रों से समृद्ध हैं। स्थान स्थान पर अमूर्त्त भावों को मूर्त्त रूप देकर "प्रसादजी" ने

---

1. कामायनी - लज्जा सर्ग

उन्हें जिस तरह सुसज्जित किया है वैसा प्रयत्न अन्यत्र मिलना दुर्लभ है[1]।

इसी प्रकार का और एक चित्र प्रथम चिन्ता सर्ग में भी दृष्टिगोचर होता है। देखिए -

ओ चिन्ता की पहली रेखा,
अरी विश्व वन की व्याली;
ज्वालामुखी स्फोट के भीषण
प्रथम कंप-सी मतवाली !
हे अभाव की चपल बालिके,
री ललाट की खल लेखा !
हरी-भरी-सी दौड़-धूप, ओ
जल-माया की चल रेखा[2]।

यहाँ चिन्ता नामक मनोभाव को विश्व वन की सर्पिणी, ज्वालामुखी के भीषण स्फोट के प्रथम कम्पन के समान मतवाली, अभाव की चंचल बालिका, ललाट की दुष्ट रेखा, हरी-भरी सी दौड़-धूप आदि कहा गया है।

"पंत" जी के निम्नलिखित अवतरण में स्नेह का अभिराम रूप द्रष्टव्य है। यथा,

दीप के बचे विकास !
अनिल-सा लोक-लोक में,
हर्ष में और शोक में,
कहाँ नहीं है स्नेह ? सांस सा सबके उर में !

---

1. डॉ॰ द्वारिकाप्रसाद सक्सेना - कामायनी में काव्य, संस्कृति और दर्शन-पृ॰211
2. कामायनी - चिन्ता सर्ग - पृ॰15

यही तो है बचपन का हास
खिले यौवन का मधुप विलास,
प्रौढ़ता का वह बुद्धि विकास,
जरा का अन्तर्नयन प्रकाश,
जन्म दिन का है यही हुलास,
मृत्यु का यही दीर्घ-नि:श्वास ।[1]

कविवर "निराला" की निम्नलिखित पंक्तियों में भी भाव-सौन्दर्य का मनोरम रूप मिलता है । यथा,

जटिल जीवन - नद में तिर - तिर
डूब जाती हो तुम चुपचाप,
सतत द्रुत गतिमयि अयि फिर फिर,
उमड़ करती हो प्रेमालाप,
सुप्त मेरे अतीत के गान
सुना, प्रिय, हर लेती हो ध्यान ।[2]

यहाँ स्मृति नामक मनोभाव का चारु चित्रण किया गया है ।

मलयालम के रोमान्टिक काव्य में भी भाव सौन्दर्य चित्र पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं । इस प्रसंग में कुमारन आशान की "निष्कपटतयोट्" - सरलता से - नामक कविता उल्लेखनीय है । इस में सरलता की कल्पना एक नारी रूप में की है । प्रस्तुत कविता की निम्न लिखित पंक्तियाँ विशेष उल्लेखनीय हैं -

"पूविनेतिर मेय्योलियोतुङ्ङ्युमाली -
क्कावित्तटवुम् मुकुरमोरुत्तु कवित मंजली

---

1. पंत - आधुनिक कवि - 2, पृ 17
2. निराला - अपरा

आविलमनस्सोटोस केयिल मुखमर्पि -
च्चीविष्यमिळम्बुकतेन्नु विमले, नी ?
उण्मयुटे यूर्जितविशुद्धमतु पोयी,
निष्फलिमयान्मरियात्तनिलयायि,
इम्महियिलेन्दिनिनि वाष्वतु ज्ञाने -
न्नुण्मलर करिञ्ञायिशुभे, करवतोमी ?

भावार्थ है, फूल से स्पर्धा करनेवाली कोमल काया से युक्त तुम्हारा कपोल मलिन दर्पण के समान दुख से कान्तिहीन हो गया है । सरले ! खिन्न मन के साथ हाथ में मुख थाम कर क्यों तुम रो रही हो ? जगत् से सत्य की उज्ज्वल गरिमा तिरोहित हुई, मेरी महिमा अब कौन समझेगा ? जगत् में मैं क्यों जीवित रहूँ ? क्या यह सोच कर तुम रो रही हो ?

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने खिन्नमना नारी के रूप में सरलता की कल्पना की है जो आजकल के संसार की उपेक्षा से दुखी है ।

"प्रसाद" के समान आशान ने भी मृत्यु को मूर्त्त रूप में चित्रित किया है । उन्होंने मृत्यु को मूर्त्त रूप देकर लिखा है कि वह मृत्यु युद्ध क्षेत्र में यश लिप्सा से लड़नेवाले वीरों को आराम देती है और विफल प्रेम से व्यथित होने वाली सुन्दरियों की व्यथा दूर करने के लिए उन्हें अपने शीतल अंक में स्थान देती है । निम्नलिखित अवतरण का यही भाव है -

नेराणायतु हा ! शुभे ! भयदमाम
वनतोक्कु तन वायिला -
वीराख्ययकु कोतिक्कु मत्रे तरुण -
क्कारिवासमेकुन्नु नी ।

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - दूसरा भाग - पृ. 116

आरायुम्मितु रागपुष्प कृतिमेल
मुल्लेट्ट नोवाददुवान
तारारमेनिकल तन्ने शीततरमाम
निश्वासंगम मृते[1] ।

आशान का यह चित्रण "कामायनी" के चिन्ता सर्ग में हुए मृत्यु के चित्रण का स्मरण दिला देता है ।

धृष्ठता नामक मनोभाव का चित्रण करते हुए महाकवि उल्लूर ने उसे हृदय का कोढ कहा है । निम्नलिखित अवतरण का यही भाव है । यथा,

एश्युम लोकत्तिन्नुद्वेग हेतुक -
मोढत्यम्न - हृत्तिले कुष्ठरोगम[2] ।

इसी प्रकार नम्रता का वर्णन करते हुए उल्लूर ने उसे मंगलदायक कामधेनु माना है । यथा,

नम्रते निन्ने ज्ञानाश्रयिक्कीटुन्नु
जन्मं कृतार्थमाय् त्तीर्न्नुकोल्वान,
इम्मियियिल ज्ञान काणुमोमम मानुष -
कर्मन्तान कल्याण कामधेनु[3] ।

---

1. कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - प्रथम भाग - पृ.509
2. उल्लूरिन्टे पद्य कृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.464
3. वही

अर्थात्, हे नमस्ते ! मेरा जन्म कृतार्थ होने केलिए मैं तेरा शरण लेता हूँ । मेरी दृष्टि में तू इस संसार के मनुष्यों की जननी है, मंगलकारी कामधेनु है ।

चंपुषा के "प्रलोभन" नामक कविता की निम्नलिखित पंक्तियों में कवि प्रलोभन की निन्दा करके कहते हैं -

अस्तक्तेन्नुविलक्किकयिट्टु -
मनुसरिक्कीटात्त विभ्रममे,
अकलेप्पो वेगम अग नल्लयेंगि -
लटिमयाक्कीटम पिटिच्चु निन्ने !
मति मति मायिक मन्दहासम
मलिनते, निन्मुखत्तार नोक्कुम ?[1]

अर्थात्, मेरे बार-बार मना करने पर भी न मानने वाले विभ्रम, जल्दी दूर चल, नहीं तो, मैं तुझे पकड़ कर गुलाम बना दूँगा । हे मालिन्य, तेरा माया मन्दहास खतम कर, तेरे मुख पर कौन देखेगा ?
यहाँ भी भाव-सौन्दर्य का चारु रूप मिलता है ।

निष्कर्ष

दोनों भाषाओं के कवियों ने भाव-सौन्दर्य का मनोयोगपूर्ण वर्णन किया है । किन्तु मलयालम के कवियों की अपेक्षा हिन्दी के कवि ही इस में आगे हैं । भाव-सौन्दर्य चित्रण में विस्तार और विविधता हिन्दी के कवियों में ही अधिक मिलती है। विशेषत: "प्रसाद" की कविता में । उनके महाकाव्य "कामायनी" में अनेक भावों के सौन्दर्य-चित्र पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं । वस्तुत: "कामायनी" भाव-सौन्दर्य की चारु चित्रशाला है । भाव-सौन्दर्य चित्रों के गुण और परिमाण की दृष्टि से हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवि अधिक सफल निकलते हैं ।

---

1. चंपुषा कृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.419

3. कर्म-सौन्दर्य

हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने भाव-सौन्दर्य का जितना विशद चित्रण किया है, उतना कर्म-सौन्दर्य का नहीं किया है । "प्रसाद" जी की कविता ही इसका स्पष्ट प्रमाण है । उनकी कविता में भी भाव-सौन्दर्य की तुलना में कर्म-सौन्दर्य अधिक नहीं है । इसका कारण यह है कि उनकी कविता भाव-प्रधान है जिस में कर्म का अधिक विस्तार नहीं है । उनके महाकाव्य "कामायनी" में भी कर्म का विस्तार नहीं है, उसमें भावों का सौन्दर्य-विधान ही प्रधान है । फिर भी कहीं-कहीं उन्होंने कर्म-सौन्दर्य का वर्णन भी किया है ।

पुरुष की अपेक्षा नारी का कर्म सौन्दर्य चित्रण ही कवि को अधिक प्रिय रहा है । "कामायनी" में नारी के कर्म-सौन्दर्य का सजीव चित्र अंकित किया गया है । श्रद्धा एक गृह-लक्ष्मी की भांति अपने भावी शिशु के लिए उन कातती, वस्त्र बनाती, बीजों का संग्रह करती और सुन्दर कुटीर का निर्माण करती है । गर्भ की पीड़ा को सहती हुई भी वह दिन रात इन कार्यों में व्यस्त रहती है ।

कर्म-सौन्दर्य का दूसरा चित्र वहां मिलता है जहां श्रद्धा मनु की खोज में निकल पड़ती है और सारस्वत नगर में अपने प्राणप्रिय को मुमूर्ष अवस्था में देखती है । वह अपने मधुर स्पर्श के अनुलेप तथा स्निग्ध स्वर के संजीवन-रस से मनु को सचेत कर देती है -

"आह प्राणप्रिय ! यह क्या ? तुम यों ?
धुला हृदय बन नीर बहा ।
इड़ा चकित, श्रद्धा आ बैठी
वह थी मनु को सहलाती,
अनुलेपन - सा मधुर स्पर्श था

व्यथा भला क्यों रह जाती ?
उस मूर्च्छित नीरवता में कुछ
हल्के-से स्पन्दन आये,
आँखें खुलीं चार कानों में
चार बिन्दु आकर छाये।[1]

अंत में वह अपने रूठे हुए पति के हृदय में पुन: अनुराग उत्पन्न करके अपने महत्व में चार-चाँद लगा देती है। इस तरह "कामायनी" में नारी के कर्म-सौन्दर्य की ऐसी मनोरम झाँकी प्रस्तुत की गयी है कि सर्वत्र उसी का व्यक्तित्व महान दिखाई देता है और वही मानव को पशुता से मानवता की ओर ले जानेवाली सिद्ध होती है।[2]

"कामायनी" के नायक मनु यद्यपि कर्म में प्रवृत्त कम ही दिखाये गये हैं तथापि संघर्ष आदि सर्गों में संघर्ष के बीच उनका कर्म-सौन्दर्य निखरता है। "कामायनी" के अंतिम सर्गों में "प्रसादजी" ने जगत् की ज्वाला से संतृप्त तथा पथभ्रष्ट मनु को समस्त द्वन्द्वों के ऊपर समरसता की उच्च भूमि में पहुँचाकर शील और आनन्द प्रदान करने वाली श्रद्धा के द्वारा कर्म-सौन्दर्य का विधान किया है।

पंत जी चींटी-जैसी तुच्छ प्राणी में भी कर्म-सौन्दर्य का भव्य रूप दर्शाते हैं। यथा,

चींटी को देखो ?
x x x
देखो ना, किस भाँति
काम करती वह संतत !

---

1. कामायनी - निर्वेद सर्ग
2. डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना - कामायनी में काव्य संस्कृति और दर्शन-पृ.213

कन कन कनके चुनती अविरत ।
गाय चराती
धूप खिलाती,
बच्चों की निगरानी करती,
लड़ती अरि से तनिक न डरती ।
दल के दल सेना संवारती
घर आंगन, जन-पथ बुहारती ।[1]

"निराला" की तोड़ती पत्थर नामक कविता में भी कर्म सौन्दर्य का सजीव चित्रण मिलता है । यथा,

वह तोड़ती पत्थर,
देखा उसे मैं ने इलाहाबाद के पथ पर -
वह तोड़ती पत्थर ।
नहीं छायादार
पेड़ वह जिस के तले बैठी हुई स्वीकार,
श्याम तन, भर बंधा यौवन,
नत नयन, प्रिय कर्म रत मन,
गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार बार प्रहार -[2]

मलयालम के रोमांटिक कवियों ने भी भाव-सौन्दर्य के साथ साथ कर्म-सौन्दर्य का अभिराम चित्रण किया है । आशान की कविता में ही इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं । मुख्यतः खण्डकाव्यकार होने के कारण आशान को कर्म-प्रसार के

---

1. सुमित्रानंदन पंत - आधुनिक कवि-2- पृ. 75
2. निराला - अनामिका

वर्णन का अवसर प्राप्त है । निम्न लिखित अवतरण में एक चण्डाल बाला के कर्म-सौन्दर्य का विधान दर्शनीय है -

वृत्यंकल कालम् तेट्टाते अवल
प्रत्यहम् चेय्युम माष्काते ।
तामरपूत्तु मणम् वीशुन्नु -
कोमल नीरेलुम कुलत्तिल
कैयिल चेब्कुटम् ताङ्डी - मद्दु
तयवलमारोटोत्तिरङ्डी,
कोरुम् जलम्वल पोयी - क्षेम्नु
चारु महिलालयत्तिल,
मुट्टत्तेपुन्न पूवल्लि-निर
मुट्टम रसत्तिल ननयुक्कुम्
श्लाध्यराम्धर्ममाताक्कल - तन्टे
कालक्कल वच्चम्बिल वणङ्डुम् ।[1]

भावार्थ है, वह प्रतिदिन यथासमय अपना काम करती थी। प्रफुल्ल कमलों की सुगन्ध से युक्त शीतल जल भरे तालाब में वह हाथ में घड़ा लेकर, सखियों के साथ उतरती थी और पानी भर के महिलालय के आंगन की लताओं को सींचती थी । सहर्ष फूलों को चुनकर वह आदरणीया माताओं के चरणों में रखकर प्रणाम करती थी । अपने कर्त्तव्य कर्मों की पूर्ति का दृढ संकल्प करने वाली ब्राह्मण-कन्या सावित्री चमार कुमारियों का काम करती है । वह खेत में अनाज के पौधे लगाने और फसल काटने केलिए प्रस्तुत हो जाती है । वह निश्चय करती है कि मैं प्रतिदिन सबेरे ही उठ कर जाऊँगी और सांझ तक अपना काम करूँगी । घोर

1• कुमारन आशान्टे पद्यकृतिकल - द्वितीय भाग - 241-242

धूप, वर्षा, जाडा सब को मैं सहूँगी । कीचड से भरे खेत में उतर कर मैं अनाज के पौधे लगाऊँगी । प्रचण्ड धूप से मेरे ललाट में दीखनेवाले पसीने के मोतियों को पोंछ दूँगी । काम से मेरे दुर्बल अंग थक जायेंगे तो मैं कुछ समय विश्राम करूँगी ।

आशान ने कर्म-सौन्दर्य के और भी कई चित्र अंकित किये हैं । "चण्डाल-भिक्षुकी" में कुए से पानी भरनेवाली चण्डाल कन्या में, "करुणा" में "वासवदत्ता" की सेवा करनेवाली सेवापरायण सखी में कर्म सौन्दर्य दर्शाया गया है । संक्षेप में, आशान की कविता में कर्म-सौन्दर्य के छोटे-बडे अनेक चित्रों का विधान है ।

"उल्लूर" की "रिक्षा" नामक कविता की निम्नलिखित पंक्तियों में भी कर्म सौन्दर्य का मनोरम रूप मिलता है । यथा,

पायुन्नु मुन्नोट्टेक्कु
रिक्षयुम वलिच्चु को -
ण्डायुस्सिन बलत्तिनाल -
च्चावाते चावोनेकन ।
कण्णुम नटत्तियुम,
चुट्टलुम पेटुम वस्तु -
वोन्निलुम मुट्टातेयु -
मोटियलञ्ञाटातेयुम,
पडिच्चयुम पकच्चयुम,
वेरप्पलुम कण्णीरिलुम
मुक्किच्चयुम अरच्चियुम
पोकुन्नोनवन्नयपो ।

---

1. उल्लूरिन्टे पद्यकृतिकल - द्वितीय भाग - पृ.500

अर्थात्, वह रिक्शावाला अपनी आयु के बल पर रिक्शा खींचते हुए आगे की ओर दौड़ रहा है । वह इधर-उधर दृष्टि डालते हुए, किसी से टकराये बिना, नाले में गिरे बिना किसी न किसी प्रकार पसीने और आंसु से तर होकर चीखते हुए दौड़ रहा है ।

यद्यपि यहाँ रिक्शावाले की दीन स्थिति पर कवि संकेत कर रहे हैं, फिर भी कर्म-सौन्दर्य का भव्य रूप भी देखने को मिलता है ।

"जी· शंकर कुरुप" की निम्नलिखित पंक्तियों में भी कर्म-सौन्दर्य का अभिराम रूप द्रष्टव्य है । यथा,

आ पहुँचा किसान
हाँकता हुआ अपने बैलों को
जिन के सींग हैं धूम धूसरित
कभी कभी सहला देता है पीठ उनकी
अपने दुर्बल कन्धों पर उठाये हुए है वह हल जिस ने मानव संस्कृति में परिवर्तन की प्रथम गीत - रेखाओं को अंकित किया[1] ।

निष्कर्ष

उपर्युक्त अध्ययन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि परिमाण में मलयालम स्वच्छन्दतावादी काव्य में कर्म-सौन्दर्य के चित्र अधिक हैं । हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों की अपेक्षा मलयालम के कवि इस दिशा में बहुत आगे हैं । आशान्, उल्लूर और चंगंपुषा जैसे कवियों की काव्य-कृतियाँ कर्म-सौन्दर्य के वैशिष्ट्यपूर्ण चित्रों से संपृक्त हैं ।

1· जी· शंकर कुरुप - ओटक्कुषल [अनुवाद] पृ·199

छठा अध्याय

उपसंहार

पिछले अध्यायों में हमने हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में अभिव्यक्त प्रेम और सौन्दर्य का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया। यह सर्वविदित है कि हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य पर पाश्चात्य रोमान्टिक कविता का प्रभाव परिलक्षित होता है। पाश्चात्य रोमान्टिक कविता में भी प्रेम और सौन्दर्य प्रमुख प्रतिपाद्य रहे हैं। कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से पाश्चात्य रोमान्टिक कवियों ने कई भारतीय स्वच्छन्दतावादी कवियों को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित किया है। पाश्चात्य रोमान्टिक कवियों में अँग्रेज़ी रोमान्टिक कवियों का प्रभाव हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य पर पड़ा है। इसी कारण हमने आरंभ में पाश्चात्य रोमान्टिक काव्य का संक्षिप्त परिचय देने का प्रयत्न किया है। इसका यह अभिप्राय कदापि नहीं कि हिन्दी और मलयालम का स्वच्छन्दतावादी काव्य पाश्चात्य रोमान्टिक कविता से ही प्रेरित काव्यधारा है। वस्तुत: इस देश की सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक तथा साहित्यिक कई परिस्थितियों के समन्वित प्रभाव के रूप में यहाँ स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा फूटी है।

कालक्रम की दृष्टि से हिन्दी की अपेक्षा मलयालम में स्वच्छन्दतावादी कविता पहले लिखी गयी है। अर्थात् स्वच्छन्दतावादी काव्य की शुरूआत पहले मलयालम में हुई, बाद में हिन्दी में। इसका कारण स्पष्ट है। हिन्दी प्रदेश की अपेक्षा केरल प्रदेश में अँग्रेज़ी भाषा और साहित्य का प्रचार-प्रसार पहले हुआ था। इतना ही नहीं, मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्यधार के अग्रणी और अग्रदूत कवि कुमारन आशान को कुछ वर्ष बंगाल में रहने और वहाँ के नूतन

काव्योन्मेष को समझने का अवसर प्राप्त हुआ था । भले ही कालक्रम की दृष्टि से हिन्दी में स्वच्छन्दतावादी काव्य मलयालम की अपेक्षा एकाध वर्ष बाद फूटा है।परिमाण और गुण में हिन्दी का स्वच्छन्दतावादी काव्य मलयालम के समान अत्यन्त समृद्ध है ।

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य का प्रमुख प्रतिपाद्य प्रेम और सौन्दर्य है । प्रेम और सौन्दर्य के विषय में दोनों भाषाओं के कवियों की अवधारणा में समानता परिलक्षित होती है ।

हिन्दी काव्य के इतिहास में प्रेम के स्वाभाविक और उदात्त रूप की अभिव्यक्ति आधुनिक काल में स्वच्छन्दतावादी काव्य में ही हुई है । इसके पूर्व प्रेम के चित्रण में इतना वैविध्य और इतनी गरिमा दिखायी नहीं देती । जहाँ तक स्त्री-पुरुष प्रेम की बात है, हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में उसकी सहज और मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है । उसके पूर्व रीतिकालीन कविता में शृंगार का वासनामय मांसल रूप ही सर्वाधिक मात्रा में चित्रित हुआ था । इसकी प्रतिक्रिया द्विवेदी युग के प्रेम-चित्रण में प्रकट हुई । द्विवेदी युग के कवि अपनी नैतिक आदर्शवादिता के कारण प्रेम की सहज और मार्मिक अनुभूति की अभिव्यक्ति में असफल रहे । कवियों की सुधारवादी और मर्यादावादी दृष्टि के कारण द्विवेदी युग की कविता में अभिव्यक्त प्रेम आदर्श-प्रेम का अस्वाभाविक रूप मात्र था । इसकी प्रतिक्रिया स्वच्छन्दतावादी कविता में लक्षित हुई । स्वच्छन्दतावादी कवियों ने सहज और उदात्त प्रेमानुभूति की मार्मिक अभिव्यक्ति की । इतना ही नहीं, व्यक्ति से लेकर विश्व तक व्याप्त प्रेम के समस्त रूप स्वच्छन्दतावादी काव्य में अंकित हुए ।

मलयालम कविता के इतिहास में भी सहज तथा उदात्त प्रेम की मार्मिक अभिव्यक्ति स्वच्छन्दतावादी कवियों के द्वारा सम्पन्न हुई । इसके पूर्व

वेण्मणि युग की कविता हिन्दी की रीतिकालीन कविता के समान मांसल प्रेम के वासनामय चित्रों से ओत-प्रोत थी । तदनन्तर केरलवर्मा युग की कविता, हिन्दी की द्विवेदी युगीन कविता के समान उत्कट प्रेमानुभूति के अंकन में संकोच करती रही । अतएव स्त्री-पुरुष प्रेम की स्वाभाविक अनुभूति की अभिव्यक्ति कविता में नहीं हो पायी । कुमारन आशान जैसी स्वच्छन्दतावादी कवियों के आने के बाद ही मलयालम कविता में प्रेमानुभूति की तीक्ष्ण अनुभूति ने वाणी पायी । स्त्री-पुरुष प्रेम के अतिरिक्त प्रेम के जितने अन्य रूप हैं उन सब को मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अभिव्यक्ति दी है ।

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों के द्वारा प्रेम के निम्नलिखित रूप मुख्य रूप से चित्रित हुए हैं - (1) स्त्री-पुरुष-प्रेम (2) प्रकृति-प्रेम (3) देश-प्रेम (4) विश्व-प्रेम (5) ईश्वरीय-प्रेम ।

हिन्दी और मलयालम के काव्य के इतिहास में स्त्री-पुरुष प्रेम के चित्रण में स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अभूतपूर्व सफलता पायी । दोनों भाषाओं के स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम के संयोग तथा वियोग दोनों पक्षों का उद्घाटन हुआ है । हिन्दी के जयशंकर प्रसाद और मलयालम के कुमारन आशान प्रेम की नाना अन्तर्दशाओं के चित्रण में सर्वाधिक सफल निकले हैं । हिन्दी में प्रसाद के अतिरिक्त पंत, निराला जैसे कवियों की कृतियों में भी प्रेमानुभूति की मार्मिक व्यंजना हुई है । मलयालम में आशान के पश्चात् उल्लूर, वल्लत्तोल जैसे कवियों ने प्रेमानुभूति का मनोयोग से अंकन किया है । संक्षेप में कहा जा सकता है कि स्त्री-पुरुष प्रेम के चित्रण में दोनों भाषाओं के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने समान रूप से अभूतपूर्व सफलता पायी है ।

प्रकृति मानव की चिर सहचरी रही है । पाश्चात्य रोमान्टिक कवियों ने अपनी रचनाओं में प्रकृति के प्रति अपनी गहरी अनुरक्ति का परिचय दिया है । हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में कवियों का अनन्य

प्रकृति-प्रेम द्रष्टव्य है । दोनों भाषाओं के कवियों ने प्रकृति से गहरी आत्मीयता स्थापित की है और नानारूपात्मक प्रकृति के प्रत्येक स्पन्दन से प्रेरणा पायी है । दोनों भाषाओं के स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रकृति-प्रेम परिमाण में समानरूप से वर्त्तमान है ।

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में देश-प्रेम की अभिव्यक्ति पर्याप्त मात्रा में हुई है । देश के नवजागरण काल में रचित स्वच्छन्दतावादी काव्य में सांस्कृतिक चेतना और राष्ट्रीयता के दर्शन होते हैं । हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने देश की सांस्कृतिक-गरिमा का उच्च स्वर से गायन किया है । उनका देश-प्रेम सांस्कृतिकता की उदात्त भूमि पर अवस्थित प्रतीत होता है ।

विश्व-प्रेम को वाणी देने में हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवि समान रूप से सफल हुए हैं । चराचर जगत के प्रति उन कवियों ने समान रूप से सहानुभूति और आत्मीयता का परिचय दिया है । मानव के महत्त्व को स्वीकार करनेवाले ये स्वच्छन्दतावादी कवि मानव-प्रेम के उदात्त रूप को अपनी रचनाओं में उद्घाटित करने में समर्थ हुए हैं । हिन्दी और मलयालम का स्वच्छन्दतावादी काव्य विश्व-प्रेम की अभिव्यक्ति की दृष्टि से समान रूप से स्तुत्य हैं ।

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में आस्तिकता की अन्तर्धारा प्रवहमान है । दोनों भाषाओं के स्वच्छन्दतावादी काव्य में ईश्वरीय-प्रेम की व्यंजना उल्लेखनीय है । चराचरजगत् में सर्वत्र वर्त्तमान परम-प्रभु की महिमा स्वच्छन्दतावादी कवियों ने स्वीकार की है । उस परमप्रभु के प्रति अनन्य प्रेम और भक्ति स्वच्छन्दतावादी काव्य में यत्र-तत्र लक्षित होती है । ईश्वरीय-प्रेम की अभिव्यंजना में हिन्दी और मलयालम के कवि समकक्ष हैं ।

प्रेम के समस्त भेदों को मनोयोग से उद्घाटित करने में, उनकी सूक्ष्मातिसूक्ष्म अन्तर्दशाओं को अभिव्यक्ति देने में हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवि सफल हैं, समक्ष हैं ।

स्वच्छन्दतावादी कवियों का अपना सौन्दर्य-दर्शन है । वे सौन्दर्य को मात्र वस्तुनिष्ठ नहीं मानते । सौन्दर्य उनके लिए व्यक्तिनिष्ठ है । इसी कारण स्वच्छन्दतावादी कवियों ने सौन्दर्य का व्यक्तिनिष्ठ वर्णन किया है । सौन्दर्य का अत्यन्त उदात्त रूप हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों द्वारा उद्घाटित हुआ है । दोनों भाषाओं के कवियों की सौन्दर्य संबन्धी अवधारणा में अद्भुत समानता है । दोनों भाषाओं के स्वच्छन्दतावादी काव्यों में सौन्दर्य के निम्नांकित रूप वर्णित हैं । §1§ रूप-सौन्दर्य §2§ भाव-सौन्दर्य और §3§ कर्म-सौन्दर्य । रूप-सौन्दर्य के अन्तर्गत हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने मानव-सौन्दर्य और प्रकृति-सौन्दर्य का मनोरम वर्णन किया है । मानव-सौन्दर्य के अन्तर्गत नारी-सौन्दर्य और पुरुष-सौन्दर्य दोनों भाषाओं के कवियों द्वारा वर्णित हुए हैं । नारी के सौन्दर्यांकन में दोनों भाषाओं के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने सूक्ष्म दृष्टि का परिचय दिया है । नारी की बाह्य-रूप-छवि के साथ आन्तरिक सौन्दर्य को अनावृत करने में भी उन्होंने विशेष ध्यान दिया है । हिन्दी के प्रसाद और मलयालम के आशान दोनों कवियों ने नारी के भव्य मंगल रूप के अंकन में सफलता पायी है । इस दृष्टि से प्रसाद जी सर्वाधिक उल्लेखनीय कवि कहे जा सकते हैं । उन्होंने "कामायनी" में श्रद्धा के रूप में विश्व की कल्याण कामना मूर्ति नारी का अभिराम रूपांकन किया है । श्रद्धा में नारी की बहिरन्तर छवियों और लोक कल्याण कामनाओं का सुन्दर संगम द्रष्टव्य है । नारी के ऐसे मंगल रूप का सम्पूर्ण चित्रण मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में दृष्टिगत नहीं होता । वैसे कुमारन आशान ने एकाध रेखाओं में ऐसी मंगलमयी नारी की ओर संकेत किया है । किन्तु पूर्ण चित्रांकन उनके काव्य में नहीं हुआ है । नारी के सामान्य तथा असामान्य मादक रूपों के चित्र दोनों भाषाओं के स्वच्छन्दतावादी काव्य में सुलभ हैं ।

हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में नारी-सौन्दर्य के रमणीय चित्रों की तुलना में पुरुष-सौन्दर्य के चित्र कम हैं। फिर भी मानव जीवन के सौन्दर्योद्घाटन में युगल भाषाओं के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने यथासंभव पुरुष-सौन्दर्य का भी अंकन किया है। पुरुष-सौन्दर्य के चित्रण की वैविध्य की दृष्टि से मलयालम स्वच्छन्दतावादी काव्य हिन्दी की अपेक्षा अधिक समृद्ध कहा जा सकता है। कुमारन आशान के काव्य में पुरुष-सौन्दर्य के अनेक विध चित्र उपलब्ध होते हैं। प्रसादजी ने "कामायनी" में मनु के रूप में पुरुष सौन्दर्य के अंकन की कुशलता का परिचय दिया है। किन्तु आशान के पुरुष-सौन्दर्यांकन की विविधता प्रसाद में नहीं है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि मलयालम का स्वच्छन्दतावादी काव्य पुरुष-सौन्दर्य के चित्रण की दृष्टि से अधिक सम्पन्न है

प्रकृति स्वच्छन्दतावादी काव्य का प्रमुख प्रतिपाद्य रही है। हिन्दी और मलयालम का स्वच्छन्दतावादी काव्य प्रकृति के नानाविध चित्रों से सम्पन्न है। युगल भाषाओं के कवियों ने प्रकृति का सौन्दर्यदोहन किया है। प्रकृति अनेक रूपों में स्वच्छन्दतावादी काव्य में चित्रित हुई है। आलम्बन और मानवीकरण के रूप में प्रकृति का चित्रण हिन्दी में अधिक हुआ है। इसी प्रकार उपदेश और नीति के रूप में प्रकृति हिन्दी के कवियों के द्वारा अधिक वर्णित हुई है संक्षेप में, प्रकृति-सौन्दर्य चित्रण में वैविध्य की दृष्टि से हिन्दी का स्वच्छन्दतावादी काव्य अधिक समृद्ध है। परिमाण और गुण में हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य का प्रकृति-सौन्दर्यांकन मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य के प्रकृति-सौन्दर्यांकन की अपेक्षा अधिक सम्पन्न है।

रूप-सौन्दर्य के साथ-साथ भाव-सौन्दर्य के अंकन में भी हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अपनी क्षमता का परिचय दिया है। सूक्ष्म मनोभावों को वाणी देने में दोनों भाषाओं के कवियों ने अपनी कवित्व-शक्ति प्रकट की है। भाव-सौन्दर्य के चित्रण में विस्तार और विविधता हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों में अधिक है। हिन्दी का स्वच्छन्दतावादी

काव्य शत-शत भाव-चित्रों से सम्पन्न है । सूक्ष्म मनोभावों के सौन्दर्यांकन में प्रसाद हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों में अद्वितीय हैं । उनका महाकाव्य "कामायनी" भाव-सौन्दर्य की रमणीय चित्रशाला है ।

वैसे हिन्दी और मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में कर्म-सौन्दर्य का चित्रण पर्याप्त मात्रा में हुआ है । किन्तु तुलनात्मक अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि हिन्दी की अपेक्षा मलयालम के स्वच्छन्दतावादी काव्य में कर्म-सौन्दर्य के वैविध्यपूर्ण चित्र प्रचुर परिमाण में उपलब्ध हैं । आशान, वल्लत्तोल, उल्लूर, चंगंपुष़ा जैसे मलयालम के कवियों की रचनाओं में जीवन के नाना क्षेत्रों में कर्मरत भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के माध्यम से कर्म-सौन्दर्य के नानाविध चित्र द्रष्टव्य हैं ।

पिछले अध्यायों के अध्ययन के उपरान्त हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि हिन्दी और मलयालम का स्वच्छन्दतावादी काव्य अत्यन्त समृद्ध है । आधुनिक हिन्दी काव्य की अत्यन्त पुष्कल काव्य-धारा है स्वच्छन्दतावादी काव्य-धारा । इसी प्रकार आधुनिक मलयालम काव्य की नितान्त समृद्ध काव्य-धारा है स्वच्छन्दतावादी काव्य-धारा । प्रेम और सौन्दर्य को वाणी देने में दोनों भाषाओं के स्वच्छन्दतावादी कवि समान रूप से सफल हुए हैं । हिन्दी और मलयालम के आधुनिक कविता के इतिहास में प्रेम और सौन्दर्य की अभिव्यक्ति की दृष्टि से सर्वाधिक सम्पन्न युग स्वच्छन्दतावादी काव्य-युग है ।

सहायक ग्रंथ-सूचि

हिन्दी

1· अपरा — "निराला"
साहित्यकार संसद, प्रयाग, पंचम संस्करण, 1963

2· अनामिका — "निराला"
भारती भंडार, इलाहाबाद, चतुर्थ संस्करण, 1963

3· अंजलि — डॉ· रामकुमार वर्मा
साहित्य भवन लिमिटेड, प्रयाग

4· आधुनिक कवि — महादेवी वर्मा
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, सं·2003

5· आधुनिक कवि — सुमित्रानंदन पंत
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, सं2010

6· आधुनिक काव्य-रचना और विचार — नंददुलारे वाजपेयी
साथी प्रकाशन, सागर, 1962

7· आधुनिक काव्यधारा — डॉ· केसरी नारायण शुक्ल
नन्दकिशोर एण्ड संस, बनारस, 1961

8· आधुनिक हिन्दी काव्य — कुमार विमल
अर्चना प्रकाशन, बिहार, 1964

9· आधुनिक हिन्दी काव्य में प्रतीक विधान — डॉ· नित्यानंद शर्मा
साहित्य सदन, देहरादून, प्रथम सं·, सं·2023

10· आधुनिक हिन्दी काव्य तथा मलयालम काव्य — डॉ· एन·ई· विश्वनाथ अय्यर,
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1970

11· आधुनिक हिन्दी कविता में- अलंकार विधान — डॉ· जगदीशनारायण त्रिपाठी
अनुसंधान प्रकाशन, कानपुर, 1962

12· आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्द धारा — डॉ· त्रिभुवन सिंह
हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, 1961

13· आधुनिक हिन्दी कविता: सिद्धांत और समीक्षा — डॉ· विश्वंभरनाथ उपाध्याय
प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1962

14· आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य — डॉ· रामेश्वरलाल खण्डेलवाल
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1958

15· ओटक्कुषल - अनुवाद — जी·एन· पिल्ले
भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 1966

16· आँसू — जयशंकर प्रसाद
भारती भंडार, प्रयाग, 1961

17· कवि सुमित्रानंदन पंत — आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी
दि मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड, 1976

18· कानन कुसुम — जयशंकर प्रसाद
पुस्तक भंडार, लहेरिया सराय, बिहार

19· कामायनी — जयशंकर प्रसाद
भारती भंडार, इलाहाबाद, एकादश संस्करण, 1961

20· कामायनी में काव्य संस्कृति और दर्शन — डॉ· द्वारिका प्रसाद सक्सेना
विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 1963 ·

21· काव्य, कला तथा अन्य निबंध — जयशंकर प्रसाद
भारती भंडार, इलाहाबाद, सं·2010

22· काव्य में सौन्दर्य और उदात्त तत्व — शिवबालक राय
वसुमती, इलाहाबाद

23· गुंजन — सुमित्रानंदन पंत
भारती भण्डार, इलाहाबाद, 1961

24· गन्धवीथी — सुमित्रानंदनपंत
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1973

25· ग्रंथि — सुमित्रानंदन पंत
भारती भण्डार, इलाहाबाद, चतुर्थ सं·
सं·2014

26· ग्राम्या — सुमित्रानंदन पंत
भारती भण्डार, इलाहाबाद, पांचवां संस्करण,
सं·2013

27· चन्द्रगुप्त — जयशंकर प्रसाद
भारती भंडार, प्रयाग

28· चिन्तामणि - भाग - 1 — पं· रामचन्द्र शुक्ल
इण्डियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

29· चिन्तामणि - भाग - 2 — पं· रामचन्द्रशुक्ल
सरस्वती मंदिर, काशी

30· चिद्विलास — बाबू सम्पूर्णानन्द

31·	चिदम्बरा	सुमित्रानंदन पंत राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1966
32·	छायावाद का पतन	डॉ· देवराज वाणी मंदिर प्रेस, छपरा, 1948
33·	जयशंकर प्रसाद-चिन्तन व कला	डॉ· इन्द्रनाथ मदान हिन्दी भवन, जालंधर, इलाहाबाद,1956
34·	जयशंकर प्रसाद - वस्तु और कला	डॉ· रामेश्वर लाल खण्डेलवाल नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1968
35·	जायसी ग्रन्थावली - भूमिका	पं· रामचन्द्रशुक्ल नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, सं·2003
36·	झरना	जयशंकर प्रसाद भारती भंडार, प्रयाग
37·	तारापथ	सुमित्रानन्दन पंत लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, तृतीय संस्करण, 1972
38·	दर्शन और जीवन	पं· रामचन्द्रशुक्ल
39·	दोहावली	तुलसीदास - वामदेव शर्मा - रामनारायणलाल बेनीमाधव इलाहाबाद ।
40·	परिमल	सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला गंगा पुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ, अष्टम संस्करण, 1960

41· पल्लव — सुमित्रानंदन पंत
इण्डियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग

42· प्रसाद का काव्य — डॉ· प्रेमशंकर
भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, सं·2012

43· प्रसाद का साहित्य-प्रेमतात्विक दृष्टि — प्रभाकर श्रोत्रिय
आत्मराम एण्ड संस, दिल्ली, 1975

44, प्रसाद का विकासात्मक अध्ययन-किशोरीलाल गुप्त
साहित्य रत्न माला कार्यालय, बनारस

45· प्रेम-पथिक — जयशंकर प्रसाद
भारती भंडार, प्रयाग

46· प्रेम संगीत — भगवतीचरण वर्मा
विशाल भारत बुक डिप्पो, कलकत्ता, चतुर्थ संस्करण, 1949

47· बुद्धितरंग — पं· सद्गुरुशरण अवस्थी

48· भंवरगीत — सूरदास

49· मधुशाला — बच्चन
राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, पन्द्रहवां संस्करण, 1961

50· महादेवी वर्मा - काव्य कला और जीवन दर्शन — शचीरानी गुर्टू
आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली, 1951

51· महाकवि कुमारन आशान — केरल हिन्दी साहित्य मंडल, कोच्चिन, 1974

52· निराला - काव्य और व्यक्तित्व-धनन्जयवर्मा — विद्या प्रकाशन मन्दिर, दिल्ली, 1960

53· यामा — महादेवी वर्मा
भारती भंडार, इलाहाबाद, चतुर्थ संस्करण, सं·2018

54· युगवाणी — सुमित्रानंदन पंत
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, चतुर्थ संस्करण, 1959

55· युगान्त — सुमित्रानंदन पंत
भारती भण्डार, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण, सं·2015

56· रामचरित "मानस" — तुलसीदास
गीता प्रेस, गोरखपुर, द्वादर्श संस्करण, सं·2019

57· लहर — जयशंकर प्रसाद
भारती भण्डार, लीडर प्रेस, प्रयाग, सं·2004

58· साठ वर्ष एक रेखांकन — सुमित्रानंदन पंत
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1960

59· साहित्य और सौन्दर्य — डा· फतहसिंह
संस्कृति सदन, कोटा, राजस्थान

60· सन्धिनी — महादेवीवर्मा
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1965

61· सौन्दर्य विज्ञान — हरवंश सिंह

62· स्वर्ण किरण — सुमित्रानंदन पंत
भारती भण्डार, इलाहाबाद, तृतीय संस्करण,
सं·2020

63· हिन्दी कविता में युगान्तर — डॉ· सुधीन्द्र
आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली

64· हिन्दी साहित्य - एक आधुनिक परिदृश्य — "अज्ञेय"
राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 1967

65· हिन्दी साहित्य का इतिहास — आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, सं·2003

66· हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य — डॉ· प्रेमशंकर
मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, प्रथम
संस्करण, 1974

मलयालम

67· आशान्टे सीता काव्यम — सुकुमार अषीक्कोड
साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम, कोट्टयम,
द्वितीय संस्करण, 1964

68· इसङ्ङलक्कप्पुरम् — एस· गुप्तन नायर
साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम, कोट्टयम, 1970

69· उमाकेरलम — उल्लूर एस· परमेश्वरय्यर
उल्लूर पब्लिशेर्स, ट्रिवेन्ड्रम, 1972

70· उल्लूर कविता — पी· करुणाकरन नायर

71· उल्लूरिन्टे पद्यकृतिकल-प्रथम भाग — उल्लूर एस· परमेश्वर अय्यर
साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम, कोट्टयम, 1977

72· उल्लूरिन्टे पद्यकृतिकल-द्वितीय भाग- — वही

73· ओणप्पाट्टुकार — वैलोप्पिल्लि श्रीधर मेनोन
साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम, कोट्टयम, 1952

74· काट्टुम वेलिच्चवुम् — एम· के· सानु - रवीन्द्रन, चेर्तला

75· कुमारन आशान — के· सुरेन्द्रन
साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम, कोट्टयम ।

76· कुमारन आशान्टे कविता — कविता समिति,
साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम, कोट्टयम

77· कुमारन आशान्टे पद्य कृतिकल प्रथम भाग — शारदा बुक डिप्पो, ट्रिवेन्ड्रम

78· कुमारन आशान्टे पद्य कृतिकल द्वितीय भाग — वही

79· कुमारन आशान्टे पद्य कृतिकल तृतीय भाग — वही

80· कुमारन आशान्टे काव्य प्रपंजम — नवोत्थान समिति, एरणाकुलम, 1973

81· के·सी· केशव पिल्ले — ए·डी· हरिशर्मा

82· केरल साहित्य चरित्रम चौथा भाग — उल्लूर एस· परमेश्वर अय्यर

83· चंगंपुषा कृतिकल - प्रथम भाग — चंगंपुषा कृष्ण पिल्ले
साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम, कोट्टयम, 1974

84. चंगंपुषा कृतिकल-द्वितीय भाग — चंगंपुषा कृष्णपिल्ले
साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम, कोट्टयम, 1974

85. जीयुटे काव्य साधना — जी. नारायण पिल्ले
नेशनल बुक स्टाल, कोट्टयम, 1966

86. नवचक्रवालम-नलिलियुम मट्टुम — के.एम. डानियल
साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम, कोट्टयम, 1973

87. पद्य साहित्य चरित्रम — टी.एम. चुम्मार
नेशनल बुक स्टाल, कोट्टयम, 1968

88. मलयालम साहित्य चरित्रम — पी.के. परमेश्वरन नायर
साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 1963

89. मनुष्य कथानुगायिकल — जोसफ मुण्डश्शेरी
मंगलोदयम प्राइवेट लिमिटेड, त्रिच्चूर, 1964

90. मुत्तुम चिप्पियुम — जी. शंकरकुरुप

91. रमणन — चंगंपुषा कृष्ण पिल्ले
साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघ, कोट्टयम,
छत्तीसवाँ संस्करण, 1972

92. वर्णराजि — डाॅ. एम. लीलावती
साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम, कोट्टयम, 1977

93. वल्लत्तोलिन्टे पद्य कृतिकल प्रथम भाग — साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम, कोट्टयम ।

94·	विश्व दर्शनम	जी· शंकरकुरुप साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम, कोट्टयम, 1966
95·	वीणपूवु कणमुन्पिल	के·एम· डानियल - पी· के· ब्रेदर्स, कोषिक्कोड, 1960
96·	वैलोपिल्लि कविता	मेलत्तु चन्द्रशेखरन साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम, कोट्टयम, 1977
97·	साहित्य मंजरी - प्रथम भाग	वल्लत्तोल नारायण मेनोन वल्लत्तोल ग्रन्थालयम, चेरुतुरुत्ति, 1963
98·	साहित्य मंजरी - द्वितीय भाग-	वही 1965
99·	साहित्य मंजरी - तृतीय भाग	वही 1964
100·	साहित्य मंजरी - चतुर्थ भाग	वही 1965
101·	साहित्य कौतुकम	जी·शंकरकुरुप साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम, कोट्टयम, 1968

संस्कृत

102·	अभिज्ञान शाकुन्तलम्	कालिदास भार्गव पुस्तकालय गायघाट, बनारस
103·	अमरकोष	अमरसिंह वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई

104· ईशावास्योपनिषद् — कल्याण उपनिषद् अंक में प्रकाशित, 1943

105· उत्तररामचरितम — भवभूति
विद्याविलास प्रेस, बनारस, 1949

106· काव्यप्रकाश — मम्मट
चौखम्बा संस्कृत सीरीज़, बनारस

107· नारदभक्तिसूत्र — महर्षिनारद
गीता प्रेस, गोरखपुर

108· मेघदूत — कालिदास
गोपाल नारायण एण्ड कंपनी, बंबई

109· मनुस्मृति — टीकाकार पं· जनार्दन झा
हिन्दी पुस्तक एजन्सी, कलकत्ता

110· रघुवंश — कालिदास
निर्णय सागर प्रेस, बंबई

111· वाचस्पत्यकोष

112· साहित्यदर्पण — पं· विश्वनाथ
श्री हेमचन्द्र तर्कवागीश, कलकत्ता ।

अंग्रेज़ी

113. A History of Modern Criticism — Rene Wellek, Vol.II - London, 1955

114. A History of English Criticism — George Saintsbury
Blackwoods, 1955

115.	A History of Aesthetic	Bernard Bosanquet Murihead Library of Philo. 1966
116.	A survey ofEnglish Literature	Gilbert Phelps Pan Books, London, 1965
117.	A Short History of German Literature	Gilbert Wa-terhouse Folcroft, 1973
118.	A Modern Book of Aesthatic	Melvin Rader Holt Rinehart and Winston, New York, 1973
119.	Among the Great	Dilip Kumar Roy
120.	Art	Clive Bell London, 1947.
121.	Art and Social Life	G.V. Plekhanov Bombay, 1953
122.	An Introduction to the poetry of Romantic Revival	K.K. Sharma
123.	Biographia Literaria	Samuel T. Coleridge Oxford University, 1907
124.	Bhoja's Srngara Prakash	V. Raghavan, Vol. I, Part-II, Punarvasu,7,S.K. Street, Madras,1963
125.	Coleridges Criticism of wordsworth	Thomas M. Raysor P.M.L.A. 1939
126.	Coleridge's Theory of Imagination	James Volant Baker Greenwood, 1957
127.	Coleridge On Imagination	I.A. Richards Midland Books, 1960
128.	Christ and Neitzsche	G. Wilson knight Folcroft

129.	Critical Approaches to Literature	David Daiches Longmans, Green & Co. Ltd., 1961 London.
130.	English Literary Criticism	C.E. Vaughan Kennikat, 1906
131.	English Literature	S.A. Brooke R. West, New York
132.	Eastern Lights	Mahendra Nath Sircar, 1935
133.	Endymion	John Keats
134.	Guide Through the Romantic Movement	E. Bernbaum, New York, 1949
135.	Golden Treasury of English Verse	F.T. Palgrave Hartdale House, New York, 1935
136.	Invocation	Shelly
137.	Literature and Psychology	F.L. Lucas University of Michigan, 1951
138.	Loci Critici	George Saintsbury
139.	Marriage and Morals	Bertrand Russell George Allenunivin Ltd., London,1958
140.	Ode on Intimations of Immortality	Wordsworth English verse W.Peacock, Vol.III, Oxford University, London.
141.	Ode on a Greecian Urn	John Keats English Verse, W. Peacock, Vo,IV, Oxford University, London. 1966
142.	Oxford Lectures on poetry	A.C. Bradley Macmillan & Co. Ltd., London, 1965

143. Preface to the Lyridal-Wordsworth Ballads

144. Preface to 1853 poems- Mathew Arnold
The Portable Mathew Arnold
Lionel Trilling
The Viking Press, New York, 1949

145. Psychology of Sex — Havelock Ellis
Pan Books Ltd., London, 1963

146. Principles of Literary Criticism — Lasselle Abercrombie
Vora & Co., Pvt.Ltd., Bombay, 1967

147. Romanticism — Lilion R. Furst
Methuen & Co., Great Britain, 1969

148. Sanskrit English Dictionary — Apte
Chaukhambha, 1965

149. Sanskrit English Dictionary — Sir Monier Villiams
Second Edition, Oxford, 1899

150. Symposium — Plato
Translated by W. Hamilton
Penguin Classics, 1951

151. Sadhana — Tagore
Omen Press, 1972

152. Shelly-His Thought and Work — Descond King - Hele
Macmillan & Co., Toronto, 1964

153. Sex in Religion — Sampson Marr
George Allen and Unwin, London, 1936

154. Studies in A Dying Culture — Christopher Caudwell, 1949

155. Studies in Poetry — S.A. Brooke
Folcroft, 1973

156. The Decline and Fall of the Romantic Ideal — F.L. Lucas
Cambridge Universty Press, 1963

157.	The poetical works of John Keats	John Keats Oxford University Press, 1940
158.	The Philosophy of Fine Arts	Hegel, Vol.II, Translated by Osmatson, London, 1920
159..	The Philosophy of the Beautiful	W. Knight
160.	The Dance of Shiva	A. Coomaraswamy Farrar and Strang and Giroux, Inc. New York, 1957
161.	The Romantic theory of poetry	A.E. Powell London, 1926
162.	The Great Critics	Smith and Parks Norton, U.S.A. 1951
163.	The Minnor and the Lamp	M.H. Abrams, Oxford, 1953
164.	The Making of Literature-R.A. Scott - James	Secker and Warburg, London, 1940
165.	The Romantic Imagination-C.M. Boura	Oxford University Press, London,1963
166.	The True Voice of Feeling	Herbert Read Faber, 1953
167.	The Heart ofRama	Swamy Ram Tirtha Ram Tirtha Publication League, Lucknow
168.	The Sexual side of Marriage	M.S. Exner Allan and Unwin, U.K., 1949
169.	The Bases of Yoga	Aurobindo Ghose, 1949

170. The Mansionsof Philosophy- Will Durant
Simon and Schuster, New York, 1929.

171. The Literary Critics — George Watson
Penguin Books, 1964

172. Tintern Abbey — Willaim Wordsworth

173. Treatment of Love in Sanskrit Literature — S.K. Dey
1929.

174. Wordsworth — Margaret Drabble
New York, 1969

175. Websters New International Dictionary of English language — William Enton

176. What is Art — Couht Leo Tolstoy
Translated by Aylmer Maude
Oxford University Press, 1950

..*.*.*.*